

प्रारम्भिक अवधि का अध्ययन

[पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीटन सोध प्रबन्ध]

प्रारम्भिक अवधी का अध्ययन

डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी



रचना प्रकाशन

४५-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद-१

प्रथम संस्करण १९७२



प्रकाशक

जीठ मल्होत्रा

रचना प्रकाशन

४५ ए खुल्दाबाद

इलाहाबाद-१



मुद्रक

इलाहाबाद प्रेस

३७०, रानी मण्डी

इलाहाबाद ३

मूल्य बीस रुपये

समर्पण

आकाशधर्मा गुरु और लोकवादी धाचाय

५० हजारीप्रसाद द्विवेदी को

प्रणतिपूर्वक

आभार

प्रस्तुत काय में अनेक विद्वाना और शुभ चिन्तकों ने विविध प्रकार से मेरी सहायता की है। डॉ० बाबूराम खन्ना ने न केवल मुझे आशीर्वाद देकर उत्साहित किया है बल्कि प्रारम्भिक अवधि के अधिकांश व्याकरणिक रूपों को देखकर कई बहुमूल्य सुझाव भी दिये हैं। डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने स्वसम्पादित 'मिरगावत' (अप्रकाशित) के कुछ अंशों का उपयोग करने की अनुमति देकर उपकृत किया है। डॉ० वासुदेवशरण अप्पवाल ने मैनासत सम्बन्धी सामग्री का पता दिया है और श्री रायकृष्णदास ने भारतकला भवन में सुरक्षित कई हस्तलेखों को देखने की सुविधा प्रदान की है। डॉ० नामवर सिंह और डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने उपयोगी परामर्श लिए हैं। डॉ० भोलानाथ तिवारी और उद्गु के प्राध्यापक डॉ० रत्नक अञ्जुम ने मैनासत सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध कराने में बड़ी सहायता की है। इसके अतिरिक्त श्री नर्मदेन्दर चतुर्वेदी और डॉ० नित्यानन्द तिवारी ने हरिश्चरित और चंशयन सम्बन्धी उपयोगी सामग्री जुटाने में सक्रिय सहयोग दिया है। इनाहाबाद के श्री गोविन्दजी ने अपने संग्रहालय में सुरक्षित 'रामायण' की प्रतिलिपि देकर सहायता की है। मैं इन सभी विद्वानों और बापुजी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

गुरुवर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस प्रबंध को प्रस्तुत करने में जितनी और जितने प्रकार की सहायता की है, उन सबका उल्लेख यहाँ सम्भव नहीं है। उनके स्नेह आशीर्वाद और प्रेरणादायक निर्देशन के बिना यह काय कितना दुष्कर होता इसकी कल्पना भी मेरे लिये कठिन है।

इस शोध काय को प्रकाशित करने में बापुवर रवीन्द्र बानिया ने जो सहा-

सकैत-पत्र

अय पु०—अय पुष्प

ई०—ईस्वी

उ० व्य०
उ० व्य० प्र० } —उक्ति व्यक्ति प्रकरण

ए० अ०—एवोत्पूशन आरु अनधी

ए० व०—एक वचन

ओ० डी० वी० एल—ओरिजिन एण्ड डवलपमेंट आरु बगाली लैंग्वेज

छोत्र वि०—साज विवरण

प्र० स० } प्र० स०
प्र० स० } प्र० स०

च०—चणयन (डॉ० विश्वनाथ प्रमाद द्वारा सपादित)

च० (प)—चदायन डॉ० परमेश्वरी साल गुप्त द्वारा सपादित

छ० प्र०—छन्द प्रमाक

दे०—देसिए

ना० प्र० पत्रिका—नागरो प्रचारिणी पत्रिका

प्रा० अ०—प्रारम्भिक अवधी

प्रा० पें०—प्राकृत पेंगलम्

पु०—पुठ

भो० भा० सा०—भोजपुरी भाषा और साहित्य

म० अ० आ०—मध्यकालीन भारतीय आय भाषाएँ

मा० वृ०—मात्रा वृत्त

मिर०—मिरगावक (डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सपादित)

मिर० (शि)—मुत्तवन वृत्त भूषावन (डॉ० शिवगोपाल मिश्र द्वारा सपादित)

मै० स०—मनासत

रा० ष० मा०—रामपरिणामस

रा० ज०—राम जन्म

रा० ये०—राज्य वेत्त

लि० या०—लिपि बाल

लो० व०—लार कहा

व० वृ०—वण वृत्त

वि०—विप्रमी

स०—सदर्भानुसार सम्बन्ध या सपादक

स० रा० - सदेश रासक

स० व०—सत्यवती क्या

सद्भ्रम प्र०—सम्भ्रम प्रमांश

स्वर्गा०—स्वर्गारोहिणी क्या

ह० च०—हरिचरित

हि०—हिजरी

(?) सदिग्धपाठ का द्योतक

() कोष्ठक में किसी शब्द के आगे दिया हुआ अनुमानित पाठ

<—स विकसित

>—पूर्व रूप

*—ह्रस्वत्व बोधक चिह्न

—छोड़ा या अपाठ्य अक्षर

उद्धृत पंक्ति या शब्द के आगे अक्षर रचना की छद्म सख्या को सूचित करता है जैसे ४। रा० ज० का अर्थ है राम जन्म के अन्तगत ४ वे छद्म में प्रयुक्त । ३।१ ह० च० का अर्थ है हरिचरित के पहले अध्याय के तीसरे छद्म में प्रयुक्त ।

विषय सूची

पृष्ठ

vii--xiv

भूमिका

अवधी पर किया गया काय—अवधी का विकास (एवोल्प्शन ऑफ अवधी) का महत्त्व, अवधी या उससे सम्बन्धित नवीन रचनाओं की उपलब्धि, पचावत पूव अवधी के अध्ययन की आवश्यकता, इस काय की कठिनाइयाँ, प्रारम्भिक अवधी की सीमा का निर्धारण, प्रस्तुत अध्ययन का महत्त्व, उपलब्धि

अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा

१—२८

अवधी का भाषा रूप में प्रथम उल्लेख (१)। वासली कहे जाने वाले ग्रन्थ—राउरवेल, उक्ति व्यक्ति प्रकरण, प्राकृत पैंगलम् के कठिपय धन्द (२,३) प्राकृत पैंगलम् के छन्दों में अवधी के तत्त्व—सज्ञा (४) लुप्तविभक्तिक (५) परसग (६) सवनाम (७) क्रिया (८) अव्यय (९) राउरवेच में अवधी के तत्त्व—सज्ञा (१०) परसग (११) कारक (१२) सवनाम (१३) क्रिया (१४) अव्यय (१५) उक्ति व्यक्ति प्रकरण और उसमें अवधी के रूप (१६) सज्ञा (१७) कारक (१८) परसग (१९) सवनाम (२०) अव्यय (२१) क्रिया (२२) प्राकृत पैंगलम्, राउरवेल, उक्ति व्यक्ति प्रकरण में मिलने वाले अवधी तत्त्वों का स्वरूप, उनका अवधी से सम्बन्ध (२३ २४)।

प्रारम्भिक अवधी के अध्ययन की सामग्री

३१—७६

अवधी की स्रोत (२६) इसका सम्पादन (२७) लोरकहा (२८) अन्वयन सगादक डॉ० विस्वनाथ प्रसाद (२९) अन्वयन

सपादक डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त (३०) काव्य का नाम (३१) कवि और रचनाकाल (३२) काव्य की भाषा (३३) मैनासत की खोज—प्रकाशन (३४) रचना काल (३५) राम ज म की खोज (३६) रामजम के रचना काल का अनुमान (३७) सत्यवती कथा की खोज (३८) रचना का स्थान (३९) ईश्वरदास की अथ रचनाए (४०) भरत मिलाप (४१) एका दशो कथा (४२) स्वर्गारोहिणी कथा (४३) ईश्वरदास द्वारा अपने पूर्व कवियों का उल्लेख और स्वर्गारोहिणी कथा की प्रामाणिकता (४४) मिरगावत की खोज (४५) रचनाकाल (४६) कवि और उसके गुह (४७) शाहेबखन (४८) काव्य का सपादन उसका प्रस्तुत अध्ययन में उपयोग (४९) हरिचरित की खोज (५१) कवि का नाम (५१) रचनार्ये (५२) ब्रह्मविलास (५३) विष्णु पुराण (५४) रचनाकाल—अयो का मत (५५) इस विषय में प्रस्तुत लेखक का विचार (५६) खोज रिपोर्टों में प्रारम्भिक अवधो की रचनाओं की सूचना (५७) लखन सेनी का हरि चरित्र—विराट पव (५८) उद्धृत अंश का अथ (५९) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के सग्रहालय में सुरक्षित विराट पव (६०) भीम कवि का डगवैपुराण (६१) पुरुषोत्तम दास का जमिनी पुराण (६२) काव्य का रचनाकाल (६३) उद्धृत अंश का अथ (६४) ।

ध्वनि विचार

७७—१८७

व्यजन (६५) व्यजनो का विभाजन (६६) स्वरमध्यस्थ ङ, ङ (६७) य, व् (६८) ऊम ध्वनियौ (६९) अनुनासिक (७०) प्रारम्भिक अवधो के व्यजनो की तालिका (७१) रङ्ग का अभाव, (७२) व्यजनो की ध्वनो में स्थिति—उनक प्रयाग (७३) ।

स्वर (७४) मूल स्वरो के उच्चारण (७५) अनुनासिक स्वरो के उच्चारण (७६) स्वर संयोग (७७) ध्वनि परिवर्तन (७८) ।

रूप विचार

रचनारम्य प्रत्यय (७९) उपसर्ग (८०) प्रातिपदिक-स्वरान्त प्रतिपदिको क उच्चारण (८१) सजा ध्वनो क सपु, दीध, दीधतर

रूपो पर विचार (८२) लिंग विचार (८३) वचन (८४)
 वारक (८५) अविकारी रूप (८६) विकारी रूप (८७) विद्वृत
 रूपा का भूतकालिक वृद्धती क्रियाओं के साथ कर्ताह्वय में प्रयोग
 (८८) गणनात्मक सख्यावाचक (९२) क्रियात्मक सख्यावाचक
 (९३) अपूर्ण सख्यावाचक (९४) आवृत्तिमूलक (९५) ।

सवनाम

पुरुषवाचक, उत्तम पुरुष के रूपो का परिचय (९६) उत्तम
 पुंस्व (९७) मध्यम पुंस्व (९८) अय पुरुष और दूरवर्ती सकेत
 वाचक सवनाम (९९) सम्बन्ध वाचक (१००) निकटवर्ती
 सकेतवाचक (१०१) प्रश्न वाचक (१०२) निजवाचक (१०३)
 अनिश्चयवाचक (१०४) सयुक्त (१०५) । सवनाममूलक
 विशेषण, रीतिवाचक, परिमाण वाचक, सख्यावाचक (१०६)

परसग

सम्बन्ध, कम सम्प्रदान, करण, अपादान, अधिकरण (१०७)
 परसग की भाति प्रयुक्त होने वाले शब्द (१०८)

क्रिया

धातु (१०९), सहायक या अस्तिवाची क्रियायें (११०) वर्तमान
 काल (१११) । भूतकाल (११२) भविष्य (११३) अनुनाथ
 (११४) भूतसम्भावनाथ (११५) पूर्वकालिक (११६)
 प्रारम्भिक अवधि की काल रचना पर विचार (११७) अपूर्ण
 कृत (११८) पूर्ण कृत (११९) वर्तमान निश्चयाथ—उत्तम
 पुंस्व, मध्यम पुंस्व अय पुरुष (१२१) भविष्य निश्चयाथ—
 उत्तमपुरुष, मध्यम पुरुष, अय पुरुष (१२२) अनुनाथ—उत्तम
 पुरुष, मध्यम पुरुष, अय पुरुष (१२३) भविष्य अनुनाथ—
 मध्यम पुरुष (१२४) भूत-सम्भावनाथ—उत्तम पुरुष मध्यम
 पुंस्व, अय पुंस्व (१२५) अपूर्ण कृन्ती वर्तमान निश्चयाथ—
 उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष, अय पुरुष (१२६) अपूर्ण कृन्ती
 भूत निश्चयाथ—उत्तम पुरुष, अय पुरुष (१२७) पूर्ण कृद्धती
 वर्तमान निश्चयाथ—अय पुरुष, मध्यम पुरुष, अय पुरुष
 (१२८) पूर्ण कृन्ती भूत निश्चयाथ—अय पुरुष, मध्यम पुरुष,

उत्तम पुरुष (१२६) पूर्वकालिक (१३०) क्रियायक सज्ञा (१३१) कर्तृवाचक सज्ञा (१३२) प्ररणायक (१३३) धर्मवाच्य सत्सिष्ट, विरसिष्ट (१३४) समुक्त क्रिया (१३५) ।

अव्यय

क्रिया विशेषण—काल वाचक, स्थान वाचक, रीति वाचक, परिमाण वाचक, निषेध वाचक (१३६) समुच्चय बोधक—संयोगक, विवल्पात्मक प्रतिवाचक, आश्रित वाच्य संयोजक, सम्भावनायक (१३७) निश्चय बोधक—समतायक—सख्या वाचक, सवनाम, क्रिया, क्रिया विशेषण (क) केषलायक—सज्ञा, विशेषण, सख्यावाचक, सवनाम, क्रिया, क्रिया विशेषण (ख) (१३८) ।

उपसंहार

१८६—२०१

प्रारम्भिक अवधी और अवधी की निष्कटतम पूर्वज्ञा भाषा से अन्तर (१४०) प्रारम्भिक अवधी की परवर्ती अवधी काव्य भाषा से विशेषताएँ और अंतर ध्वनि (१४१) सज्ञा (१४२) कारक (१४३) परसग (१४४) सवनाम (१४५) क्रिया—वर्तमान (१४६) भूत (१४७) अनुनाय (१४८) अप्य उल्लेखनीय विशेषताओं का जभाव (१४९) इस अध्ययन के निष्कर्ष (१५०) ।

परिशिष्ट

२०३—२२५

(क) अप्रकाशित रचनायें—

- (१) साधन का मैनासत
- (२) सूरजदास का रामजन्म
- (३) मिरगावत (डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा संपादित अंश)

(ख) खोज रिपोर्टों में प्राप्त रचनाओं के अंश—

- (१) सखन सेनी का हरिचरित्र विराटपर्व
- (२) भोमकवि का डगडैपुराण
- (३) पुरुषोत्तमदास का जेमिनी पुराण

सहायक ग्रन्थों और पत्रिकाओं की सूची

२३१—२३४

भूमिका

नवीन भारतीय आय भाषाएँ मूलतः परस्पर सम्बद्ध हैं। इसीलिए बोम्ब, मण्डारकर कताग, हानलो ज्यून ब्लाख, गियसन, चटर्जी इत्यादि विद्वानों के कार्यों से अथ नवीन भारतीय आय भाषाओं के साथ-साथ अवधी के अध्ययन का भा भाग प्रशस्त हुआ है। फिर भी अवधी के अध्ययन को दृष्टि से केनाग के हिन्दी भाषा का व्याकरण तथा हानलो के 'पूर्वी हिंदी का व्याकरण का विशेष महत्त्व है। कलाग ने रामचरित मानस की भाषा पर विचार किया था और पूर्वी हिन्दी के नाम से हानलो न भोजपुरी तथा अवधी के व्याकरण का विवेचन किया था। गियसन की यशस्विनी कृति 'भारत का भाषा सर्वेक्षण' के छठे खण्ड में पूर्वी हिन्दी के नाम से अवधी के विभिन्न रूपों का सग्रह है। इस खण्ड की भूमिका में गियसन ने पूर्वी हिन्दी का सम्पन्न परिचय दिया है। इसके पूर्व छत्तीस गढ़ी बोली पर हीरालाल का 'प्रोपाध्याय काम कर चुके थे। इसका अंग्रेजी अनुवाद गियसन ने ही १९२१ ई० में प्रकाशित करवाया।

किन्तु अवधी पर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य डा० बाबूराम सक्सेना ने किया। उनका ग्रन्थ 'अवधी का विकास' सन् १९३८ ई० में इंडियन प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ में अवधी की वैज्ञानिक दृष्टि से विस्तृत विवेचना की गई। डॉ० धारेन्द्र वर्मा के अनुसार इस ग्रन्थ में पहले पहल ए० आधुनिक भारतीय आयभाषा की ध्वनियों का प्रयोगात्मक ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से विश्लेषण तथा वर्णन किया गया तथा हिन्दी की एक मुख्य बोली का प्रथम वैज्ञानिक तथा विस्तृत वर्णन मिलता है। डॉ० सक्सेना ने आधुनिक अवधी के साथ-साथ 'प्रारम्भिक अवधी' का भी अध्ययन मुख्यतः पद्मावत, रामचरित मानस और नूर मुहम्मद की इन्द्रावती व आधार पर किया। प्रारम्भिक और आधुनिक अवधी का विस्तृत विवेचन करने के साथ ही साथ उन्होंने 'अवधी ध्वनियाँ और व्याकरणिक रूपों की व्युत्पत्ति पर भी विचार किया। अवधी पर डॉ० सक्सेना जैसा कार्य फिर देखने में नहीं आया।

अवधी का विकास (एवोल्यूशन आफ अवधी) के प्रकाशन के पश्चात् अवधी से सम्बन्धित नवीन सामग्री पर्याप्त मात्रा में सामने आई है। १९५३ ई० में मुनि जिन विजय के सम्पादन में १२ वीं शताब्दी के पंडित 'दामोदर शर्मा द्वारा रचित उत्ति-पत्तिप्रकरण प्रकाशित हुआ। इस महत्वपूर्ण पुस्तक की भाषा वैज्ञानिक विवेचना करते हुए डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने लिखा कि उत्ति-पत्तिप्रकरण कोसली या पूर्वी हिन्दी के इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है (दे० ६२ स्टडी, उ० व्य० प्र०)। इसमें १२ वीं शताब्दी में जन प्रचलित पूर्वी हिन्दी का रूप उपलब्ध होता है। विवेचना करने पर ज्ञात होता है कि इसके अधिकांश व्याकरणिक रूपों का विकास अवधी में हुआ है।

'भारतीय विद्या के जून जुलाई १९५६ के अंक में डा० हरिवल्लभ चुनीलाल भायाणी ने 'राउर बेल' नामक एक नवोपलब्ध काव्य का प्रकाशन कराया। यह काव्य प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम बम्बई में सुरक्षित एक शिला पर अंकित था। डा० भायाणी के अनुमानानुसार इस काव्य का रचनाकाल ११ वां शताब्दी है और इसमें कई नवोदित भारतीय आय भाषाओं का प्रयोग किया गया है। डा० भायाणी ने काव्य के प्रथम नखशिख की भाषा को अवधी का स्वरूप बताया है।

इसी काव्य का सम्पादन करके डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसे पुस्तक रूप में १९६२ ई० में प्रकाशित कराया। डा० गुप्त रचनाकाल के विषय में डॉ० भायाणी के समान मत रखते हैं। भाषा के विषय में उनका निष्कर्ष है कि प्रथम और अंतिम नखशिख की भाषा दक्षिण कोसली है।

प्राकृत और अपभ्रंश छंदों के प्रतिष्ठित सम्मेलन प्रथम प्राकृत पैंगलम् का सम्पादन सस्करण यद्यपि बहुत पहले निकल चुका था लेकिन इस बीच अनुमतिपुत्रों का ध्यान उद्भूत छंदों की भाषा के महत्त्व पर गया। पुरानी राजस्थानी पर विचार करते हुए तेस्रोतीरी ने इस प्रथम की उपादेयता पर प्रकाश डाला था। 'काव्यना', १९५४ के अगस्त अंक में डॉ० गिरधर सिंह ने उसमें ऐसे छंदों की भाषा पर विचार किया जिनमें ब्रजा के पूर्ववर्ण मिलते हैं। प्रस्तुत अध्ययन के सिलसिले में प्राकृतपैंगलम् में उद्भूत ऐम छंदों की भाषा पर विचार किया गया है जिनमें अवधी में प्राप्त रूप या उनके पूर्ववर्ण मिलते हैं (दे० ४६)।

डॉ० वामुदेववर्णन अपभ्रंश नवमावत का सजीवनी टीका प्रस्तुत की और उसमें अवधी के कई अज्ञातप्राय कवियों और उनकी रचनाओं का उल्लेख किया। इसके बाद अवधी की कई अनुरन्धर रचनायें प्रकाशित हुईं।

(१) श्री अगरचंद नाहटा ने कु० मु० हिन्दा तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ

आगरा में प्रकाशित हिन्दी विद्यापीठ ग्रंथ वीथिका (१९५६ ई०) में सायन के मैनासत के दो पाठ प्रकाशित कराए ।

मैनासत के मनेर शरीफ खानकाह का पाठ प्रो० अस्करी ने उदू की 'मअमर' नामक पत्रिका में १९६० ई० में प्रकाशित कराया ।

(२) ईश्वरदास की सत्यवती कथा यद्यपि हिन्दुस्तानी (१९३७ ई०) में प्रकाशित हो चुकी थी किंतु वह अनुपलब्ध थी । डा० शिवगोपाल मिश्र और रावत ओम प्रकाश सिंह ने १९५८ ई० से ईश्वरदास की अन्य कृतियों के साथ उसका प्रकाशन कराया ।

(३) मुल्लादाऊद की प्रसिद्ध रचना के कुछ अंशों का प्रकाशन डा० विश्वनाथ प्रसाद ने 'चदयन' के नाम से तथा डा० माताप्रसाद गुप्त ने 'लोरकहा' के नाम से १९६२ ई० में कराया । काव्य के दोनों संपादित अंश साथ साथ क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा से प्रकाशित हुए हैं ।

इस रचना के लगभग सम्पूर्ण अंश का प्रकाशन डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने 'चदयन' नाम से १९६४ ई० में कराया ।

सालचदास के हरिचरित नामक काव्य का क्रमशः प्रकाशन बिहार राष्ट्रभाषा की परिपद् पत्रिका में पहले से हो रहा था किंतु उसका पुस्तकाकार प्रकाशन १९६३ ई० में हुआ । सम्पादन आचार्य ननिनविलाचन शर्मा तथा श्री रामनारायण शास्त्री ने किया ।

उसी वर्ष कुतबन की प्रसिद्ध रचना 'मिरगावत' का डा० शिव गोपाल मिश्र द्वारा संपादित रूप प्रकाशित हुआ । इस काव्य का सम्पादन डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने भी किया है जो सम्भवतः शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है ।

इन रचनाओं पर आगे (दे० २५ ६४) किञ्चित् विस्तारपूर्वक विचार किया गया है ।

ऊपर जिन रचनाओं का उल्लेख किया गया है वे सभी जायसी के पदमावत (रचनाकाल १५४० ई०) के पूर्व की हैं । जायसी के 'पदमावत' की भाषा का अध्ययन डा० सक्सेना अपने ग्रंथ 'अवधी का विकास' में प्रारम्भिक अवधियों (अर्ली अवधियों) के अन्तर्गत कर चुके थे । डा० सक्सेना ने जिस समय अपना कार्य किया था उस समय जायसी पूर्व अवधी की इनकी रचनाएँ प्रकाश में नहीं आई थीं । इसीलिये वे इनका उपयोग अपने अध्ययन में नहीं कर पाए । इन रचनाओं के प्रकाशित हो जाने पर हम बात की आवश्यकता अनुभव की गई कि पदमावत पूर्व

सूरि की कुवलयमाला के रचनाकाल अर्थात् ८ वीं शती तक देशी भाषाओं का उदय होने लगा था क्योंकि उसमें १८ देशी भाषाओं का उल्लेख और उनके उच्च हरण प्रस्तुत है, (कु० भा० पृ० १५२ ५३) तथा १२ वीं शती ई० की जन बोलो के रूप प्रस्तुत करने वाली पुस्तक उ० व्य० प्र० में 'दिग्जइ', 'किग्जइ' जैसे रूप नहीं हैं बल्कि उनका विकास दीज, कीज में हो गया है (दे० २०।२० उ० व्य०) कहने का तात्पर्य यह कि प्राकृत पेंगलम् के विवेचित छन्दों और राउरवेल की भाषा को ११वीं शती ई० के आसपास की प्रचलित भाषा का रूप मान लिया जाए तो अनुचित न होगा।

प्रस्तुत अध्ययन के अंतगत अवधी की निवृत्ततम पूवजा भाषा नामक अध्याय में हमने प्राकृत पेंगलम् के छंदा, राउरवेल और उक्तिभक्तिप्रकरण में से ऐसे रूपों को ढूँढने का प्रयास किया है जो अवधी में मिलते हैं या जिनका विकास उम भाषा में हुआ है। प्राकृत पेंगलम् राउरवेन और उक्तिभक्तिप्रकरण में अवधी के जो रूप और पूव रूप प्राप्त होते हैं, वे अपने आप में किसी भाषा का पूर्ण चिह्न नहीं प्रस्तुत करते अतः हमने उमें कोई विशिष्ट नाम न देकर 'अवधी की 'निवृत्ततम पूवजा भाषा' कहा है।

फिर अगले अध्याय अर्थात् प्रारम्भिक अवधी के अध्ययन की सामग्री में हमने उन प्रकाशित और अप्रकाशित रचनाओं पर विचार किया है जिनके आधार पर प्रारम्भिक अवधी का भाषा सम्बन्धी विवेचन किया गया है। इसमें विचारित रचनाओं के रचयिता, रचनाशाल, भाषा इत्यादि की यथासम्भव परीक्षा और विश्लेषण की गई है। विशिष्ट रचनाओं में दाऊद की रचना 'ध्यायन या सोर' कहा, ईश्वरनाम सत्यवती कथा तथा स्वर्गाराष्ट्रिणा कुतश्चन का मिरगावत तथा लालचराम का हरिचरित प्रकाशित हैं। माधन का मनासन भी प्रकाशित है। किन्तु हमने जिस प्रति (मनेरगरीठ व सानराह) का उपयोग किया है, वह हिली में अज्ञात है। 'मिरगावत की भाषा का अध्ययन करने में हमने डॉ० गिर मोराल मिश्र की सम्पादित और प्रकाशित पुस्तक तथा डॉ० माना प्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित तथा अभी तक अप्रकाशित मिरगावत व कुच अगा का उपयोग किया है।

इन अतिरिक्त प्रारम्भिक अवधी की अन्य तीन रचनाओं पर विचार किया गया है जिनका सूचना विभिन्न साधन विधियों में मिला है। वे रचनाएँ हैं—१—सखनगनि का हरिचरित विराट ८५, २—भीम कवि का डंगरी पुराण, ३—पुराण नाम का अमिनि पुराण।

फिर 'ध्वनि विचार' के अतगत प्रारम्भिक अवधो के व्यञ्जना और स्वरों को निर्धारित करने का प्रयत्न किया गया है। प्रारम्भिक अवधो की ध्वनियों को ठोक-ठीक निरूपित करने के लिये आज हमारे पास कोई प्रामाणिक साधन नहीं है। इसलिये इन पर प्राचीन वैपाकरणा तथा अन्य विद्वानों के मतों के प्रकाश में विचार किया गया है। स्वर आनुनासिक स्वर, व्यञ्जन आनुनासिक व्यञ्जन स्वर सयोग की सूची दे दी गई है तथा प्रारम्भिक अवधो में प्राप्त ध्वनि परिवर्तन के उदाहरण दे दिए गए हैं।

रूप विचार के अतगत रचनात्मक प्रत्यय, उपसर्ग प्रातिपदिक, लिंग, वचन, कारक, विशेषण, सख्या वाचक विशेषण के विविध रूपों, परसर्ग, क्रिया के विविध रूपों, समुक्त क्रियाओं तथा अयय पर विचार किया गया है और उनके उदाहरण दे दिये गए हैं।

प्रारम्भिक अवधो की क्रियाओं का अययन प्रस्तुत प्रबंध का सबसे महत्वपूर्ण अंश समझा जाना चाहिये क्योंकि प्रारम्भिक अवधो में ऐसे कई क्रिया रूपों का पता चला है जो परवर्ती अवधो में या तो बहुत कम प्रयुक्त हैं या अप्रयुक्त हैं। ईत, ईतिस एतिस और एनिन्द प्रत्ययात् भूतकालिक कृदन्ती रूप पदमावत में नहीं मिलते। अभी तक अवधो पर विचार करने वाले किसी पंडित ने इन रूपा पर विचार नहीं किया है। उपसर्ग में इन रूपों के विकास पर विचार करत हुए हमने देखा है कि प्रारम्भिक अवधो के ईत, ईतिस रूप पंजाबी के—'इता जैसे रूप के समानान्तर विकसित हुए होंगे। अवधो में वे अप्रचलित हैं किन्तु पंजाबी में ऐसे रूप आज भी दिखाई पड़ते हैं। प्रारम्भिक अवधो में प्राप्त 'होत' भी ऐसी भूतकालिक सहायक क्रिया है जो परवर्ती अवधो काव्य में नहीं दिखलाई पड़ती है। अवधो भाषा के अतगत इस पर भी अब तक अयत्र विचार नहीं हुआ है।

प्रारम्भिक अवधो में कुछ ऐसे क्रिया रूप मिलते हैं जिनका प्रयोग अब अवधो क्षेत्र में न होकर अन्य भाषा क्षेत्रों में होता है। जैसे सहायक क्रिया 'होरवद्' और मध्यम पुरुष अनुज्ञाप 'करह जस रूप। राम, जम, सत्यवती कथा में इन रूपों का मिलना इस बात की सम्भवाना प्रकट करता है कि पहले इन रूपों का प्रयोग अवधो क्षेत्रों में भी होता था।

अत में उपसर्ग व अतगत प्रारम्भिक अवधो की कुछ विशेषताओं को ध्यान में रखकर परवर्ती अवधो काव्यों की भाषा से उद्यक अन्तर स्पष्ट कर दिया गया है। परवर्ती अवधो काव्य भाषा के उदाहरण डॉ० बाबुराम सक्सेना

द्वारा 'लिखित अवधी का विकास' से लिये गये है। उपसंहार में ऐसे रूपों
विकास क्रम को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है जिनकी विवेचना अब
अवधी पर काम करने वाले विद्वानों ने नहीं की थी। इस विषय में मुख्य
डा० चटर्जी, डॉ० सनसेना, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ० उदयनारायण तिव
के काय बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं।

अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा

१ उपलब्ध पान के अनुसार अवधी भाषा का सबसे प्रथम उल्लेख अमोर खुसरो ने मुह सिपेहर (रचना काल ७१८ हिजरी) में किया है। भारत की कई भाषाओं का नाम गिनाते हुए खुसरो ने अवधी का भी उल्लेख किया है।^१

“हिंदुस्तान के भिन्न भागों में भिन्न भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं—सिंधी, लाहौरी, कश्मीरी, भावरी, घोर समुद्री, तिलगी, गूजरी, भाबरी, गौरी, बंगाली तथा अवधी ।”

इस भाषा को यह नाम अवध प्रदेश की भाषा होने के आधार पर मिला होगा।^२ प्राचीन काल में आज का अवध कोसल प्रदेश के अंतर्गत आता था।^३ ८वीं शताब्दी में रचित कुवलय माला में अठारह देशी भाषाओं के अन्तर्गत ‘कोसली’ भी गिनाई गई है।^४ जिस प्रकार अवधी सना अवध प्रदेश की भाषा को दी गई है उसी प्रकार कोसली कोसल प्रदेश की भाषा को कहा जाता रहा होगा। ‘कुवलयमाला’ माला में कोसली का जो उदाहरण दिया गया है^५ वह

१ खिजली कालीन भारत (१२६०-१३२० ई०) पृ० १८० (मुह सिपेहर) अमोर खुसरो से अनु० सैयद अनवर अब्बास रिजवी।

२ The term Awadhi appears to denote the language of Awadh P 9 Evolution of Awadhi Babu Ram Saxena Allahabad The Indian Press Ltd 1937

३ बुद्धकालीन भारतीय भूगोल (पृ० २३६) डा० भरतसिंह उपाध्याय हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, स० २०१८।

४ कुवलय माला कहा (पृ० १५२-५३) स० ए० एम० उपाध्ये सिंधी जन प्रथममाला भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९५६।

५ कुवलय माला कहा (पृ० १५३) ‘जल तल से भगमाएँ कासलए पुलइए भवरे।

अत्यन्त सशिक्ष है, और उगता कोई निश्चित अथ स्पष्ट नहा होता है। एवा और १०वा शताब्दी में रचित कोई ऐसी रचना नहा उपलब्ध हाती जिससे कोसली व त्रिषय में हमारी जानकारी बढ़े।

२ अलपता ग्यारहवा शताब्दी और १२वीं शताब्दी में लिखी गई ऐसी रचनाएँ मिल गई हैं जिनकी भाषा का कोसली कहा गया है। हाल ही में प्रिंस आर्चबिशप वेल्स म्यूजियम, बम्बई में एक शिलालेख के रूप में उद्धृत काव्य 'राउल बेल का प्रकाशन डॉ० हरिवल्लभ भूनीलाल भायाणी और डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने कराया है। डॉ० भायाणी का काव्य 'भारतीय विद्या' (भाग-१७, अंक ३४) जून जुलाई, १९५६ व अगस्त में प्रकाशित हुआ है और डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा संपादित संस्करण पुस्तक रूप में मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद से १९६३ ई में प्रकाशित हुआ है। दोनों संपादकों का अनुमान है कि इस काव्य का रचना काल ११वीं शती है।^१ डॉ० माताप्रसाद गुप्त रचना के आदि अंत को दक्षिण कोसली में बताते हैं और डॉ० भायाणी आरम्भिक अंश को अवधी का पूर्व रूप मानते हैं।^२

'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' का, जिसकी भाषा को डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने कोसली या पूर्वी हिंदी का प्रारम्भिक रूप कहा है^३ प्रकाशन श्री जिन विजय मुनि के संपादन में भारतीय विद्या भवन, बम्बई से सन् २०१० में हुआ था। डॉ० चटर्जी के अनुसार इसकी भाषा का रूप १२वां शताब्दी के पूर्वार्ध का है।^४

३ उत्तरी भारत में प्रचलित नवीन भारतीय आय भाषाओं के पूर्व रूपों का अनुसंधान हम प्राकृत और अपभ्रंश के छंदोशास्त्रक प्रसिद्ध ग्रंथ 'प्राकृत पैंगलम्' में भी कर सकते हैं। 'प्राकृत पैंगलम्' का संकलन काल १४वीं शताब्दी के लगभग माना जाता है क्योंकि 'इस ग्रंथ में विभिन्न छन्दों के उदाहरण के लिये कुछ ऐसे पद्य उद्धृत हैं जो चौदहवीं शताब्दी से पुराने नहीं हो सकते, फिर

१ डॉ० भायाणी के मत के लिये दे० 'भारतीय विद्या' भाग १७, अंक ३४, जून जुलाई १९५६ तथा

डॉ० माताप्रसाद का मत दे० पृ० १८ राउल बेल, प्रकाशक मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६३।

२—वही,

३—पृ० २ स्टब्डी, उ० ध्य० प्र०, डा सुनीति कुमार चटर्जी

४—वही, पृ० १।

भी, यह स्पष्ट है कि यही बात अन्य सभी पद्या के लिए लागू नहीं हो सकती।

व्यावहारिक निष्कर्ष यह है कि हमारे लिये प्राकृतपैंगलम् की भाषा हेमचन्द्र व अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं की प्रारम्भिक अवस्था के बीच वाले सोपान का प्रतिनिधित्व करती है और इस दसवीं से ग्यारहवीं अथवा सम्भवतः बारहवीं शताब्दी ईस्वी के आसपास की भाषा कहा जा सकता है।^१ इस प्रकार प्राकृत पैंगलम् में उद्धृत छंदा की भाषा में हम अवधी या उसके पूव रूपों को ढूँढने का प्रयास कर सकते हैं। हम यह तो नहीं कह सकते कि डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी या डॉ० माताप्रसाद गुप्त 'उक्ति व्यक्ति-प्रकरण' या 'राउर बेल' की जिस भाषा को कोसली या दक्षिण कोसली कहते हैं वह अवधी का ठीक ठीक पूव रूप है क्योंकि कोसल प्रदेश अवध से विस्तृततर क्षेत्र को कहा जाता रहा है किन्तु चूकि अवध, कोसल के अन्तर्गत रहा है इसलिए राउर बेल और उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा में अवध की भाषा अवधी के रूप में मिलने चाहिए। नीचे प्राकृत पैंगलम् के छन्दों, राउर बेल और उक्तिव्यक्तिप्रकरण की भाषा पर इसी दृष्टि से विचार किया जा रहा है।

प्राकृतपैंगलम्—

४ सज्ञा—अवधी में 'यो' जैसे लघु रूप मिलते हैं।^२ प्राकृतपैंगलम् की निम्नलिखित पंक्ति में ऐसे रूप देख जा सकते हैं—

सज्जिअ जोह विवाडिड कोह चलाउ धरू ॥१७१ व० वृ०

अवधी में कभी कभी स्त्रीवाचक शब्दों के अन्त में दीर्घ स्वर को ह्रस्व करके और 'या जो' कर उसमें लघुता या प्रीति यजित की जाती है। जैसे बहुरिया, नडनिया। प्राकृत पैंगलम् के एक छन्द में इस प्रवृत्ति की सूचना मिल जाती है—

चनकमलणअलिया खलिअयणवसणिया

हसइपरणिअलिया असइ धुअ बहुलिया ॥ ६८ व० वृ०

५ अपभ्रंशोत्तर भाषा में लुप्तविभक्तिक पदों का प्रयोग प्रचुरता से होने लगा था। ये प्रयोग अद्य कई नवीन भारतीय आय भाषाओं की भाँति अवधी में भी मिलते हैं। प्राकृत पैंगलम् में उद्धृत कई छन्दों में ऐसे प्रयोग मिलते हैं—

१ पुरानी राजस्थानी (पृ० ५) तेस्रोतेरी हिंदी अनुवाद, डॉ० नामवर सिंह नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, स० २०१२ वि०।

२ ग्रामर आफ हिंदी लैंग्वेज (पृ० १२२) कैलाश, १९५५ ई० तथा १९५९ ए अ में उद्धृत पहला सज्ञा शब्द, डॉ० बाबूराम सक्सेना।

कर्ता—

उदंड ओड्ड जरा भअ पत्ताउ । १२६ मा० वृ०
प्रथम पितामह गृष्टि उपाई । १।१ ह० ष०

कर्म—

जे गजिअ गोडाहिवइ राज । १२६ मा० वृ०
हाय वाटि कीहा मुअ वारा । ३३ लो० ष०

करण—

छग हण । १३१ व० वृ०
गुरु प्रसाद गच्छु वही बिचारी । ३।१ ह० ष०

सम्बन्ध—

ता कण्ण परववम कोइ बुज्ज । १२६ मा० वृ०
लोरिक विरह तवइ मोर अगा । १६ मै० स०

६ लुप्तविभक्तिक पदा के प्रयोगाधिक्य से उत्पन्न अन्वयवस्था की दूर करने के लिये अपभ्रंशोत्तर भाषा में परसर्गों का प्रयोग बढ़ गया था । अवधी में प्रयुक्त कई परसर्गों के पूवरूप प्राकृत पँगलमू में मिल जाते हैं—

सम्बन्ध—क

देवक लिबखअ वेण मिटावा । १०१ व० वृ०
जस अकलकित चौय क चदा । ४ स० क०

कर्म, सम्प्रदान—क

सपअ अज्जिअ धम्मक दिज्जे । १०१ व० वृ०
हमहुक किच्छु कीज दाया । २ ह० ष०

अधिकरण—मज्ज

मण मज्ज वम्मह ताव । ८६ व० वृ०
बोलत बोल माअ मुँह मारइ । १३ लो० ष०

७ सवनाम—

प्राकृतपँगलमू में अवधी के कई सवनाम प्रायः ज्यो के त्या या उनके पूव रूप मिलत हैं—

उत्तम पुरप .

हउ—जो हउ रक सोइ हउ राजा । १३० भा० वृ०
हउ अस बोलिउ चतुर सयानी । ३ लो० क०
मइ—कोहाणल मह मइ जलउ । १०६ भा० वृ०

अवधी को निबटतम पूवजा भाषा

गनपत वो मे चरन मनावो । १ ह० च०

हम—हम इक्लि बहू । १६३ मा० वृ०

हम मोतव द्वारिका दिन दस लागिहि जात । १० स्वगा०

मध्यम पुरूप—

तुह—तुह जाहि सुन्दरिअपणा । ६१ व० वृ०

का सोग तुह घरहु पियारु । १ मै० सत०

सोहर तोहर सक्ट सहर । २४ मा० वृ०

जनम जनम तोहर गुन गावो । १० रा० ज०

अथ पुरूप—

सो—सोउ जुहिठिर सक्ट पावा । १०१ व० वृ०

सो नर सदा वैकुण्ठिहि जाह । १५ रा० ज०

जे—जे गजिअ गोडाहिवइ राइ । १२६ मा० वृ०

कीन्ह धय जे बैताल पचीसो । ४ स्वर्गा०

अनिदचपवाचक—

कोई—ता कण्ण परवरुम षोइ बुझ्भ । १२६ मा० व०

एहि सरि अजर न पूज कोई । १५ मिर०

निजवाचक सवनाम—

अपना—तुह जाहि सुन्दार अपणा । ६१ व० वृ०

जाहू राज घर आपना । १५ स० क०

सावनामिक विशेषण—

जेता, तेता—जेता जेता सेता तेता । ७७ मा० वृ०

सेल हिमाचल आदिक जेते,

चित्रकूट जमु गावहि तेते । १३८ अयोध्याकांड,

रा० च० मा०, गीता प्रे

८ क्रिया—

भाषा के स्वरूप के निषय में क्रियापद सर्वाधिक महत्वपूर्ण होते हैं ।
पैंगलम् में उद्धृत कुछ छन्दा में ऐसे क्रियापद प्राप्त होते हैं जो अवधी या
पूरूप हैं—

वतमान निश्चयायक उत्तम पुरूप, एक वचन

—अउ (उ)—कोहाणल मह मइ जलउ । १० व० वृ०

एक दुइ काल जइस मह देखउ । १० सो० व०

मध्यम पुरप

—असि जीवण चाहसि मुखव जइ । १६६ मा० वृ०
मम न जानसि पापो कहसि कौन तं लाग । २७ स० क०

अथ पुरप

—अ,—अइ,

पवण बह सिरिर इह

भअण हण तवइ मण । ४० व० वृ०

कह दूतिनि सुन मालति मेना । ३ मै० स०

बहुरि रिखे राजा सो कहई । ४ । ८ ह० च०

अपूर्ण वृदत

—त चचल जुव्वण जात ण जाणहि । १३२ मा० वृ०

जेहि सुमिरत में मति गति पाई । १ स० क०

भविष्य निदचपाथ

—अब सहव कह मुण सहि । १६३ मा० वृ०

सो मै सोंपव तोहि मुआरा । ७ ह० च०

भूतकालिक वृदन्त

—आवा अवधी में प्राप्त कई भूतकालिक वृदन्ती रूप या उनके पूर्व रूप
प्राकृतपैंगलम् में मिलत ह जसे—

सोउ जुहिद्विर सकट पावा ।

देवक लिखअ नेण मिटावा । १०१ व० वृ०

या

जिणि आसावरि देसा दिण्हउ । १२८ मा० वृ०

वसिठ बचन विस भरे सुनावा । १ सो० क०

विद्या गनपति दीह । ५ स० क०

पूर्वकालिक—

—इ बधु समदि रण घसउ । १०६ मा० वृ०

कंठ वैठि जौ कहइ भवानी । ३ स० क०

६ अद्यय

प्राकृतपैंगलम् में अवधी के कई परिवर्तित अन्वय मिलने हे । जसे—

कवहु । २०६ मा० वृ०

कहिआ । ८१ व० वृ०

जउ (यि-) । १३० मा० वृ०

कि (विकल्पात्मक) १३६ मा० व०

इन अयवो का उल्लेख प्रारम्भिक अवधो के अयवो को विवेचना के प्रकरण में मिल जाएगा ।

राजल बेल में प्राप्त अवधो या उसके पूव रूपो का विवरण नीचे दिया जा रहा है —

१० सना

लघु रूप—

तामु सोह कि कछडा पावइ । ४ रा० वे०

दीघतर रूप—अदसी बेटिया जा घर आवइ । ५ रा० वे०

लघु रूपा के अवधो उदाहरण प्रा० पै० की भाषा पर विचार करते हुए दे दिए गए हैं । दे० ४

११ परसग—

राजल बेल में परसगों का प्रयाग बहुत कम हुआ है उसमें प्राप्त परसगों म स अधिकांश अवधो में प्रयुक्त हुए हैं ।

करि— ता करि (पा) वइ । ३ रा० वे०

तीस कोस लहि ता करि डारा । २४ स० व०

केर—पहिरणु घाघरेहि जो केरा । १७ रा० वे०

धुवां केर धाराहर पृथ्वी कोई न रहा निदान । १ मै० स०

सहु—को तइ सहुँ भई बोलइ । २८ रा० वे०

तेहि ठहराइ लौर सिउ कहा । २२ लो० क०

मांभ—थणहर मांभे जो हार सुलेरउ । २४ रा० वे०

पायर मांभ कीर जनु किही । २१ मिर०

ऊपर—छोपहि ऊपर अम्बेवल कइमे । २० रा० वे०

जिन्ह सन ऊपर चाव । ६ मै० स०

१२ वारक—

अवधो में प्रयुक्त कई वारक रूप राजलबेल में प्राय ज्यो के त्यो मिलते हैं —

वरण—ए० व०

—एँ, अहरु तबोलें मणु-मणु रातउ । २

पा होऊ कुँए दूतें तोरें । १६ सो० व०
 सम्बध वाचक—ए० व०—हि,—ह
 जगु गागहि जल । २५
 एते रूप मैं सीताहि देखी । २६ स० व०
 काम्बदूमह आलवालु जइसी भावई । ४२ रा० वे०
 नरवह बुढ आन सो मेलसि । २२ मै० स०
 बहु वचन—ह
 सो देरसि हारहु भउ अवहारु ।
 दव दान विप्रह कह दीन्हा । ३६ स० व०
 अधिकरण—ए० व०—ए—हि
 जहि घरे अइसी आलग पइसइ । १४ रा० वे०
 परम आँच जेहि हियरे लगगइ । ४६ सो० व०
 आँखिहि काजल तरलउ दीजइ । २ रा० वे०
 रहसि न चाँदा मनहि लजाई । १७ सो० व०

१३ सर्वनाम—

राउर बेल में प्राप्त कई सर्वनाम और उनके रूप अवधो में प्रयुक्त सर्वनाम
 पा उनके पूवरूप है —

अय पुरप दूरवतीं सकेत वाचक
 सो—तरणा जीवन्त करइ सो वाजल । १२ रा० वे०
 दया धम सो सदा अचारा । ६ स० व०
 ता—अनु कि इ ताकरि (पाँ) वइ । ३ रा० वे०
 सती होइ सत ताकर गनिअ । ४३६ मिर०
 तामु—तामु सोह कि कछडा पावइ । ४ रा० वे०
 भगिनी तामु देवकी नाऊ । ७/१ ह० व०
 ताहि—ताहि कि दूलिम्ब कोऊ पाँवइ । १ रा० वे०
 चा (जा) रउं नार ताहि कर हिया । ७ मै० स०
 निवटवतीं सकेत वाचक—
 यह—चाँदहि ऊपर एह भइ टीका । २१ रा० वे०
 यह ओरानेउ जाइ । १० मिर०
 सम्बधवाचक—
 जा—अइसी वेटिया जा घर आवइ । ५ रा० वे०

जाकर पिह परदेसइ आवइ । ८ मे० स०
 जहि—जहि घरे अइसी औलग पइसइ । १४ रा० वे०
 जेह घर कत वै करहि वैरासू । ६ मे० स०

अनिश्रयवाचक—

कोऊ—ताहि कि तूलिम्ब कोऊ पावइ । ५ रा० वे०
 अइस चलहु नहि सुधि कोउ पावा । ८ लो० क०
 सब—तरणे सावइ मूमथि । २० रा० वे०
 मोहि समै पिआरी । १२ रा० ज०

१४ क्रियापद—

सहायक क्रिया—

राउर बेल में अवधी में प्रयुक्त निम्नलिखित सहायक क्रियाएँ मिली हैं—

अछइ—दूधि आपणी अछइ । ३६ रा० वे०

गोनी रा (टा) पति जहा आछ रानी । १८ स० क०

भउ—सो देखि हारहु भउ अवहाए । २४ रा० वे०

हरिखवत भी राजा दिन दिन मगतचार । १८ स० क०

भइ—चाँदहि उपर एह भइ टीका । २२

चाँद साय भई । ६० लो० क०

वतमान निश्रयाय ।—अय पुरुष ए० व०

राउर बेल में वतमान निश्रयाय के कई रूप प्राप्त होत हैं । उनमें से अधिकांश अवधी के रूप हैं—

—अइ, जाला काठी गलइ सुहावइ । ३ रा० वे०

बहुरि रिखे राजा सो कहई । ४-८ ह० व०

—अ, कछड़ा बछ्छा डहि पर इतरा

(डहि पर = जल पड़ता है)

निसर न कोऊ वार । १४ लो० क०

—अहि,—(क) य्यू (चू) विच्चहि जे घण दोसहि । १७ रा० वे०

दादुर पपिहा कुहकहि मोरा । १० मे० स०

मध्यम पुरुष ए० व०

—असि,—अहि —अरे अरे बब्वरे देखसि न टीका । २१ रा० वे०

केहा टेल्लिपुनु तुहुँ भाखहि । १५ रा० वे०

घम न जानसि पापी कहसि कौन तैं लोग । २७ । स० क०

तजि जिउ सोक न भरहि सजाई । १७ सो० क०

कम वाच्य

—ईजइ,—मासैं सोना जाउल कीजइ । २४ रा० वे०

तासो कीजइ नेह । ३ मै० स०

भूतकालिक वृदन्त

राउर वेल मे प्राप्त कुछ भूतकालिक वृदन्तो के रूप इस प्रकार है—

—आ,—ई,—इता

ये या इनके विकसित रूप अवधी काव्यो में पाए जाते हैं—

—आ—एहा देहु सुहावा टेल्ल । १८

कते दुल कबि अज (छ) र आवा । ३ स० क०

—ई,—भासह जइसो जाणी । ४६ रा० वे०

मन बिता चल नोद गवानी । ५१ सो० क०

—इता,—अघहि कय्यल छहरा दिता । १६ रा० वे०

सौत दरव मालिन पुनि गई मैना के वार । २ मै० स०

भानु सभान न कोत बयारू । ५१ च० (५)

१५ अव्यय—

राउलवेल के निम्नलिखित अव्यय प्रारम्भिक अवधी में प्रयुक्त हुए हैं—

कउहू । १६, आगे । १६

जाणि । २५

जइमे । २७, जस । ३, जइसो कइमी । १४

कतहूँ । २० स० क०, आगे । २१ रा० ज०

जनि । ५५ सो० क०

जइसा । २६ मै०स०, जस । ५ मै० स० अइस । ८ सो० क०

कइसैं । १८ सो० क०

पूर्वकालिक

—इ, सो देखि हारहु भउ अवहारू । २४ रा० वे०

तजि जिउ सोक । १७ सो० क०

१६ प्राचीन अवधी के सर्वाधिक रूप हमें १२वां शताब्दी की रचना उक्ति व्यक्ति प्रकरण में मिलते हैं। उक्ति व्यक्ति प्रकरण प्राकृतोपगमना राउर बल की भाँति वाच्य नहीं है। इसमें हर्ष जनता की बातों का रूप मिलता है। नावे उक्ति

अवधी की निकटतम पूवजा भाषा

व्यक्तिप्रकरण में प्रयुक्त ऐसे रूप का उल्लेख किया जा रहा है जो अवधी में प्राप्त होते हैं—

१७ सज्ञा

लघु रूप—

घोड वाग घरि चाल ४८।१२ उ० व्य०

दीघतर रूप—

दुखिआ काख । ३८।२६ उ० व्य०

इन रूपों के उदाहरण प्राकृतपैंगलम् की भाषा पर विचार करत समय दे दिए गए हैं । दे० ४

१८ कारक

कर्ता कारक एक वचन के लिए उक्तिव्यक्तिप्रकरण में शब्दों के अविकारी रूप प्रयुक्त हुए हैं । पुल्लिङ्ग बहुवचन म एकारान्त शब्द भी मिलत है । ये रूप अवधी रचनाओं में भी प्राप्त होते हैं —

एक वचन—डुह गावि द (दू) घु गुआल । ५।१४ उ० व्य०

नाइ मूड सुनि राजा रहा । १ लो० क०

बहु वचन—बहुतु पूत भए । १५।२८ उ० व्य०

मिरगा पय लाधि जो जाहो । ५१ च०

हुइ गदिआखे । १६।१ उ० व्य०

सेवा करहि राउ औ रातें । ७ मिर०

कम

कम के लिए भी उ० व्यक्ति प्रकरण में अविकारी रूप प्रयुक्त होता है । अवधी में भी अविकारी रूप का प्रयोग कम कारक म हाता है—

याच काबल यजमान । ५।१६ उ० व्य०

विप्रह वेद पडे । १७ रा० ज०

करण—

करण कारक में उ० व्य० प्र० में कभी शब्दों के अविकारी रूप और कभी 'ए' प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग होता है । प्रा० अवधी म करण कारक में अविकारी रूप के प्रयोग तो सामान्यतः मिल जाते हैं किन्तु 'ए' प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग विरल है ।

घन पुन सपुन होउ । ६।२७ उ० व्य०

जोभें चाख । ६।९ उ० व्य०
 सहरस सबद हियर फाटउ । १४ मै० सत
 का होई कुवरू दूतैं तीरैं । १६ लो० व०

सम्प्रदान—

उ० व्य० प्र० में सम्प्रदान—अहि प्रत्यात रूप मिलता है । अवधी में ऐसे रूप मिलते है ।

वरहि कन्या द । ५१।३ उ० व्य०
 कर उठाइ सभहो देहु पाना । ५७ स० द०
 सभही (सभी को)

अधिकरण—

उक्ति व्यक्ति प्रकरण में अधिकरण कारक में अविकारी रूप, केवल अनुनासिकान्त तथा एकारान्त या ऐकारान्त रूपों का प्रयोग हुआ है । ये रूप प्रा० अवधी में भी मिलते हैं—

दुआर पइसति निहुड । ३७।२६ उ० व्य०
 बठ बेठि जौ कहई भवानी । ३ स० व०
 सेज ओलर । ६।२० उ० व्य०
 अमरन पहिरा जउ गिय हारू । ७ लो० व०
 सूखें काठे कौआ बरउ । ३७।२५ उ० व्य०
 सुरज सेज अधिमारेँ लावसि १७ लो० व०
 जेहि हियरे लागइ । ४९ लो० व०

१९ परसग—

नीचे उक्तिव्यक्ति प्रकरण में प्राप्त उन परसगों का उन्वेष किया जा रहा है जो अवधी में मिलते हैं—

किहू—(सम्प्रदान)

का किहू । ३१।१०

अइस न जानों काहू किहू परा । ८४ वं

कर—(सम्बन्ध)

राज कर पुरानु । १६।१९ उ० व्य०

एव मरैय कर भागन बोना । ११ स० व०

हुन—(आगत)

काहू हुन ए पुरानु मा । ३३।१५ उ० व्य०

सरग हुतें घर अतरि आई । १७ लो० क०
सउ, सेऊ—(करण)

हुँजणे सउ सब काहु तूट । ३७।२३ उ० व्य०
घिए साकरे सेउ सातु । २१।३१

जा सउ मै आपन जिय हारा । १७ मै०, स०
परम तत सेउ लागइ तारी । २ मिर०

माँभ—(अधिकरण)

एन्ह माँभ । १६।२० उ० व्य०

बोलत बोल माँभ मुँह मारइ । १३ लो० क०

२० सवनाम—

उत्तम पुरप

हउ, भै

विआलि को हउ मागिहउ । २२।५ उ० व्य०

को भै भोजन मागव । २२।६ उ० व्य०

हउ अस बोलिउ चतुर सयानी । ३ लो० क०

मइ वारह तोहि अस्थन दोन्हा । ३ मै० स०

मोहि—

मोहि तहि के वटाविहति । २१।२१ उ० व्य०

जिन्ह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊ । १ रा० ज०

मार—

मोर क्षेम को करिह । २१।१२ उ० व्य०

पाउ मोर सूष न परइ । ४२४ मिर०

मध्यम पुरप—एक वचन

तु, तै

तु करसि । १६।६ उ० व्य०

तै काहु जिअ । २०।१० उ० व्य०

वारह मदिर रैनि तू घावसि । १७ लो० क०

अस ओखर तै बोलिसि घाई । ७ मै० स०

तोहि—

तोहि । २२।४ उ० व्य०

इस नृप तोही । ५।१ ह० क०

तोर—

कवण तोर भाइ । १६।३० उ० व्य०
 मै मारा तोर धवन पूता । ६ रा० ज०

बहुवचन—

तुम्ह—

को तुम्ह तारिह । २१।२०
 दिन दस तुम्ह कन्न पथ चलावइ । १० लो० क०

अय पुरप—एक वचन

सो—

जरी हो सो भाजया । १०।७ उ० व्य०
 सो चरिय सब भाला गावो । ३ ह० च०

ताहि—

सो ताहि साइक । ४७।२० उ० व्य०
 चा (जा) रउं नार ताहि कर हिया । ७ मै० स०

ता—

ताकर पापु ओरस । ३३।२५ उ० व्य०
 प्रथमाहि चरन चौतवी ताके । १ । १, ह० च०

बहुवचन

ते—

ते गुणै जाणि उपगति । १०।६ उ० व्य०
 ते पाढौ कल लेहि निवासा । ६ स० क०

तेन्ह—

तेह माऊ । १०।१७ उ० व्य०
 तिन्ह भोतर धरे । २ लो० क०

निक्टवर्नी सनेतवाचक—बहुवचन

एह माऊ । १६।३० उ० व्य०
 छात सिघासन इह पे छाजा । ६ मिर०

सम्बधवाचक—एक वचन

जो—

जो निर्गुण हो । १०।८ उ० व्य०
 इह बे प्रभ जो होइहि वारा । ७ ह० च०

जेइ—

जेइ जेइ धम पसर । ३३।१४ उ० व्य०
(जिससे जिससे धम फैलता है)

जेइ रे मुना । ४१ लो० क०

जा—

जा किह । १४।३० उ० व्य०

जा कर । १०।३५ उ० व्य०

जा कह कछु हाथ कै देई । ३८ लो० क०

जाकर पिह परदेसइ आवइ । मै० स०

बहुवचन—

जे—

जे सवहि न उपकरति । १०।६ उ० व्य०

तीन भुवन जे मरि पुर रासा । २ रा० ज०

प्रश्न वाचक—एकवचन

कवण, को—

कवण ए छाती खणावत आच्य । २१।१४ उ० व्य०

पिउ गारुड बिन कउन जिवावे । २६ मै० स०

को ए । १६।१८

अपनी मति को जोरइ पाया । ३ स० क०

वेइ—

अम्ह पास वेइ पत्रव । २१।६ उ० व्य०

वेइ र (रे) निपूती चांदा कोसी । ४५ लो० व

का—

काररें मरु छात्र ईहां पडा । २६।६ उ० व्य०

कारर घरम पाप कह करा । २१ मै० स०

अप्राणि वाचक—

काह—

काह ईहां कीज । २७।४ उ० व्य०

आपि के माटव काह दहै हाई । ४३५ मिर०

अनिरुधय वाचक—

कोऊ—

राजा जइ कोउं । २१।१६ उ० व्य०

अइरा षतहृ गहि गुधि षोड पावा । ८ सो० ष०

गाहू—

दूजणें सउं सव गाहू तूट । ३७।२३ उ० व्य०

सम गाहू पर बार सभारेउ । ६ भै० स०

विछु—

जा विछु कीज । १५।५ उ० व्य०

जो वछु अहै हमारें । १ ष

निज वाचक—

आपण—

आपण पूनु हराव । ३८।१३ उ० व्य०

जाहू राज भर आपना । १५ स० ष०

आपणे—

आपणे आलाप । ४४।२८ उ० व्य०

जाहू तुरत घर आपने । ५४ स० ष०

नित्य सम्बधी—

जो, सो—

सो पूते जणि जाम जो निर्गुणु हो । १०।८ उ० व्य०

चाँद बहा सो मूरख जो अइसाहि पतिपाइ । २७ लो० क०

२१ अव्यय—

तव—३३।१०,

जब—३३।१०

जेसैं—३३।१२

वैसैं—३२।१

जेसैं—३३।१२

जइ—२१।१६

जणि—१०।७८

न—२०।१०

पुनि—४५।१५

उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा के विवेचन के अंतगत सुनीति बाबू ने बत मान निश्चयाय रूपों की जो तालिका दी है वह इस प्रकार है—

दे० १५ उ० व्य० प्र०

	एक वचन	बहु वचन
अय पुरुष	कर (करइ, बहुत वचन)	करति
मध्यम पुरुष	करसि	करहु
उत्तम पुरुष	करउ, करौ	करहु

अवधी की रचनाओं में, उ० व्य० के अय पुरुष बहु वचन और उत्तम पुरुष बहु वचन के—अति,—अहु रूप नहीं मिलते हैं। अन्य रूप मिलते हैं।

अय पुरुष—एक वचन

निसर न कोऊ बार । १४ लो० क०

बपट रूप परत्रिया जो देखै । २८ स० क०

मध्यम पुरुष—एक वचन

मम न जानसि पापी । २७ स० क०

मध्यम पुरुष—बहु वचन

तुम्ह काहे जूम्हु । ६५ लो० क०

उत्तम पुरुष—एक वचन

जाता देखउ यह ससारु । १ मै० स०

कम वाच्य—

इअ,—ईअ,

पठिअ । २०।२६ उ० व्य०

काह कीअ । २०।२० उ० व्य०

पाइअ । १ लो० क०

वीअ । ६ लोक क०

भविष्य निश्चयाय—

अन्य पुरुष—एक वचन

इह,

ठपाक करिह । ६।२३ उ० व्य०

प्रान घटत घट जाइह

ले वे पारि तोरि वे खाइह । ८६ मिर (सि)

मध्यम पुरुष—एक वचन

इहसि,

काह करिहसि । २०।११ उ० व्य०

जो तू जेहसि मैवै । ४६ धं (प)

अव,

का भई भोजन मांगव । २२।६ उ० ४
सो मै सौंपव तोहि भुआरा । ७ ह० ५

उत्तम पुरुष—एक वचन

इहउ,

को हउ मागिहउ । २२।५ उ० ध्य०
तोरे वचन चाद जइ पइहउ । ५२ लो० ५०

अनुशाय—

मध्यम पुरुष—एक वचन

उ—

सबहि भूत दया कर । ६।३२
कर मो कह जस परे विचारा । ५ रा० ज०

असि—

प (१) पु जणि करसि । १०।११
कहसि कोऽ त लोग । २७ स० क०

उत्तम पुरुष—एक वचन

अउ—

हउ पवत उ टालउ । ६।२६
तेहि दिन करउ बधावता । मै० स०

भविष्य अनुशाय—

ऐसु—

बम्हण इ पर निवतसु । १६।२३

प्रारम्भिक अवधी की किसी रचना में इसका कोई उदाहरण मुझे नहीं मिला है । किन्तु अवधी की परवर्ती रचनाओं में इस रूप की कमी नहीं है । देखिए इवोल्यूशन आफ अवधी, ३११ ।

सामाय भूत—भूत कालिक कृदन्त

उक्तिव्यक्ति प्रकरण में निश्चयाथ भूत के जा रूप मिलते हैं उनमें से अधि काश अवधी की रचनाओं में भी उपलब्ध हैं—

अन्य पुरुष—एक वचन—पुलिंग

आ—

बेटा काहा गा । २२।१ उ० व्य०
जेहि बाटन गा लौरक साइ । ५३ ५

एसि—(अय पुरुष एक वचन)

भोजन किएसि । ६।८ उ० व्य०
बावेसि सीस भारि कै बारा । ६ च०

इसि—

नइ काहें (केन टीका) पवरिसि । २२।१० उ० व्य०

जो मागिसि सो पाइसि । १३ मिर०

ए—

कालिदास माघ बैतो एक खाति गए । १०।१७

कौडी कौडी जोर भूए किरपन वापुरे । १ मै० सत

एसि—(मध्यम पुरुष एक वचन)

वैसैं तो ठो छूटेसि । २३।१७

की ते भूलि पेरसि बन आई । २६ स० क०

पूव कालिक—

इ,—

जैविजा । २०।२२ उ० व्य०

मैना देखि मरइ पै चाहा । ८० लो० व०

त्रियायक सज्ञा—

अण—

पडण आव । ११।२३ उ० व्य०

कहन अस लागे । ८ ह० च०

अद—(विवृत रूप)

गाउ जावैं किह सजव । ११।२२ उ० व्य०

सो महेस सम कहवे लीन्हा । १४ स० क०

प्रेरणायक—

आवा—

पडाव । १३।२६ उ० व्य०

बुहाव । १३।२७ उ० व्य०

सड़ावा । ३, स० क०

पडावहि । १६ स० व०

सहायक क्रिया—

उक्ति व्यक्ति प्रकरण में आध, हो, अह और रह् सहायक क्रियायें मिलती है । ६० उ० व्य० ८८ । ये सहायक क्रियाएँ अवधो की रचनाओं में प्राप्त होती हैं ।

आछे । १८ स० व०

होई । ३७ सो० व०

आहि । ५ रा० ज०

रहहो । ८ मिर०

२३ उपयुक्त पक्तियों में प्राकृत पैगलम् राउर बेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण मे से उन रूपों को प्रस्तुत किया गया जो अवधी में भी प्राप्त होते हैं। इन रूपों से और अवधी की रचनाओं में उपलब्ध इनके समान या विकसित रूपों में सम्बन्ध सूत्र जोड़ना ही हमारा उद्देश्य है। प्राकृत पैगलम् के विवेचित छंदों, राउर बेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण की भाषा को अवधी नाम नहीं दिया जा सकता। ये अवधी के पूर्व रूप के कुछ लक्षण प्रस्तुत करते हैं। इसके अतिरिक्त भाषा विरोध के रूप में १२वीं १३ वीं शताब्दी तक अवधी का कोई उल्लेख अब तक नहीं प्राप्त हुआ है।

२४ डा० चटर्जी ने उक्तिव्यक्ति प्रकरण की भाषा को प्राचीन कोसली कहना उचित समझा है। किन्तु ८वीं शती में रचित कुबलय माला में कोसली के उल्लेख को ध्यान में रखते हुए १२वीं शती की भाषा के रूप को प्रकट करने वाले उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा को प्राचीन कोसली कहना युक्तिसंगत नहीं प्रतीत होता। इसके अतिरिक्त कोसली का भाषा क्षेत्र और उसकी भाषागत विभेदताओं का सम्यक निर्धारण अभी तक नहीं हुआ है। इसलिए हमने प्राकृत पैगलम् राउर बेल के विवेचित अंशों और उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा को कोसली न कह कर अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा कहा है। हाँ, इन ग्रन्थों की भाषा एक निश्चित सीमा तक 'कोसली' के लक्षण अवश्य प्रकट करती है। उपयुक्त विवेचन का मतव्य यह है कि १४वीं शताब्दी में अवधी भाषा का जो सुनिश्चित स्वरूप मुल्ला दाउद की रचना चदावत से मिलने लगता है, उसका रूप प्राकृत पैगलम् के कुछ छंदों राउर बेल और उक्ति व्यक्ति प्रकरण में मिल जाता है। अतः भाषा के विकास क्रम की दृष्टि से इन रचनाओं के विवेचित अंशों की भाषा और अवधी में गहरा सम्बन्ध है। और यह भाषा अवधी के कई-कई पूर्व रूपों से युक्त है।

प्रारम्भिक अवधो के अध्ययन की सामग्री

१—चदायन

२—मेनासत

३—राम जन्म

४—सत्यवती कथा

५—स्वर्गरोहिणी कथा

६—मिरगावत

७—हरि चरित



प्रारम्भिक अवधी की सामग्री

२५ भाषा रूप में उल्लिखित होने के पूर्व (दे० १) भी किसी न किसी मात्रा में अवधी का साहित्य विद्यमान रहा होगा, किन्तु हमें अभी उसकी पर्याप्त जानकारी नहीं है। इस उल्लेख के बाद अवधी की जो प्रथम रचना हमें प्राप्त होती है वह मुल्ला दाऊद की है नीचे उस पर और प्रारम्भिक अवधी की अन्य रचनाओं पर विचार किया जा रहा है।

चदायन*

२६ लोरिक और चादा की प्रेम कथा उत्तरी भारत में प्राचीन काल से प्रचलित है। १४वें शताब्दी में कवि शेखराचाय ज्योतिरीश्वर की प्रसिद्ध पुस्तक 'वर्णरत्नाकर' में नगर वणन के अंतर्गत 'लोरिक नाचो' अर्थात् लोरिक नृत्य का उल्लेख हुआ है,^१ जिससे प्रकट होता है कि जनता में लोरिक नाच उस समय प्रचलित था। इस लोक प्रचलित प्रेम-कथा का नायक लोरिक आभीर था। आज भी बिहार और उत्तरप्रदेश में 'लोरिक' आभीर का जातीय गान है। आभीर की इस जातीय विशेषता को प्रकट करने वाली एक लोकोक्ति का उल्लेख ग्रियसन ने अपने एक लेख 'द बय आफ लोरिक' में किया है।^२ लोरिक और चादा की

१ नगर वणन (ख) प्रथम कल्लोल, वर्णरत्नाकर स० डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, बबुआ मिश्र, रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल कलकत्ता, १९४०।

२ दि बय आफ लोरिक, लेखक ग्रियसन पृ० ६५०, माडर्न स्टैंडीज इन आनर आफ चार्ल्स राकवेल लानमन।

* आगे इस रचना के नामकरण पर विचार करते समय यह विचार प्रकट किया गया है कि सम्भवतः काव्य का वास्तविक नाम चदायन था। डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसे 'लोरिकहा' कहा है। यहाँ 'चदायन' शीपक केवल अधिव प्रचलित होने के कारण रखा गया है।^१

प्रेम-कथा पर आधारित काव्य की सूचना सबसेप्रथम गासाँ द तासी ने अपनी पुस्तक 'हिस्तोरे द ल' लितरेत्योर हिन्दुई एत हिन्दुस्तानी में दी थी।^१ इसके पश्चात् हिन्दी साहित्य के कई इतिहासकारों और लेखकों ने अपने नामों से इस प्रेम कथा का उल्लेख किया।^२ किन्तु उनसे इस काव्य पर कोई विशेष प्रकाश न पड़ सका जिसका कारण सम्भवतः यह था कि काव्य अनुपलब्ध था।

इस काव्य के विषय में प्रामाणिक सूचना सबसेप्रथम बाबू ब्रजरत्न दास ने अपनी पुस्तक 'खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास' में दी।^३ उन्होंने लिखा कि अल्बदायूनी द्वारा लिखित फारसी के इतिहास ग्रन्थ मुत्तखब उततवारीख में इस काव्य की और इसके रचयिता की चर्चा की गई है। मुत्तखब उततवारीख के अनुसार ७७२ हिजरी म मन्त्रो खानजहाँ की मृत्यु हुई और उसके पुत्र जूना शाह ने वह उपाधि धारण की। मौलाना दाऊद ने उसके सम्मान में हिन्दवी भाषा में 'चन्दायन' नामक मसनवी की रचना की जो लीरिक प्रेमी और उसकी प्रेमिका की कथा पर आधारित है। तवारीख के अनुसार यह काव्य अत्यन्त लोकप्रिय था और जब धर्मोपदेशक मरदूम शेखतकीउद्दीन मिम्बर से इस काव्य के अर्थ पढ़कर सुनाते थे तो लोगों पर इसका विचित्र प्रभाव पड़ता था।^४

अवध सूबे और रायबरेली जिले के गजेटियरों में डलमऊ के मौलाना दाऊद और उनकी भाषा पुस्तक चन्द्रेनी का उल्लेख है।^५ इन गजेटियरों के अनुसार

१ अनुशीलन पृष्ठ ११, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त द्वारा संग्रहित चन्दायन के आधार पर।

२ (क) पृ० २४६, प्रथम भाग, मिश्रबंधु विनोद, सं० १९७६।

(ख) पृ० १४७ हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास सं० १९६७, लेखक हरिऔष।

(ग) पृ० २०, २१, दि निगुन स्कुल आफ पोएट्री, लेखक डा० पीताम्बरदत्त बड्डवाल (हिन्दी अनुवाद) सं० २००७।

(घ) पृ० १३१, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (द्वितीय संस्करण), १९५४ ई०।

३ पृ० ६४, खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं० १९६८।

४ पृ० ३३३, प्रथम भाग, मुत्तखबउततवारीख ले० अब्दुलक़ादिर इने मलूक शाह अनुवादक जी० एस० ए० रेन्विग, १८६८ ई०।

५ पृ० १६२, भाग ३६, रायबरेली डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ द युनाइटेड प्राविंसेज और पृ० ३५५, भाग १, गजे० ऑफ दि प्राविंस आफ अवध

दाऊद एक ऐसे विद्यालय में काम करते थे जिसकी स्थापना फीरोजशाह तुगलक ने मुस्लिम धर्म और सिद्धांतों के प्रचार के लिए की थी। अवध गजेदियर के अनुसार मुल्ला दाऊद ने चन्देनी की रचना ७७६ हि० में की थी।

२७ सम्पादन

काव्य का सम्पादन तीन विद्वानों ने अलग-अलग किया है। डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित संस्करण 'लोरकहा'^१ नाम से तथा डा० विन्वनाथ प्रसाद^२ और डा० परमेश्वरी लाल गुप्त^३ के संस्करण 'चन्दायन' नाम से प्रकाशित हुए हैं। नामों पर हम आगे विचार करेंगे। यहाँ पर तीनों सम्पादित संस्करणों का विवरण उनकी भूमिकाओं के आधार पर दिया जा रहा है—

२८ लोरकहा—(लो०क०)

लोरकहा का सम्पादन डा० माताप्रसाद गुप्त ने निम्नलिखित तीन हस्तलेखों के आधार पर किया है।

१—कला भवन की प्रति काव्य के छ पने भारत कला भवन काशी में है, इन पन्ना के एक ओर काव्य के छन्द हैं और दूसरी ओर क्या से सम्बद्ध चित्र। चित्रों के विषय में डा० वामुदेवचरण अप्रवाल का अनुमान है कि उनकी शैली १५ वीं १६ वीं शताब्दी ईस्वी की है।^४ डा० माताप्रसाद गुप्त ने डा० अप्रवाल के इसी कथन के आधार पर अनुमान किया है कि यह हस्तलेख रचना के सौ वर्ष से अधिक बाद का नहीं होगा।^५ लोरकहा के प्रारम्भिक छ छन्द इसी हस्तलेख के हैं।

२—मनेर शरीफ के खानकाह की प्रति यह प्रति पटना विश्वविद्यालय के अध्यापक सैयद हुसन अस्फरी की मनेर शरीफ खानकाह से प्राप्त हुई थी। इसमें कुल ३२ पने हैं। प्रति में प्रारम्भिक १४३ पने तथा १७८ के बाद के पने नहीं हैं, बीच में भी एकाध पने गायब हैं। लिपि पारसी है। डा० गुप्त

१ लोरकहा-क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा विश्व०, १९६२ ई०

२ चन्दायन—प्रकाशक—वही

३ चन्दायन, हिन्दी प्रयत्नकार (प्राइवट) लिमिटेड, बम्बई, १९६४ ई०।

४ पृष्ठ २, भूमिका, लोरकहा।

५ पृष्ठ ३, वही

के अनुसार 'असम्भव नहीं कि (प्रति) सोलहवीं सत्रहवीं शताब्दी की है ।'^१

३—शिमला सप्रहालय की प्रतियाँ शिमला सप्रहालय में रचना की दो प्रतियाँ सुरक्षित हैं । एक प्रति में ६ पन्ने और दूसरी में केवल १ पन्ना है । इन पन्नों पर भी कलाभवन की प्रति की भाँति एक ओर काव्य है और दूसरी ओर कथानक से सम्बद्ध चित्र है । ६ पन्ने वाली प्रति की लिपि अरबी है और १ पन्ने वाली प्रति की फारसी । डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार चित्रों की शैली १५ वाँ शताब्दी की है ।^२ लोरकहा के छन्द क्र० ७० से ७६ इन्हो प्रतियों पर आधारित है ।

इनके अतिरिक्त भोपाल प्रति के दो पृष्ठों के फोटोग्राफ भी डा० गुप्त को भोपाल आर्कियोलॉजिकल विभाग के सुपरिंटेंडेंट डा० तैमूरी से प्राप्त हो गए थे । इनमें से एक बन्द सो कलाभवन की प्रति में ज्यो का त्यो मिलता है और एक लोरकहा का अन्तिम (८०वाँ) बन्द है । इस प्रति में भी कुछ चित्र हैं जो सम्पादक के अनुसार १५ वीं १६वीं शताब्दी के लगते हैं ।^३

२६ चदायन (च)

डॉ० माताप्रसाद गुप्त को लो० क० का सम्पादन करते समय भोपाल प्रति के दो ही बन्द प्राप्त हो सके थे । बाद में डा० विश्वनाथ प्रसाद ने उस प्रति को डा० मोतीचन्द जी के माध्यम से प्राप्त कर लिया । डा० प्रसाद ने काव्य का सम्पादन उसी प्रति के आधार पर किया है । उनके अनुसार काव्य का नाम चदायन है न कि लोरकहा ।^४ भोपाल वाली प्रति के कुछ बन्द मनेरशरीफ शिमले और कलाभवन की प्रतियों में भी मिल जाते हैं । डा० विश्वनाथ प्रसाद ने ऐने स्यलो का निर्देश यथास्थान कर दिया है ।

३० चदायन [च(प)]

चदायन नाम से ही इस काव्य का सम्पादन डा० परमश्वरी लाल गुप्त ने भी किया है । डॉ० गुप्त ने परिधमपूर्वक काव्य को माइक्रोफ़िल्म मैनचेस्टर के जान रीलेण्ड्स पुस्तकालय से प्राप्त की । इसका अतिरिक्त उन्होंने अमेरिका निवासी फेसिस होफर के सग्रह से उससे दो पृष्ठ प्राप्त किए । इसका अतिरिक्त पटियाले के

१ भूमिका, लोरकहा ।

२ वही ।

३ पृष्ठ, ४, वही ।

४ पृष्ठ ४, प्रस्तावना, चदायन, स० डॉ० विदनाथ प्रसाद ।

पंजाब राजकीय संग्रहालय में सुरक्षित १० चित्रों की दूसरी और फारसी लिपि में लिखा हुआ काव्य का कुछ अंश डा० परमेश्वरलाल गुप्त को उपलब्ध हो गया जिसका उपयोग उन्होंने सम्पादन में किया।

१ इस प्रकार हिंदी के पाठको के सम्मुख दाऊद की रचना के तीन सम्पादित स्वरूप विद्यमान हैं। लोरकहा और चदायन (च) में काव्य के कथानक का कोई निश्चित स्वरूप नहीं उभरता क्योंकि जिन हस्तलेखों के आधार पर इनका सम्पादन किया गया है उनमें प्राप्त छंद कथानक की दृष्टि से क्रमबद्ध नहीं मिले हैं। डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त द्वारा सम्पादित चदायन में कथानक की क्रमबद्धता है। अतः च (च) में काव्य के कथानक का स्पष्ट रूप हमें देखने को मिलता है। यद्यपि उसमें भी अंतिम अंश अप्राप्त है।

३१ काव्य का नाम

ऊपर प्रसंगत इस बात का उल्लेख हो गया है कि डा० माताप्रसाद गुप्त ने दाऊद की रचना को 'लार कहा' और डा० विश्वनाथ प्रसाद तथा डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने 'चदायन' कहना उचित समझा है।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने इस काव्य को 'लोर कहा' निम्नलिखित अर्धाली के आधार पर कहा है—

तोर (लोर) कहा मइ यहि खड गाउ (गावउ)

क्या काव कह लोग मुनाऊ (मुनावउ) ।^१

मनेर शरीफ के हस्तलेख में यह अर्धाली स्पष्ट नहीं है। देखने में एक नुस्खा दिया गया है।^२ ऐसी स्थिति में इसे नूर कहा पढ़ा जाना चाहिए था। किंतु फारसी हस्तलेखों में नुस्खों के नियम का पालन पूर्णतः नहीं हो पाता है। इस बात को ध्यान में रख कर इसे 'लोर कहा' भी पढ़ा जा सकता है। डॉ० विश्वनाथ प्रसाद और डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने उसे तोर कहा पढ़ा है। किंतु डॉ० माताप्रसाद गुप्त नुबत को सम्भवतः लिपिकार का प्रसाद मानकर इसे 'लोर कहा' पढ़ना ठीक समझा है। और काव्य को लार कहा कहा है।

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने इस नामकरण का खंडन करते हुए अनेक प्रमाणों के आधार पर^३ और परमेश्वरी लाल गुप्त ने हिंदी साहित्य के इतिहासकारों

१ पृष्ठ १०० व०

२ पृष्ठ ३, प्रस्तावना चदायन स० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, पर दी हुई फोटोग्राफ प्रतिलिपि।

३ पृष्ठ ३६, वही।

और मुन्तलबउतवारीश तथा रामपुर और बीकानेर के हस्तलेखों^१ का हवाला देते हुए काव्य को 'चंदायन' कहना उचित समझा है।

इसमें सन्देह नहीं कि ऐसे उल्लेख पर्याप्त सख्या में मिलते हैं जिनमें सारिक और चंदा की प्रेम कथा पर आधारित इस काव्य को चंदायन कहा गया है। किन्तु रचना में काव्य के नाम का उल्लेख नहीं मिलता। डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने अवश्य एक ऐसे स्थल का निर्देश चं० की प्रस्तावना में किया है। उन्होंने मनेर शरीफ की उक्त अर्धाली वाले छन्द की एक अर्ध अर्धाली उद्धृत की है और लिखा है कि इसमें दाऊद कवि की रचना को चंदा कहा गया है^२ —

दाऊद कवि जो चादा गाई

जैइ रे सुना सो गा मुरभाई ।

डॉ० प्रसाद ने लिखा है कि 'इसमें चांदा या 'चंदायन' नाम का ही उल्लेख है। इससे स्पष्ट विदित होता है कि दाऊद कवि ने जिस ग्रंथ की रचना की थी उसका नाम 'चांदा' या 'चंदायन' ही था।^३

यहाँ 'चांदा' को दाऊद की रचना का नाम समझना उचित नहीं प्रतीत होता। दाऊद की रचना को 'चादा' अर्थात् कही नहीं कहा गया है। 'चांदा' का अभिप्राय यहाँ 'चांदा की प्रेमकथा अधिक उपयुक्त लगता है। चं० (१) में इस प्रेमकथा या उससे सम्बद्ध गान विशेष के लिए 'चंदरावल शब्द का प्रयोग मिलता है।^४ गोवर छोड़ने के पश्चात् चादा के रूप को देखने के कारण उभक्त बने हुए बाजिर ने रूपचंद की नगरी में पहुँच कर एक सुहानी रात में तार ठोक कर 'चंदरावल गाया जिससे पूरा नगर झकृत हो उठा —

तिहँ रात सुहावन बाजिर ठोका तार

गाइ गीत चंदरावल नगर भयउ झनकार । ७१ चं० (१)

राजा नेमी ने यह गीत सुना और बाजिर को बुलाकर उससे फिर वही गीत गाने का अनुरोध करते हुए कहा कि आज रात तूने जो गाया उस चंदरावल से मेरे मन में लहरें उठने लगी —

आज रात निसहँ तैं गावा

चंदरावल मन रहरा लावा । ७२ चं० (१)

१ पृष्ठ २० २१, परिचय, चंदायन, स० डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ।

२ पृ० ५, प्रस्तावना, चं०

३ वही ।

४ ७१, चं० (१) ।

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने प्रस्तावना में लिखा है कि लोरक चदा की लोक-कथा भोजपुरी प्रदेश में बहुत प्रचलित है। वहाँ इसके लिये लोरिकायन, लोरिकी, चनेनी आदि नाम ही व्यवहृत होते हैं।^१ 'चाँदा' और 'चदरावल' को भी इन्हीं लोक प्रचलित नामों की श्रेणी में मानना उचित है। लारिक, लोरिकायन, चाँदा, चन्दरावल, चनेनी—ये सभी लोरिक और चादा की प्रेम कथा पर आधारित गान या नृत्य के नाम प्रतीत होते हैं। 'वण रत्नाकर' में उल्लिखित 'लोरिक नाचो' इस अनुमान की पुष्टि करता है।

'मुत्सबउत्तवारीख' में दाऊद द्वारा रचित काव्य का नाम 'चदावन' दिया हुआ है।^२ सम्भवत दो नुक्ता की जगह एक ही नुक्त के कारण 'चदावन' या 'चदावत' को चदावन पढ़ लिया गया है। सम्भवत सूफ़ी कवियों द्वारा रचित अन्य कई काव्यों की—पद्मावत, मिरगावत—की भाँति इस काव्य का नाम भी वतान्त था। मुझे दो मुसलमान सज्जन ऐसे मिले हैं जो दाऊद की रचना को 'चदावत' के ही नाम से जानते हैं।^३ लारिकायन, लोरिकी, लोरकहा, चनेनी या चदायन लोक प्रचलित नाम प्रतीत होते हैं, और चन्दावत सूफ़ी काव्यों की परम्परा में प्रचलित नाम।

३२ कवि और रचनाकाल

काव्य में कई स्थानों पर दाऊद का उल्लेख रचनाकार के रूप में हुआ है—

ब (फि) रके चादा जूमि उपावा ।

भई जूमि जस दाऊद गावा । ५७ च०

सिराजदीन जो खमद (खामिन) दाऊद कहे सवारि । २५ च०

दाऊद कवि जो चादा गाई । ५६ लो० क०

मुत्सबउत्तवारीख के अनुसार ७७२ हिजरी (सन १३७० ई०) में मलिक मजबूल के जिसकी उपाधि खानजहाँ थी, मरने के बाद उसके पुत्र जूनाशाह को भी वही उपाधि मिली। उसके नाम से मौलाना दाऊद ने हिंदवी जवान में

१ पृ० ५, प्रस्तावना ख० ।

२ पृ० ३३३, प्रथम भाग, अप्रेजी अनुवाक, रेकिंग, १८६८ ई०

३ इन दो सज्जनों के नाम और पते निम्नलिखित हैं —

(१) डॉ० खलीक अजुम, अध्यापक, उर्दू विभाग, करोड़ीमल कालेज, दिल्ली ।

(२) श्री अरुण, 'दोष छात्र', हिंदी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ ।

सोरिक और चादा नाम के प्रेमी और प्रेमिका की कथा पर आधारित 'ब दाऊन' की रचना की।^१

इसमें प्रकट होता है कि दाऊन मौलाना के ओर उठेने इस काव्य की रचना हि० ७७२ के बाद की थी। रायबरेली जिले और अवध सूबे के गजेटियरों में उस उल्लेख की खर्चा ऊपर हो चुकी है, जिसमें उह फीरोज शाह तुगलक द्वारा स्थापित धार्मिक विद्यालय से सम्बद्ध बताया गया है। वदाऊनी द्वारा उल्लिखित खानजहाँ जूनागाह की प्रशंसा दाऊन ने अपनी रचना में इस प्रकार की है —

मान जहाँ खरि जुग जुग खानो । अति नागर बुधवन्त त्रिनानो
चतुर मुजान भाख सब जाना । स्पवत मन्तरी मुजाना
एक खम्म मन्निन कह कीहा । डोल परे जो होत न दीहा
थकै परे लोग चढावइ । कर गुन सीचि तीर तइ लावइ
हिंदू तुरक दुहूँ सम राखे । सत जो होइ दुइ कह भाखे
गठव सिंह एक पथ रेंगावइ । एक घाट दुहूँ पानी पिवावइ
एक दीठि देखइ सैसाह । अचल न चलै चले बेवहारु

मेरु धरनि अस भारतन जग भारतन सस्थार

खानजहानहु कौन बढ़ाई बड जो कीहि करतार

—११, १२ च० (१)

प्रशंसित मन्त्री खानजहाँ जिनके सम्मान में दाऊन ने रचना की थी, दाऊन के आश्रयदाता भाखूम पडते हैं। डा० विश्वनाथ पसाद का यह अनुमान ठीक लगता है कि 'खानजहाँ' की ऐसी प्रशंसा है जो किसी आश्रयदाता की ही हो सकती है।^२

दाऊन ने शाहेबकत के रूप में दिल्ली के सुल्तान फीरोजशाह की प्रशंसा की है। इसी के साथ साथ कवि ने काव्य का रचनाकाल दिया है और डलमऊ नगर का वणन किया है—

वरिस सात सै होइ इक्यासी । तिहि जाह कवि सरसेउ भासो
साहि फीरोज दिल्ली मुलतानू । जीना साहि बजीर बखानू
डलमऊ नगर बसे नवरगा । ऊपर कोट तले बहि गगा ।

—१७ च० (१)

१ पृ० ३३३, मुन्तखबउतवारीख ।

२ पृ० ११, प्रस्तावना, च०

इस वद से प्रकट होता है कि ७८१ हि० (१३७६ ई०) में कवि ने इस सरस काव्य की रचना की। उस समय दिल्ली की गद्दी पर फीरोजशाह (तुगलक) विद्यमान था। जूनाशाह उसका बजोर था। कवि ने काव्य की रचना बलमऊ में की जो गंगा के किनारे स्थित था। मुतखरउततवारोख क अनुसार ७७२ हि० में खानेजहा बजोर को मृत्यु के बाद जूनाशाह खानेजहा की उपाधि और मन्त्रि पद से विभूषित हुआ और उसके सम्मान में दाऊद ने हिन्दवी जवान में च'दावत की रचना की। इस वद से मुतखरउततवारोख के उल्लेख की पुष्टि हो जाती है। जूनाशाह के शासनकाल के ६ वें वर्ष काव्य की रचना हुई।

एक वद में कवि ने शेर्य जननी को अपना पथ प्रदशक कहा है।^१ जिसे प्रकट होता है कि शेर्य जननी दाऊद के गुरु थे। डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने लिखा है कि शेर्य जननी से कवि का तात्पर्य शेर्य जननीन से है जो सुप्रसिद्ध धिदती सत हजरत नसीरुद्दीन अवधी चिराग ए दिल्ली की बड़ी बहन के बेटे थे।^२ काव्य में प्रसंगत मलिक मुबारक, मलिक वया, नयन, सिराजुद्दीन और मोर ममूद के नाम आए हैं, जो कवि के जीवन पर कोई विशेष प्रकाश नहीं डालते।^३

३३ काव्य की भाषा

इस काव्य की भाषा का सम्यक् विवेचन तो आगे किया जाएगा, किन्तु यहाँ इसकी भाषा के विषय में मोटे तौर पर कुछ विचार कर लेना आवश्यक है क्योंकि दाऊद के काव्य की भाषा के विषय में विद्वान सपादका में पर्याप्त मतभेद है। डा० माता प्रसाद गुप्त 'लोरकहा' की भाषा को अवधी और ठेठ अवधी कहते हैं।^४ जबकि डा० विश्वनाथ प्रसाद उसमें खड़ी बोली, अवधी, ब्रजभाषा इन सबका सम्मिश्रित रूप पाते हैं।^५ डा० परमेश्वरीलाल गुप्त के अनुसार च'दायन का भाषा को अवधी के सीमित प्रदेश में ही बोली और समझी जाने वाली भाषा अवधी का नाम नहीं दिया जा सकता।^६ डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने इस विषय में तनिक विस्तार से विचार किया है तथा उक्ति व्यक्ति प्रकरण और राजलक्ष्मी की भाषा का उदाहरण देकर दिखाया है कि 'दाऊद ने

१ ६। च० (५)

२ पृ० २०, परिचय स० (५०)

३ पृ० १३, १७, ३६०, च० (५०) २५, २५। च०

४ पृ० ६, भूमिका लो० व०

५ पृ० १४, प्रस्तावना च०

६ पृ० ३२, परिचय, च० (५)

अपने काव्य के लिए ऐसी भाषा को अपनाया था जो अगघ्न या साहित्य की पारंपरिक परम्परा से विचलित होकर व्यापक रूप से देश के विस्तृत भू-भाग में प्रचलित थी।^१ हास्य यह कि चंदायन की भाषा के विषय में डॉ० निरवनाथ प्रसाद और डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त के विचार लगभग समान हैं। उनके अनुसार चंदायन की भाषा का रूप मिश्रित है।

जिसी श्रुति की भाषा का निष्पन्न विवेचन के आधार पर होना चाहिए न कि इस बात पर कि उसका प्रचार कहीं था? डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त ने डॉ० श्याम मनोहर पाण्डेय के इस तर्क की, कि दाऊ ने डलमऊ में रह कर अवधी में रचना की है क्योंकि डलमऊ अवधी क्षेत्र में पड़ता है, वादत हुए लिखा है कि अब्दुल कादिर बदायूनी ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि 'चंदायन' दिल्ली सल्तनत के प्रधान मंत्री जूनाशाह के सम्मान में रचा गया था और दिल्ली में महमूद खेज तकीउद्दीन ख्वाजी जन समाज के बीच उसका पाठ किया करते थे। यह कथन इस बात की ओर संकेत करता है कि चंदायन की भाषा वह भाषा है जिसे दिल्ली के प्रधान मंत्री जूनाशाह से लेकर दिल्ली की सामान्य जनता तक पढ़ और समझ सकती थी।^२ डॉ० परमेश्वरी लाल का मन्तव्य है कि (१) चूंकि जूनाशाह दिल्ली के सुल्तान का प्रधानमंत्री था इसलिये वह अवधी न जानता रहा होगा और इसलिये दाऊ ने अवधी रचना न की होगी। डॉ० गुप्त के मन में सम्भवतः यह बात बसी है कि जिस शक्ति के सम्मान में जो रचना की जाती है उसकी भाषा वही हो सकती है जो सम्मानित व्यक्ति की होती है। स्पष्ट ही यह धारणा अपुष्ट है। (२) चूंकि दिल्ली के जन समाज में इसका पाठ होता था और लोग इसमें प्रभावित होते थे इसलिये यह दिल्ली की भाषा रही होगी। इस तर्क के आधार पर रामचरितमानस और मूरसागर की भी भाषा दिल्ली की होनी चाहिए क्योंकि दिल्ली के लोग उसे समझते और उससे प्रभावित होते हैं।

डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त का इससे भी अधिक भ्रामक वक्तव्य अवधी और छत्तीसगढ़ी के पारस्परिक सम्बंध के विषय में है। डॉ० गुप्त के शब्दों में 'श्याम मनोहर पाण्डेय की यह धारणा कि दक्षिण कोसली अवधी का एक पूर्व रूप है, भाषा विज्ञान और इतिहास दोनों दृष्टियां से अज्ञता का परिचायक और हास्यास्पद है। प्राचीन इतिहास में दक्षिण कोसल उस प्रदेश का नाम है जो आजकल

१ पृ० ३५, वही।

२ पृ० ३२, वही।

छत्तीसगढ़ के नाम से अभिहित किया जाता है। छत्तीसगढ़ी भाषा का अवधो के साथ किसी प्रकार का नेकत्व है, यह कहना बठिन है।^१
छत्तीसगढ़ी और अवधो में 'किसी प्रकार का नेकत्व' के सम्बन्ध में हम प्रियसन का मत उद्धृत कर देना पर्याप्त समझते हैं—

'पूर्वी हिन्दी को तीना बोनियाँ (अवधो, बघेली, छत्तीसगढ़ी) एक दूसरो से अपेक्षित मिनती जुलती ह। वास्तव में बघेली तथा अवधो में इतना कम अन्तर है कि यदि पूर्व विभाषा के रूप में बघेली का अस्तित्व जनता में स्वीकृत न होता तो मैं इस अवधो की ही एक बोली मानता। छत्तीसगढ़ी पड़ोसी को मराठी तथा उड़िया भाषाया के प्रभाव के कारण पर्याप्त अन्तर प्रदर्शित करती है किन्तु अवधो से इसका निम्न सम्बन्ध स्पष्ट है।^२

अवधो और छत्तीसगढ़ी की निकटता के सम्बन्ध में डा० धीरेन्द्र वर्मा की पुस्तिका ग्रामीण हिन्दी भी डा० परमेश्वरीलाल गुप्त की पर्याप्त सहायता कर सकती थी। ग्रामीण हिन्दी का व्याकरण तालिका में डा० वर्मा ने अवधो और छत्तीसगढ़ी रूपों को एक ही दोषक 'अवधो छत्तीसगढ़ी' के अंतर्गत दिखाया है।^३

डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने चर्चायन और उक्ति-व्यक्ति प्रकरण की भाषा में असमानता दिखाने का जो प्रयास किया है वह भी दोषपूर्ण प्रतीत होता है। उक्ति व्यक्ति की भाषा अवधो की पूरना भाषा का प्रतिनिधित्व करती है किन्तु वह सम्पूर्ण अवधो क्षेत्र को तत्कालीन भाषा का पूण रूप नहीं प्रस्तुत करती। इसके अतिरिक्त वह जन बोली का रूप प्रस्तुत करती है काव्य भाषा का नहीं। मनो रञ्जक बात तो यह है कि चर्चायन और उक्ति-व्यक्ति की भाषा में जो असमानता सूचक तानिकार्ये प्रस्तुत की गई है उनमें कई समान हैं। अन्तर केवल यह है कि चर्चायन में रूपों की संख्या उक्ति-व्यक्ति से अधिक है।^४

चर्चायन के 'तिवावा, मरावा, हकरावा जैसे रूप उ होने उक्ति-व्यक्ति के लिए 'देखिसि जने रूपों से भिन्नता प्रकट करने के लिये प्रस्तुत किए हैं।^५

१ पृ० ३५, वही।

२ पृ० २६२, भाग १, भारत का भाषा सर्वेक्षण, १ हिन्दी अनुवाद, अनुवादक उदयनारायण तिवारी, सर जाज प्रियसन, लखनऊ।

३ ग्रामीण हिन्दी डा० धीरेन्द्र वर्मा, इलाहाबाद।

४ देखिए पृ० ३३ च (१)।

५ वही।

हिन्दु अरबी नामों में—य प्रत्ययान्त स्त्री का कितना प्रचलन है यह विद्वानों से पूछा गहरा है—

कतहूँ लख्खु पेसात सात । कतहूँ पार्सह कान नपासा ।

—३१ । पदमात्र

मानि भीं कौज जागु न पासा । ११८ बातल्लह समबलिमानग

इसी प्रकार अरबी के आठव, बतउब जैसे उदात्त पुल, सामान्य अरबी नामों के रूप आया है, जैसा जैसे अरबी के परिचित रूप है^१ हिन्दु हट्टों के जैसे स्त्री के आधार पर डॉ० एरमेन्सरीनाउ गुल अरबी के भाषा को अरबी नहीं मानते ।^२

प्रस्तुत प्रबंध में दाऊद की रचना को अरबी के प्राचीन अरबी मानकर उसे अरबी में सम्मिलित किया गया है ।

१, दे० भविष्य निरुचयाथ, अनुज्ञार्थ रूप १२२, १२४

२ वही ।

मैनासत (मै० स०)

३४ श्री अग्ररघुनाथ नाहटा के अनुसार 'मैनासत' का सर्वप्रथम विवरण सन् १९०२ ई० की खोज रिपोर्ट (नागरी प्रचारिणी सभा काशी की) में छपा है।^१ डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने लिखा है कि 'मैनासत के दो पाठ पहले से प्राप्त थे एक स्वतंत्र रचना के रूप में और दूसरा जो चतुर्भुजदास निगम की मधुमालती के कुछ पाठों में अन्तर्भूत मिलता है।^२ इधर मैनासत के कई संस्करण प्रकाशित हुए हैं—

(१) अनूप सस्कृत लायब्रेरी बोकानेर (लि० का सम्बत् १७२४ वि०) की प्रति का पाठ जो हिंदी विद्यापीठ ग्रन्थ बीथिका में श्री अग्ररघुनाथ नाहटा ने छपाया है।^३

(२) मुनि विनयसागर के संग्रह का पाठ (लि० का० अनात) नाहटा जी ने हिंदी विद्यापीठ ग्रन्थबीथिका में इसे भी प्रकाशित कराया है।^४

(३) मधुमालती में अन्तुभक्त मैनासत के पाठ का संपादन करके श्री हरिहर निवास द्विवेदी ने प्रकाशित कराया है।^५

१ पृ० १०७ मैनासत (साधन) हिंदी विद्यापीठ ग्रन्थ बीथिका, १९५६ ई० आगरा के आधार पर।

२ लोरकहा और मैनासत ले० डॉ० माताप्रसाद गुप्त, भारतीय साहित्य ४२, १९५६, आगरा।

३ मैनासत साधन, पृ० १०७, हिंदी विद्यापीठ ग्रन्थबीथिका, १९५६ ई० आगरा।

४ वही, पृ० ११८।

५ साधनसूत मैनासत, सं० हरिहरनिवास द्विवेदी विद्यामंदिर प्रकाशन, ग्वालियर १९५६ ई०।

(४) आगरे में स० १६३३ वि० में प० सोहा द्वारा उनारी गई मैनासत की प्रति जिस नाहुटा जी ने अवध भारती के सितम्बर—दिसम्बर १९५६ के अंक में प्रकाशित कराया है।^१

मैनासत के और उससे सम्बद्ध काव्या के कई पाठ उपलब्ध हुए हैं जिन पर श्री हरिहरनिवास द्विवेदी ने अपनी पुस्तक साधनवृत्त मैनासत में विचार किया है।^२

श्री द्विवेदी ने मनेर गरीफ की प्रति का न उपयोग किया है और न उसकी सम्यक् विवेचना की है। श्री जगरचंद नाहुटा ने भी मनेर गरीफ की प्रति का कोई उपयोग नहीं किया है। उनके अनुसार (मनेर) खानवाह वाली प्रति शाहजहाँवाली न या उससे पुरानी है।^३

३५ रचना काल—

श्री नाहुटा मैनासत का रचना काल सोलहवीं शती मानते हैं।^४ डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसका रचना काल सम्वत् १५६१ या उसका पूरा माना है।^५ श्री हरिहर निवास द्विवेदी के अनुसार साधन के मैनासत की रचना कभी १४८० ई० के पश्चात् १५०० ई० के पूर्व हुई।^६

पाठ होता है कि मनेर गरीफ वाली प्रति का पूरा विवरण अभी तक विद्वानों को नहीं मिल पाया है। उपलब्ध प्रति का लिपिकाल शाहजहाँ काल या उसके बाद अवश्य है किन्तु जिस प्रति में यह उतारी गई है उसका लिपिकाल १६वीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल है। यह संकेत उनल २ प्रति में मिलता है। मनेर गरीफ की प्रति का विवरण देते हुए श्री हसन अस्फरी ने लिखा है—

इन सबसे कदीमतर ता वह नुस्खा था जिसकी हि० ९११ (१५०५ ई०) में किताबत हुई और जिसकी नकल मनेर गरीफ के मुसुखे के कातिब ने सत्रहवीं सदी में की मैनासत भी बजुद में ९११ हि० के काल आ चुकी थी।^७

१ वही, पृ० १४ के आधार पर।

२ दे० पृ० १३ १४, वही।

३ पृ० १०८, साधन रचित मैनासत, द्विवेदी विद्यापीठ ग्रन्थ कोषिका।

४ वही,

५ वही पृ० १०८ पर उल्लिखित।

६ पृ० ८८, साधनवृत्त मैनासत, स० हरिहरनिवास द्विवेदी।

७ पृ० ८४ ८५ चत्वारण्य जय मुना दत्त और मैनासत अत्र मिया साधन, मजसूर १९६० ई० पटना।

मनेर शरीफ की खानकाह में प्राप्त जिस गुटके में मैनासत का हस्तलिख मिला है उसमें मैनासत के अलावा पदमावत तथा अय कई का यों का सग्रह है। सभी काव्या की प्रतिलिपि १७वीं शताब्दी में किसी एक ही व्यक्ति द्वारा की गई है। लेकिन मैनासत की प्रतिलिपि हि० ६६१ में भी किसी के द्वारा की गई थी और खानकाह में उपलब्ध प्रति उसी की प्रतिलिपि है इसका स्पष्ट संकेत मिल जाता है। श्री अस्करी ने इसका जो विवरण दिया है। वह ज्या का त्या नीचे दिया जा रहा है—

‘मनेरशरीफ का नुस्खा मजमूआ है जो सारा सग्रहवा सन्ने में लिखा गया। इस मजमूआ में दो जगह सन किताबत और कातिब का पता ठिकाना बेढगे तौर पर दज है। वियोगसागर के अरुतमाम पर यह इवारत है—

पाथी वियोग सागर बजवान हिंदवी इसराम गुदह फिन तारीब जुल्काद ६११ हि० मौजा खासतम हुक मलिक बकानू नदातू बार बतारीखे विस्तुम रोजे जुमा जुकी मीनुमाएम।

फिर एक सफे में जायसी की अखरावट के अरुतमाम और साधन की मैनासत के आगाज के दरम्यानी हिस्स में यह इवारत पाई जाती है—

तमामगुद पोथी अखरोती बजवान मलिक मुहम्मद जायसी किताब हिंदवी कातिबु मुल्क कातिब हुरूफ फकीर हकीर मुहम्मद साकिन पट्टा नन्गानू उफ बकानू खास अमला परगना निजामाबाद सरकार जौनपुर सूबाए इलाहाबाद वक्ते जुहर योमे जुमा जुकी शहर जुल्काद ६११ हि० दर मौजा खासदमा मकाम कुवैरह अमला परगना नैतून दरसरकार मस्तूरस्त तहरीर थापन ज्यादह गुफनार इजहार नेस्त।

जाहिर है कि कातिब निहायत कमसवाद था। चूँकि सारा मजमूआ उमो के क़लम का लिखा मालूम होता है और उसमें पन्मावत भी है जो शेरशाह व अहद में मुकम्मन हुई। इसलिये ६११ का सन् किसी दूसरे कातिब का दिया हुआ है। अखरावट जायसी की अवली तमनीफ करार दी जा सकती है। इसका मौजू मुयतलिक और मजहबो है। यकीकन ६११ के कबल लिखी गई। मैनासत भी भारजे बजद में ६११ के कबल आ चुकी थी। एताराज किया जा सकता है कि अहदे अरुवरी के पढ़ने सूजा इलाहाबाद का बजद न था। जौनपुर की सरकार भी बाद की चीज है। पड़याग और इलाहाबाद आगे चन कर इलाहाबाद हो गया। अरुवरी किला की बुनियात रनी गई। एक सूबा करार दिया गया। जाहिर है कि कातिब अरुवली की दी हुई तारीख कातिब दोम के नाम जोर पता

के साथ खल्ल भल्ल हो गई है। मजमूआ तो सत्रहवीं सदी का है।^१

अर्थात् मैनासत की रचना १५०५ ई० के पूर्व कभी हुई होगी। मैनासत के रचयिता माघन के विषय में किसी और स्रोत से कोई प्रामाणिक सूचना अब तक नहीं मिली है। सम्भवतः दाऊद और साघन के कार्यों का रचना काल आस ही पास था।^२

इस अध्ययन में मनोर शरीक की प्रति का उपयोग किया गया है। उसे परिशिष्ट में दे दिया गया है।

१ पृ० ८५, वही।

२ दृष्टव्य—सोरकहा और मैनासत डॉ० माताप्रसाद गुप्त, भारतीय साहित्य, वर्ष ४, अंक २, १९५६ ई०, आगरा।

राम जन्म (रा० ज०)

३६ 'सत्यवती कथा' के लेखक ईश्वरदास ने अपनी एक अन्य रचना 'स्वर्गा रोहिणी' में जिन पूर्ववर्ती कवियों का नामोन्लेख किया है, उनमें से एक सूरजदास हैं।^१ उन्हें 'सीतापद' का गायक कहा गया है। सूरजदास की सूचना नागरी प्रचारिणी सभा काशी की खोज रिपोर्टों में मिलती है।^२ द्वादश त्रैवापिक विवरण में जिस हस्तलिखित प्रति की सूचना दी गई है, उसका लिपिकाल स० १८८६ है और त्रयोदश त्रैवापिक विवरण में उल्लिखित प्रति का लिपिकाल स० १९०९ है। पहली प्रति पूण है और दूसरी प्रति के प्रारम्भिक ५ पृष्ठ नहीं हैं।

मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के शोध विद्यार्थी श्री गोविन्द जी के पास सूरजदास की इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति देखने को मिली है। प्रति अपूण है और उसके लिपिकाल का पता नहीं चलता। किंतु देखने से प्रति काफी प्राचीन मालूम होती है। लिपि कैथी है।^३ खोज रिपोर्ट में जो विवरण प्राप्त होते हैं

-
- १ व्यास बाल मुनि बुधि के साका, खड अठारह आगम भाखा
कालिदास अमरपद कीहा, लखनसेनि पडित कवि कीहा
तिन्हू के बस जो भयेउ हकारा। कंस बध जिहू कीन्हू रसारा
सूरजदास सीता पद गायो, ऊखाप्रब हरिसिध देव गायो
—पृ० १३९ स्वर्गारोहिणी कथा, ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य
कृतियाँ, विद्यामंदिर प्रकाशन, ग्वालियर ५८।
- २ (क) स० ४१७ (सी) हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथों की द्वादश त्रैवापिक खोज
रिपोर्ट १९२३, २५ ई० की खण्ड प्रथम, नागरी प्र० पत्रिका, काशी
(अग्रणी में)।
(ख) ४७३ की खोज में उपलब्ध हिन्दी ग्रंथों का त्रयोदश त्रैवापिक विवरण
सन् १९२६ २८ ई० ना० प्र० पत्रिका काशी।
- ३ प्राप्ति स्थान श्री गोविन्द जी, ६८ रामबाग, इलाहाबाद।

उत्तम पत्रा भाग्य है कि तीरी रचना में एक ही है । ईश्वरदास आगे समय के गीत
 विषय कवि भाग पड़ते हैं । ईश्वरदास ने त्रिगो पुराणी कविता का उद्देश्य दिया
 है उद्योग 'रघुनाथ' इमी कारण मिला होगा । समय का वह अतिरिक्त इसके
 नाम से 'रघुनाथ' कथा और गीत की मादृश रचनाओं मिला है त्रिगो
 विवरण नागरी प्रचारिणी मण्डल कागी की गीत दियो ' में मिला है ।'

ईश्वरदास द्वारा रचित कथाओं को नाम 'भरत विद्या' में कहा
 कहा 'गूरदास' का नाम मिला है त्रिगो इस कथा के रचयिता के विषय में
 कुछ उद्योग ही मिला है ।' जो उद्योग 'भरत' के गीत भरत विद्या को गूरदास
 दास की रचना मानने के पाले है ।' उद्योगी मगध और 'भरत विद्या'
 को जो अतिरिक्त मिला है उद्योग परस्पर साम्य है जो त्रिगु रचनाकार का नाम में
 दियो में ईश्वरदास का नाम मिला है त्रिगो म गूरदास का नाम मिला है त्रिगो
 में गूरदास का और त्रिगो त्रिगो में तो तुलना मिला है ।' ऐसी स्थिति में इन
 रचनाओं को गूरदास द्वारा रचित मानना सारे म मिला नहीं है ।

सौभाग्य 'राम नाम' में ऐसी स्थिति नहीं है । 'राम नाम' में गूरदास
 के अतिरिक्त और त्रिगो का नाम नहीं मिलता । अतः रामनाम गूरदास
 दास का ही त्रिगो हुआ है इसमें कोई संदेह नहीं रहता ।

३७ गूरदास ने रामनाम में रघुनाथ का कोई उद्योग नहीं दिया है ।
 त्रिगु भाषाणी में वे ईश्वरदास का भाषण के कवि मान्य पड़ते हैं । कवि ने
 रामनाम का गायक कवि का रूप में वास्तविकता का उद्योग दिया है ।' त्रिगु
 तुलसीदास का त्रिगो । रामनाम पर भाषारि का म्य रचने वाले कवि के रूप में

१ पृ० संख्या ४१७, द्विती हस्तलिखित कथा का दास्य प्रचारिण सोज
 रिपोर्ट, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, कागी ।

२ देखिए—पृ० १०७ परिशिष्ट ईश्वरदास का सायबजी कथा तथा अन्य
 कृतियाँ ।

३ पृ० ७३, ईश्वरदास या गूरदास नागरी प्रचारिणी पत्रिका, कागी पृ०
 ६१, अंक १, सं० २०१३ ।

४ वही ।

१ वाल्मीकि रामायण भाषा० लीनि भुवन जे भरि पुर राता ।

२ पृ० ७० ।

प्रारम्भिक अवर्षा के अध्ययन की सामग्री

तुलसी की उपेक्षा करना किमी के लिए असम्भव है। इसमें प्रकट होता है कि रामजन्म की रचना तुलसीदास ने पूव हुई थी। और ये सूरजनास ईश्वरनाम द्वारा स्मृत सीता पद प्रति (?) के गायक सूरदास से अभिन्न है।

रामजन्म का प्राप्त अक्षर जिसका अध्ययन किया गया है, परिशिष्ट में दे दिया गया है।

सत्यवती कथा (स० क०) और स्वर्गारोहिणी* (स्वर्ग०)

३८ यद्यपि हिंदी साहित्य के विद्वानों और इतिहासकारों को ईश्वरदास और उनकी सत्यवती कथा का परिचय पहले से था किंतु पूरा रचना का प्रकाशन १९३७ ई० की 'हिंदुस्तानी' के जनवरी अंक में हुआ। उसी पत्रिका में इसके पूर्व के अंक (अक्टूबर, १९३६ ई०) में लाला सीताराम बी० ए० ने 'सत्यवती कथा' पर एक नोट लिखा था। 'सत्यवती कथा' उहा के संग्रह से 'हिंदुस्तानी' में प्रकाशित की गई थी।

लालाजी का नोट संक्षिप्त था किंतु उन्होंने उसमें सत्यवती कथा के लेखक, रचनाकाल और उसकी भाषा के विषय में महत्वपूर्ण सूचनाएँ दी थी। उन्होंने सत्यवती 'कथा का रचनाकाल सवत् १५५८ भादो सुदी ६ दिन मंगल मेष राशि के अश्विनी नक्षत्र में जब चंद्रमा थे माना 'उस समय मुलानान सिकंदर (लोदी) बादशाह था।' उनके अनुसार 'इस व्योरे के साथ किसी बिरले ही ग्रथ का रचनाकाल लिखा गया होगा। सिकंदर लोदी अपने पिता बहलोल लोदी के मरने पर दिल्ली के तख्त पर बैठा और अठारह वर्ष राज्य करके सवत् १५७४ में मर गया। इससे यह सिकंदर लोदी ही हो सकता है, सिकंदर सूर नहीं।'^१

३९ रचना का स्थान और 'सत्यवती कथा' की भाषा पर विचार करते हुए लाला जी ने आगे लिखा है 'दूसरी बात इस ग्रथ के रचने का स्थान है।' दिल्ली बढ़याना से हम तो यही अनुमान करेंगे कि यह काथ्य दिल्ली में रचा गया।

१ अक्टूबर १९३६ 'हिंदुस्तानी' में लाला सीताराम बी० ए० की सत्यवती कथा' पर टिप्पणी।

* ईश्वरदास वृत्त 'सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ, स० डा० शिवगोपाल मिश्र रावत ओमप्रकाश सिंह, विद्यामंदिर प्रकाशन (ग्वालियर) १९५८।

यद्यपि यह कहा जा सकता है कि उस समय दिल्ली में सिकंदर बादशाह था। 'परन्तु दिल्ली बढयाना लिखने का कोई विशेष प्रयोजन न रह जाएगा। लोदी वंश का मूल स्थान जौनपुर है इसमें सम्भव है कि लोदी राजवंश के साथ कुछ जौनपुर के रहने वाले कमबारी भी दिल्ली चले गये हों। उन्हीं में से ईश्वरदास भी था। इसी कारण इस काव्य की भाषा अवधी है।'^१ लाला जी के अनुसार—

१—'सत्यवती कथा' सम्भवतः १५१८ वि० में रची गई थी।

२—उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सुलतान सिकंदर लोदी आसीन था।

३—काव्य दिल्ली में रचा गया था, अर्थात् रचना काल में ईश्वरदास दिल्ली में रहते थे। और

४—'सत्यवती कथा' की भाषा अवधी है।

अथवा रचनाकाल कवि ने दे दिया है अतः उस पर विवाद का कोई अवकाश नहीं है, इसी प्रकार उस समय दिल्ली में सिकंदर लोदी सिंहासनासीन था, यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है। जहाँ तक दिल्ली की रचना स्थान मानने का प्रश्न है लालाजी का आधार यह अर्धाली है—

जोगिनीपुर दिल्ली बढयान

साह सिकंदर बड सुलतान । ५ । स० क० ।

लालाजी के अतिरिक्त श्री हरिहर निवास द्विवेदी भी 'सत्यवती कथा' को दिल्ली में रचित मानते हैं।^२ लेकिन इस काव्य को दिल्ली में रचित मानने से यह प्रश्न सामने आता है कि एक दिल्ली वासी कवि ने अवधी में काव्य रचना क्यों की? लालाजी और श्री द्विवेदी दोनों ने इस प्रश्न का उत्तर देने के निमित्त यह अनुमान किया है कि ईश्वरदास रहने वाले जौनपुर अवध प्रदेश के थे किन्तु कालांतर में दिल्ली आ गए थे।^३ इन विद्वानों के ध्यान में यह बात नहीं आई कि कवि दिल्ली का नामोल्लेख छांदबक्क के सम्भ्रम में कर रहा है और इन पंक्तियों में वह अपनी रचना का स्थान नहीं बता रहा है। यह बात एकाधिक प्रेम गायानपरक

१ वही।

२ 'यह भी सम्भव है कि जिस प्रकार मानिक अवध से ग्वालियर आया था उसी प्रकार ईश्वरदास अवध से लिखा गए हों।

पृ० १३, प्रस्तावना ईश्वरदास वृत्त सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

३ दे० अक्तूबर, १९३१, हिंदुस्तानी में सत्यवती कथा पर लालाजी की टिप्पणी तथा सप्तम क्रमांक ३।

थाय्या के रचयिता कविया के उदाहरण में प्रमाणित की जा सकती है। जायसी जायस क रहने वाले के और उ हने पचावन की रचना जायस में की थी—

जायस नगर धरम अस्यानू तहरा यह कवि कीद रखातू ।

—२३ पचावत

शत्रु साहेबकत शेरसाह की वदना करते समय के शिल्लो का उल्लेख करते हैं।

शरसाहि दिहो मुल्तानू । १३ पचावत

मौलाना दाऊद खनमई के शत्रु साहेबकत कीरोडागाह का प्रशंसा करते हुए उन्होंने शिल्लो का उल्लेख किया है।

साहि किरोज शिल्लो मुल्तानू । १७ च० (५)

इसी भाँति ईश्वरदास ने भी सिकन्दर साह की प्रशंसा करते हुए दिल्ली का उल्लेख किया है। सोभाग्यवश ईश्वरदास की एक अन्य रचना 'स्वर्गारोहिणी' भी मिल गई है, जिसमें कवि ने अपने पूजना का परिचय दिया है। स्वर्गारोहिणी की रचना उन्होंने 'सत्यवती कथा' के एक रूप पूर्व की थी।^१ इस रचना में भी 'साहि सिकन्दर और 'जोगिनीपुर दिल्ली' का उल्लेख प्रायः सत्यवती कथा की भाँति किया गया है।^२ साटवकत की वदना करने के उपरान्त कवि अपने पूजनों का वषण करते हुए कहता है कि जम्बूद्वीप में कागी है जहाँ अनेक तीर्थ हैं और जहाँ धम की राशि है। हमारे पूजक वहाँ बसत थे। वहाँ गोंगी नामक खरे पड़ित थे। बाद में वे गाजीपुर परगने में स्थित तिलक सिंह के मण्डल (इलाके) में बस गए।^३ गाजीपुर में अपने पूजों के बस जाने के बाद कवि उनके या अपने अग्र बसने का उल्लेख नहीं करता जिससे प्रकट होता है कि कवि गाजीपुर का ही रहने वाला था। 'सत्यवती कथा' की भाषा को देखने से भी यह बात पारत होती है कि कवि पूर्वी अवधी प्रदेश या पश्चिमी भोजपुरी प्रदेश का रहने वाला है। सत्यवती कथा की भाषा पूर्वी अवधी तो है ही उसमें एकाध

१ सवत के अब करों बखाना, पदरह स सहावत जान () । ६ स्वर्गा०

२ सवत के अब करों बखाना, पद से सत्तावन जान ()

चैत मास पच्छ उजियारा, तिथि पचमी सोम की बारा
न छत्र रैवनी मीन क चदा, सोत सतो मोहि भयो अनदा
जोगिनि पुर दिल्ली बड घाना, साहि सिकन्दर भे सुलिताना
तेहि दिन कथा अरम्भन कीहा रामचन्द्र मोहि सुधि उधि दो हा ।

—६ स्वर्गा०

भोजपुरी प्रयोग भी मिल जाते हैं।^१ ऐसी स्थिति में हमें 'सत्यवती कथा' का रचना स्थान दिल्ली मानने और फिर स्थान से रचना को भाषा की सगति बिठाने के लिए काँव के अवयव में दिल्ली जाने का अनुमान करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। दिल्ली का उल्लेख कवि ने रचना स्थान के रूप में नहीं बल्कि सिक्दर लोदो की राजधानी के रूप में किया था। कवि ने 'सत्यवती कथा' की रचना गाजीपुर में की थी।

४० अथ रचनाएँ—

'सत्यवती कथा' के संपादक डा० शिव गोपाल मिश्र को एकडला ग्राम में 'सत्यवती कथा' के अतिरिक्त ईश्वर दास की तीन अन्य रचनाओं के भी हस्तलेख प्राप्त हुए थे। उन्होंने, 'सत्यवती कथा' के साथ उन्हें भी प्रकाशित करवा दिया है।^२ नीचे उन रचनाओं पर विचार किया जा रहा है।

४१ भरत मिलाप—

उनमें से एक रचना का नाम भरत मिलाप है। यह रामवन गमन के उपरांत भरत का निहाल में लौटकर दुःखित होना तथा चित्रकूट में राम से मिलने की कथा पर आधारित है। इस ग्रंथ की सूचना खात्र रिपोर्ट १९०३ ई० (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी) में भी दी गई है और इसकी एक प्रति प्रयाग संग्रहालय में भी सुरक्षित है। किंतु इनमें कवि का नाम नहीं मिलता। डा० मिश्र द्वारा प्रकाशित संस्करण में रचनाकार के रूप में तुलसीदास का नाम आया है।^३ ईश्वरदास का नाम नहीं आया है। लेकिन ग्रंथ के संपादक डा० मिश्र के अनुसार, अभी तक जितनी प्रतियाँ मिली हैं, उनमें से नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट (१९२०-२२ ई०) में 'भरतमिलाप' की प्रति जिसमें ६ पत्र हैं, और प्रति पृष्ठ ३६ पंक्तियाँ हैं और सबत १९०३ की लिखी हुई है) में ही ईश्वरदास का नाम अंतिम अंश में पास पास ही दो स्थानों पर आया है। इस प्रति के आरम्भिक एवं अंतिम अंश, जो उक्त रिपोर्ट में दिए गए हैं, एकडला

१ दे० हाले । २९, कहल । ३५, ४४, हल । ४५, मदिल । ५७, इत्यादि स० व०

२ दे० ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ भरत मिलाप, पृ० ६५, एकादशी कथा पृ० ११९, और स्वगारोहिणी कथा' पृ० १३७ ।

३ वैसी पूजा किया मन लाई, तुलसीदास गव कह समुझाई ।—पृ० १०२, भरत मिलाप ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ ।

यासी प्रति से मिलता है। यही तर्ह, प्रयाग सप्तहानय की प्रति जो संत १६०६ में लिखी हुई है प्रमुग प्रमुग स्थानों पर उक्त प्रति के साम्य रगनी है। अतः यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि 'भरत मिलाप ईश्वरदास' है और विभिन्न प्रतिमा में तुलसीदास या गुरिजदास के नामों को जानबूझ कर प्रति लिखियों में प्रविष्ट कर दिया है।^१

'प्रतियों के बीच छाने और प्रमुग प्रमुग स्थानों पर साम्य रखने' से बेचन इतना प्रकट होता है कि प्रतियों के कुछ अंग समान है या उन्हें पर्याप्त समानता है। किंतु रचना का लेखक कौन है इस विचारात्पूरक श्रेण बताया जा सकता है? ईश्वरदास आना रचनाका में—जिसेपत दोहा में अपना नाम देते रहते है। 'भरत मिलाप' में यही प्रकृति कहा दिगताई पड़ती। इस रचना में ईश्वरदास को 'सत्यवती कथा' की भाँति न देय करना है न गार्हवस्त की प्रशंसा और न रचना काल का संकेत। 'भरत मिलाप' की प्रतियों में पारस्परिक साम्य के बावजूद 'किसी में तुलसीदास किसी में गुरिजदास और किसी में ईश्वरदासका नाम आया है।^२ अतः इसको निश्चित रूप से ईश्वरदास की रचना नहीं माना जा सकता।^३

४२ एकादशी कथा—

डॉ० शिव गोपाल मिश्र को इस रचना की भी हस्तलिखित प्रति एकदला ग्राम से प्राप्त हुई थी। इसमें कवि ने रचनाकाल नहीं दिया है किन्तु साहेबक की बदनामी की है।^४ जिससे ज्ञात होता है कि इस कथा की रचना भी सिक्न्दर लोदी के शासन काल में हुई थी। रचना में यत्र तत्र कवि ने अपना नाम रख दिया है जिससे रचनाकार के विषय में संदेह नहीं रह जाता। हाँ, इसमें कवि ने एकाध स्थला पर अपने नाम के आगे 'काएष भा जाड़ा है जिससे पता चलता है कि ईश्वरदास जाति के कायस्थ थे।

१ पृ० १०७, परिशिष्ट, वही।

२ वही।

३ दे० पृ० ७३, ईश्वरदास या सूरज, नागरी प्रचारिणी पत्रिका वष ६१, अंक १ सं० २०१३ पर श्री उदयसकर साखी का विचार, इससे यह प्रतीत होता है कि इस ग्रंथ (भरत मिलाप) का मूलकर्ता 'सूरजदास है न कि ईश्वरदास।'

४ पातिसाहि दिली वेसे वेसे, धुमुरपुर इत्र सिक्दल जैसी। १५ एकादशी क० ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र की सूरजदास कृत 'एकादसी कथा' की एक प्रति प्राप्त हुई है जिसका लेखनकाल स० १८२० है। उसका अधिकांश ईश्वरदास कृत 'एकादसी कथा' से इतना मिलता है कि उनमें परस्पर अन्तर करना कठिन हो जाता है।^१ सूरजदास ईश्वरदास के पूर्ववर्ती कवि थे क्योंकि अपनी अन्य कृति स्वर्गारोहिणी में पूर्ववर्ती कवियों का उल्लेख करते हुए ईश्वरदास ने उनका भी नाम लिया है।^२ बात तो है कि सूरजदास ने कोई एकादसी कथा भी लिखी थी जो कालांतर में ईश्वरदास कृत इसी नाम वाली रचना के साथ धुल मिल गई। ऐसी स्थिति में प्रकाशित 'एकादसी कथा' में कितना अंश किसका है यह बताना दुष्कर है। इसीलिये इस काव्य को सदिग्ध समझ कर हमने प्रस्तुत अध्ययन में सम्मिलित नहीं किया है।

४३ स्वर्गारोहिणी कथा—

ईश्वरदास की एक अन्य कृति स्वर्गारोहण का उल्लेख अभी किया गया है। इसकी भी हस्तलिखित प्रति डॉ० शिवगोपाल मिश्र की एकडला ग्राम से प्राप्त हुई थी और उन्होंने 'सत्यवती कथा' के साथ इसे भी प्रकाशित कराया है।

ईश्वरदास ने अपनी इस रचना में रचनाकाल आदि का उल्लेख स्पष्ट रूप में किया है। कवि ने 'स्वर्गारोहिणी कथा' की रचना 'सत्यवती कथा' के एक वर्ष पूर्व सन् १५५७ में की थी।^३ 'जोगिनिपुर दिल्ली बडयाना साहित्यिकदर में सुलिताना'^४ वाली अर्धाली यहाँ भी है। बीच-बीच में यथावसर कवि ने अपना नाम ईसर 'ईश्वरदास काएय' इस रचना में भी जोड़ा है, जिसे 'स्वर्गारोहिणी कथा' के ईश्वरदास द्वारा लिखित होने में काइ संदेह नहीं रह जाता।^५

सौभाग्यवश, कवि ने इस रचना में अपने पूर्वजों और अपने निवास स्थान के विषय में भी कुछ लिख दिया है जो महत्वपूर्ण है। कवि ने लिखा है कि जम्बू द्वीप के बीच काशी नगरी है जहाँ अनेक तीर्थ हैं और जहाँ घम की राशि है। उस मदनकठिका का वर्णन नहीं किया जा सकता जहाँ अनेक लोग बैठे रहते हैं। हमारे पूर्वज वहाँ बसते थे। (उनमें से एक) बड़े पंडित थे जिनका नाम गोंगो था। उसीको सभी लोग जानते थे। वे परोपकारी और प्रमाण वचन वाले थे।

१ दे० पृ० १११ परिशिष्ट, वही।

२ सूरजदास सोता पद गायो, उखा प्रय हरिसिध देव गायो। ८ स्वर्गा० वही।

३ दे० सन्दर्भ, क्रमांक १, पृष्ठ ५२।

४ दे० छन्दमाला २, ३, ४, ६, ८, २१ स्वर्गा०।

५ जम्बू द्वीप मध्ये बसै काशी, तीर्थ अनेक घम के रासी।

गाजीपुर में तिलकसिंह के मण्डल में जाकर बस गये। ईश्वरदास ने गागो के अतिरिक्त अपने जिन पूवजों का नाम लिया है वे इस प्रकार हैं—हरदासी, रूपई, नदन, रतन, परागु, घोरभान, जुडई, गयान, देवी, भोपति, नगदू पलदू इत्यादि। अपने पूवजों का उल्लेख ईश्वरदास यह कह कर समाप्त करते हैं कि महापुरुषों (अपने पूवजों) का कहीं तक वणन करूँ। सभी राम के दास थे। उनके पश्चात् ईश्वरदास ने कथा को प्रकाशित करना (रचना) प्रारम्भ किया।^१

इस उल्लेख से हम धारणा का निराकरण हो जाते हैं कि ईश्वरदास दिल्ली गए थे और उन्होंने अपने ग्रन्थों की रचना वहाँ की थी। कवि ने दिल्ली जाने का कोई संकेत नहीं किया है।

४४ कवि ने अपने समय में प्रसिद्ध कवियाँ—लखनसनि, मुरजदास, हरि सिंह, जैत्रव, डडकुमार (?) का उल्लेख किया है।^२ इन्हीं मुरजदास की रचना

१ जदू दीप मध्ये बसे कासो, तीय अनेग घम के रासी ।

वैसे लोग तह बरनि न जाई, भरनि कडिका बरनि न गाई
ध य लासो सिरजी त्रिपुरारी, पर पुरख तह कीत हमारी
पुरुष हमारि बसे तिहि ठाऊ खरे पडित तेहि गोगो नाऊ
तिन कर दास सबे कहू जाना, पर उपकार बचन परवाना

जो गाजीपुर परगना पचोत्र वहाँ बखानि

तिलक सिंघ के मडन बसे लोग तह जाइ । ७

निह के बस भये हरदासी, कुल के राजा गवने बाजी
आनदी व्रत कर नैबासा, बना सगफल ति हे बिलासा
रूपई न न रतन परागु रतिक राती खरग लागु
घोरभान औ जुडई गयान देवी भोपति हरख भवान
नगदू औ पलदू कुल तारा मान महस भड मनि आरा

महा पुरात बरनी कहा सबे राम के दास

ईश्वरदास तेहि पाछे कथा कीह परगास ।

—८ स्वर्गा०

२ व्यास बालमुनि बुधि के साका, खड अठारह आगम भाखा
कालिदास अमराप कीहा लखनसन पडित कवि कीहा
मुरजदास छोगाप गायो अना प्रय हरिसिंघ देव गायो
कीह धय जे बैनाल पचीसो जैव किहिन वृसन चौबोसी
विपरोति भौति डड कुमारा

—४ वही ।

'राम जन्म' की भाषा का अध्ययन इस प्रबंध में किया गया है। 'सुरजदास' के नाम से एकादशी कथा की उन प्रति का भी उल्लेख हो चुका है जो ईश्वरदास की इसी नाम वाली रचना से मिलती जुलती है।^१ जहां तक स्वर्गारोहिणी की भाषा शैली का प्रश्न है वह सत्यवती कथा के समान है।

चिन्तु यह रचना भी आद्यत गुद्ध नहीं है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने लिखा है कि 'स्वर्गारोहण के अन्तिम अंग हमें कतिपय परिवर्तना व माय 'विष्णु चरित्र' नामक अथ काव्य में मिलते हैं।^२ डॉ० मिश्र ने विष्णुचरित्र की एक हस्त लिखित प्रति से अन्तिम अंग 'परिशिष्ट' में उद्धृत किया है। 'स्वर्गारोहिणी' के अन्तिम अंश से थोड़ा बहुत साम्य इस उद्धृत अंश से भी है। पात होता है कि 'स्वर्गारोहिणी कथा' का अन्तिम अंश 'कलियुग महिमा वणन' प्रतिष्ठ है। यह ध्यान देने की बात है कि इस कलियुग महिमा वाने अंश में 'ईश्वरदास' का नाम कहा नही मिलता। कलियुग महिमा' जहाँ प्रारम्भ होता है उसके थोड़ा ऊपर ही एक दोहे में ईश्वरदास का नाम आता है। इसलिये वहाँ तक का अंग ईश्वरदास द्वारा रचित माना जा सकता है क्योंकि न तो किसी अथ कवि की लिखी हुई स्वर्गारोहिणी नाम की कोई रचना मिली है और न अन्तिम अंग (कलियुग महिमा वणन) की छाड़कर इसका और कोई अंग किसी अथ रचना में मिलता है।

इन तथ्यों को ध्यान में रख कर स्वर्गारोहिणी कथा का हमने ईश्वरदास की प्रामाणिक रचना माना है और प्रस्तुत अध्ययन में उसे सम्मिलित करना उचित समझा है।

१ दे० परिशिष्ट, ईश्वरदास की सत्यकथा तृतीया

२ दे० परिशिष्ट, वही।

मिरगावत (मिर०)

४१ लोकप्रियता की दृष्टि से मिरगावत सौभाग्यशाली काव्य रहा है। 'अध कथानक' के लेखक बनारसीदास ने मिरगावत के रचनाकाल से लगभग १०० वर्ष पश्चात् लिखा है कि वे विपत्तावस्था में हाट बाजार न जाकर घर में बैठे रहते थे और मधुमालती मिरगावती नामक पौधियों का पाठ किया करते थे। यही नहीं रात्रि के समय दस बीस आदमी उसे सुनने के लिये आते थे जिन्हें वे बीच-बीच में सुनाया करते थे।^१ प० परपुराम चतुर्वेदी के अनुसार 'इसकी प्रथम चर्चा (आधुनिक काल में) कदाचित् सन् १९०० ई० की खोज रिपोर्ट में की गई थी।^२ हिन्दी के अनेक विद्वानों और इतिहासकारों ने इस काव्य की चर्चा की है।^३ किन्तु पुस्तक की इस कृति पर प्रामाणिक और सम्यक् प्रकाश डालने का ध्येय पटना विश्वविद्यालय में इतिहास विभाग के अयापक प्रो० अक्षरी की है। उन्हें दिल्ली के खानकाह में सुरंगित 'मिरगावत' को एक हस्तलिखित प्रति

१ सब घर में बैठे रहै जाहि न हाट बाजार,
मधुमालति मिरगावती पोपी दोइ उदार
त बावहि रतनी समै आवहि नर दस बीस,
गार्वाहि अद बातें करहि नित उठि देहि अशोष

—पृ० ३३५, अर्धकथानक, प्रकाशक, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्राइवेट)
निमित्ठ बम्बई, १९५७ ई०

- २ पृ० ५६ हिन्दी के सूची प्रेमाख्यान पर उल्लिखित, प्रका० यहा, १९६४।
३ पृ० ६४, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पं० रामचन्द्र शुक्ल, नवा संस्करण।
पृ० २६८, हिन्दी साहित्य, डॉ० हजाराचरण सिंह, प्रथम संस्करण।
पृ० ८६ भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, पं० परपुराम चतुर्वेदी, १९५६।
पृ० १३६ जापगी व परवर्ती सूची कवि और काव्य, डॉ० सरला शुक्ल
सं० २०१३ वि०, दरवाजि।

आर्कियोलॉजिकल विभाग के अधिकारी श्री देसाई से प्राप्त हुई। इस प्रति में ६० पृष्ठ सुरक्षित हैं और प्रत्येक पृष्ठ में १७-१८ पंक्तियाँ हैं। प्रति का प्रथम पृष्ठ अप्राप्य है। इस प्रति का रचनाकाल भी अज्ञात है। किन्तु देखने में यह प्राचीन पात होती है। प्रति नस्तालोक लिपि में लिखी गई है।^१ प्रो० अस्करी ने तद्विषयक अपने लेख में कृति, कवि, उसके आश्रयदाता का विशद् विवेचन किया और काव्य का उद्धरणबहुल सार भी प्रस्तुत कर लिया है जिससे काव्य का स्पष्ट स्वरूप प्रकट हो जाता है।^२

४६ रचनाकाल

कवि ने रचनाकाल का उल्लेख कर दिया है जिसमें यह निश्चित रूप से ज्ञात हो जाता है कि मिरगावन की रचना ६०६ हि० (१५०३ ई०) में हुई।^३ कुतबन के अनुसार यह रचना पहलू से जनता में प्रचलित थी। उन्होंने इसे सयोग रथगार वीर रस से युक्त करक और इसका अर्थ खानकर लोमो के सम्मुख सम्बत् १२६० में रखा। काव्य भाशेँ महीने के कृष्ण पक्ष पष्ठो तिथि को समाप्त हुआ।^४ काव्य के एक प्रारम्भ छंद के अनुसार ग्रंथ की रचना में कुल दो महीने दस दिन लग थे।^५

४७ कवि और उसके गुरु

मिरगावत के प्रारम्भ में कवि ने अपने गुरु का स्मरण किया है। इसी प्रसंग में कवि ने गुरु का नामालेख भी किया है। शेर बुद्धन जगत् में सच्चे पौर हैं। उनका स्मरण करते ही शरीर शुद्ध हो जाता है या शरीर में सुधि आ जाती है। कुतबन ने उनके चरण धर। सुहरावर्दी दोनों जगत् में निमल हैं। शेर बुद्धन के सम्पर्क से कुतबन के पुराने और नये दोष पाए धुल गए। उनका शरीर

१ दे० कुतबन मृगावत—ए यूनीक मैनुस्क्रिप्ट इन परगियन स्क्रिप्ट्स द जर्नल ऑफ़ इंडियन रिसेच सोसाइटी, खंड ४, १९५५ ई०।

२ वही।

३ वही के राज यहरे हम कहे, जीत नो जो सत अहे। १० मिर०

४ साहि कया अहे आगे सिंगार वीर रस कहे।

पुनि हम खोजि अरथ सब कहा लघु दोरथ कौतुह नहो रहा।

अहिय हूत यत्रा से साठा, तहिया यह जो खोपई गाँठो। १४३ मिर०

५ दुहरे मास दिन दस मंह जोरत यह औराउठ जाह।

एक-एक थोस माठि जय पिरोवा वकता चित मन साह। १० मिर०

सबसे बड़ा है। इसने जिसको रास्ता दिखाया वह गन्तव्य एक निदिप में पा गया।^१ इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसी स्तुति केवल गुरु की ही वा जा सकती थी।

ये शैख बुद्धन कौन थे इस विषय में मतभेद है। प० रामचन्द्र गुबन ने कुतबन के गुरु के विषय में लिखा है कि 'ये चिश्तीवश के शैख बुरहान के शिष्य थे और जौनपुर के बादशाह हुसेनशाह के आश्रित थे।^२ डॉ० मुकुमार सन ने बागला साहित्येर इतिहास में कुतबन के गुरु का नाम बुरहान और उट चिश्ती वश का बताया है।^३ बिनु गुजल और सन में से किसी ने अपनी सूचना के आधार का उल्लेख नहीं किया है। अपने गुरु का जो उल्लेख कुतबन ने किया है उसमें सुहरावर्दी उल्लिखित है।^४ श्री अस्करी कुतबन के गुरु को सुहरावर्दी सम्प्रदाय से सम्बद्ध मानते हैं।^५ श्री अस्करी के अनुसार कुतबन के गुरु शैख बुद्धन (?) जौनपुर के प्रसिद्ध सत मुहम्मद ईसा 'ताज' के योग्यतम आध्यात्मिक शिष्य और उत्तराधिकारी थे। सत मुहम्मद ईसा 'ताज' के भाई अहमद ईसा 'ताज' की समाधि बिहार शरीफ के मैसापुर मुहल्ले में स्थित है। गैल बुद्धन उत्तर प्रदेश के अजौली नामक कस्बे के रहने वाले थे और वहाँ उनकी समाधि बनी हुई है। उनके मृत्युकाल के विषय में कोई जानकारी नहीं है।^६

शैख बुद्धन शतारी नामक एक व्यक्ति का उल्लेख आइने अकबरी में भी हुआ है।^७ उनके विषय में कहा गया है कि वे अब्दुल शतारी के बगज थे और सिक्न्दर लोदी के समकालीन थे। प० परशुराम खतुबेदी का विचार

- १ शैख बुद्धन जग साँचा भीरू, नाउ लेत सुघ होइ सरीरू ।
कुतबन नाउं ले रे पा घरे सुहरवर्दी दुहुँ जग निरभरे ।
पछिले पाप घोइ सब गए जो रे पुराने औ सब नए ।
नौ के आजु भएउ अवतारा सब सउं बड़ा जो पीर हमारा ।
जेहि कहैं बाट दिखाई होई एक निमिरा मेंह पहुँचे जाई । ५ मिर०
- २ पृ० ६४, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नया संस्करण, नागरी प्र० सं०
काशी, स० २००६ ।
- ३ पृ० ५६३, बागला साहित्येर इतिहास, सन् १९५० ई० ।
- ४ दे० सन्दम, क्रमांक १ ।
- ५ दे० पृ० ६, कुतबन्स मृगावत पश्चिमन स्क्रिप्ट ।
- ६ पृ० ७, वही ।
- ७ दे० पृ० ४७, हिन्दी के सूफ़ी प्रेमाख्यान ।

है कि 'आइने अकबरी' के श्लेष बुद्धन का वास्तविक नाम 'नेम बोधन' है क्योंकि 'अबबारातअसाफिया' एवं 'अबबारातअखियार' में श्लेष बोधन नाम आया है।^१ इसके अतिरिक्त 'आइने अकबरी' में उल्लिखित श्लेष बुद्धन शतारी थे जबकि कुतबन ने अपने गुरु को सुहरावर्दी शाखा से सम्बद्ध बताया है। प्राप्त जानकारी के आधार पर कुतबन के गुरु के विषय में केवल यही कहा जा सकता है कि उनका नाम श्लेष बुद्धन या बोधन था और वे सुहरावर्दी थे।

४८ शाहेवक्त

कुतबन ने शाहेवक्त की प्रशंसा खुलकर की है। शाह हुमेन बहुत बड़ा राजा है। छत्र सिंहासन उसी पर ध्यानता है। वह बहुत बड़ा पंडित बुद्धिमान और सयाना है, पोषे बाँवता है और सारे अर्थ जानता है। वह युधिष्ठिर के समान धमवान् है। हम तो परछाई मात्र हैं जगत् का प्राण तो वही राजा है। वह बहुत दान देता है। दान देने में उसकी समानता बलि और कण भी नहीं कर सकते। जहाँ तक गधव राज्य करते हैं, वहाँ तक वे लोग उसके द्वारा की ओर ताका करते हैं। ऐसा धार्मिक सुजान कही नहीं देखा गया इत्यादि।^२

कवि के समसामयिक हुसेनशाह नामक दो शासक हुए हैं। जौनपुर का हुसेनशाह गर्की जो १४५८ ई० के आसपास गद्दी पर बैठा^३ और १४९४ ई० में सिक्कर लोनी द्वारा पराजित होकर अपना राज्य छोड़ बैठा।^४ दूसरे हुसेनशाह का पूरा नाम अलाउद्दीन हुसेनशाह था जिसने बगाल में १४९३ ई० से १५१९ ई० तक राज्य किया।^५ सयाग से ये दोनों हुसेनशाह एक-दूसरे से सम्बद्ध थे।^६ कुतबन ने मिरगावत का रचनाकाल ९०९ हि० अर्थात् १५०३ ई० बताया है। जौनपुर का शासक हुसेनशाह इससे कई वर्ष पूर्व अपना राज्य गँवा चुका था और अपने नामराशि सम्बन्ध बगाल के शासक की शरण में चला गया था।^७ कुतबन ने शाहेवक्त की प्रशंसा जिस ढंग से की है उससे यह नहीं प्रकट

१ वही।

२ पृ० ४७, हिंदी के सूफ़ी प्रेमालोक्यन

३ वही, पृ० ४६।

४ पृ० ७, कुतबन भूगावत पश्चिम सिक्किम

५ वही।

६ पृ० ९, वही।

७ साहिब हुसेन आहि बड़ राजा छत्र सिंहासन इन्हें वे छात्र पंडित श्री बुधिवत सयाना पोषा बाँचि अरय सब जाना

होता कि वे पराजित आश्रयता को प्रशंसा कर रहे हैं। ५० परशुराम चतुर्वेदी का अनुमान है कि कुतबन ने शाहेवक्त के रूप बबाल के शासक की प्रशंसा की है।^१

चतुर्वेदी जी ने लिखा है कि हुसेनशाह शर्की की मृत्यु कदलगाँव में सन् १५०० ई० में हो गई थी।^२ उ होंने इस सूचना का आधार नहीं बताया। थी अस्करी ने कुतबन सम्बन्धी अपने लेख में बताया है कि सन् १४९४ ई० में पराजित हो जाने पर भी हुसेनशाह शर्की लगभग १६ वर्षों तक और जीवित रहा क्योंकि सन् १५०४ ई० तक उसके सिक्के मिलते हैं।^३ यही नहीं, इस बीच में उसने अपने समर्थों की सहायता से अपना खोया राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न भी किया था।^४ इसके अतिरिक्त यह भी स्मरणीय है कि हार जाने पर भी वह अपने सम्बन्धी का सम्मानित अतिथि था।^५ और उसका राजकीय वैभव बना था। ऐसी स्थिति में शाहेवक्त के रूप में कवि द्वारा उनका वर्णित होना असम्भव नहीं है। अस्तु

४९ जो हो, काव्य का रचनाकाल ९०९ हि० १५०३ ई० निश्चित है और इसीलिये रचना सं प्राप्त अंश की भाषा का विवेचन हमने इस प्रबंध में किया है। इस काव्य की भाषा का अध्ययन हमने डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित किंतु अप्रकाशित उस अंश के आधार पर, जिसका उपयोग करने की अनुमति उ होने मुझे दे दी थी, तथा डा० शिवगोपाल मिश्र द्वारा सम्पादित (मिर० शिव) के आधार पर किया है। डा० मिश्र का सम्पादित संस्करण हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग शक सन् १८८५ में प्रकाशित हुआ है।

घरम दुदिटल इन्ह कहें छाजा हम परछाहि जोउ जग राजा

दान देइ बहू गिनति न आवा, बनि और करन न सरवरि पावा

राज जहाँ लगि गघरप ब्रह्मी सेवा करहि बार सब यहही

चनुर सुजान भास सब जानाँ अइस न देखउ कोइ।

सभा विनव सब काम दे पुनि देखा तो सोइ। ६ मिर०

१ दे० पृ० १९० १९१, ८ डेनही सलटनट, भारतीय विद्या भवन बावे, १९६० ई०।

२ पृ० ९ कुतबनस मुगावत पश्चिम स्क्रिप्ट

३ पृ० २१५, ८ डेनही सलटनट

४ दे० पृ० ९ कुतबनस मुगावत पश्चिम स्क्रिप्ट

५ पृ० ७ और ९, वही।

हरिचरित (ह० च०)

५० प्राप्त जानकारी के अनुसार लालचदास और उनके 'भागवत के अनुवाद' की सूचना सबसे प्रथम गिलक्राइस्ट ने अपने हिन्दुस्तानी व्याकरण में दी थी।^१ इसके बाद गासाँ द तासी ने हिन्दुई साहित्य का इतिहास में उसका सन्निपत्त परिचय दिया। इस परिचय में लालचदास को भागवत के रचयिता या उचित रूप में भागवत पुराण जिसके बारह स्कन्धों का एक हिन्दी अनुवाद मितना है, दशम स्कन्ध के रूपान्तर या अनुवाद के रचयिता' बताया गया है।^२

'शिवसिंह सरोज' में इनका नाम 'लालनदास' दिया गया है। और इनके विषय में यह सूचना दी गई है कि 'लालनदास ब्राह्मण डलमऊ वाले स० १६५२ में उत्पन्न हुए। ये महाराज बड़े महात्मा हो गुजरे हैं। इनके कवित्त शान्त रस में है और हजारों में भी कालिदास ने इनका नाम लिखा है।' सरोज में एक दोहा इस प्रकार मिलता है—

दालिब रियि की दलमऊ सुरसरि तीर निवास

तहाँ दास लालन बस करि अकाण की आस

जिसमें ज्ञात होता है कि ये डलमऊ के रहने वाले थे।^३

१ तासी ने 'लालचदास हलसाई को गिलक्राइस्ट द्वारा हिन्दुस्तानी व्याकरण पृ० ३३५ पर उल्लिखित हिन्दुई कवि कहा है। दे० पृ० २७' ७३।
 डा० लक्ष्मीसागर वाण्येय द्वारा अनून्त 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास', हिन्दुस्तानी एकादमी, इलाहाबाद, १९५३।

२ वही।

३ पृ० ४४५ शिवसिंह सरोज, चतुर्थ संस्करण।

७ हरिचरित सम्पादक आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, सहायक सम्पादक श्री रामनारायण शास्त्री—बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, १९६३।

गियसन ने 'द माडन वर्नविपुलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान' में सम्भवत 'सरोज की सूचना के आधार पर यह सूचना दी है—

लालनदास डलमऊ जिला रामबरेली के ब्राह्मण जन्म १५६५ ई० हजार श्रातरस के कवि ।^१

उपयुक्त उल्लेखों के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के कई विद्वानों ने लालनदास और उनकी रचनाओं का श्रुनाविक परिचय दिया है ।^२ नागरी प्रचारिणी सभा काशी और बिहार राष्ट्र भाषा परिषद पटना को खोज रिपोर्टों तथा यत्र तत्र कई व्यक्तियों के पास इनकी 'रचना हरिचरित के हस्तलेखों की सूचना मिली है ।^३ इनकी एक अन्य रचना 'विष्णु पुराण' की भी सूचना मिली है ।^४

१ पृ० ११३ द माडन वर्नविपुलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान का हिन्दी अनुवाद, अनुवादक विनोरीलाल गुप्त ।

२ (क) पृ० २२४, कवि सख्या, १४६, मिथवन्धु विनो २०१३ वि०

(ख) पृ० १६८ हिन्दी साहित्य का इतिहास, २००७ वि० पृ० रामचन्द्र गुप्त ।

(ग) पृ० ८४१, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास १६४८ ई० लेखक डा० रामकुमार वर्मा ।

(घ) पृ० १६६ हिन्दी साहित्य, २००६ वि० डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ।

(ङ) पृ० २० २२ अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय डॉ० दीनपाल गुप्त ।

(च) पृ० ११३, १६ को शती के हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि १६५६ ई० डॉ० रत्नकुमारी ।

३, देखिए—(क) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का सतिस विवरण काशी नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट १९०६ ८, प्रथम सं० १८६ ।

४ (ख) वही खोज रिपोर्ट १९२३ २६ पृ० ६८४ ।

(ग) वही, भयोक्त प्रकाशित विवरण १९२६ २८, प्र० सं० ४०१ २ ।

(घ) प्राचीन हस्तलिखित पोथिया का विवरण (पहला खंड) बिहार राष्ट्र भाषा परिषद प्रथम सं० १८२ ।

हरिचरित का हस्तलिखित प्रतियां नागरी प्रचारिणी काशी और हिन्दी सा० सं० प्रयाग के पुस्तकालय में सुरक्षित हैं । मैंने ह० प्र० की एक हस्तलिखित प्रति श्री गायिका जी ६८, रामबाग, प्रयाग के पास दनी है ।

किरगु पुराण की सूचना के लिए देखिए—

५१ कवि नाम

कवि का नाम सबत्र लालचदास मिलता है। शिवसिंह सरोज में अवश्य 'लालनदास' का उल्लेख आता है। किन्तु लालनदास लालचदास से भिन्न कोई अन्य कवि है त्रिनका नाम इनके साथ मिल गया है।^१ शिवसिंह सेंगर और प्रियसन ने उनकी जाति हलवाई को उनका उपनाम समझा था और लालचदास को ब्राह्मण बताया था। किन्तु उनकी जाति के विषय में सप्रेह का अवकाश नहीं है क्योंकि उन्होंने अपने का स्पष्ट रूप से 'हलवाई' कहा है।^२

५२ रचनाएँ

विभिन्न सूचनाओं के अनुसार इनके नाम में निम्नलिखित ग्रंथ मिलते हैं—
(१) भागवत दशम स्कन्ध। तासी ने इहे भागवत के रचयिता या उचित रूप में 'भागवत पुराण' जिसने बारह स्कंध का एक हिंदी अनुवाद मिलता है, के दशम स्कन्ध के रूपांतर या अनुवाद के रचयिता कहा है।^३ तासी ने हरिचरित का उल्लेख नहीं किया है।

मिश्रबन्धुओं ने लालनदास के दो ग्रंथों का उल्लेख किया। उनका दिया हुआ विवरण इस प्रकार है—

कवि सख्या १४६ नाम लालचदास हलवाई, राय बरेली, ग्रंथ (१) भागवत दशम स्कन्ध की भाषा, १५८७ (२) हरिचरित (१५८५)^४

हिंदी साहित्य के अधिकांश परवर्ती इतिहासकारों और विद्वानों ने मिश्र

(१) पृ० १८१५, साहित्य ६ (त्रैमासिक) अक्टूबर, १९५८, प्रो० नलिन विलासन गमा का लेख, 'लालचदास का हरिचरित'

(२) प्राचीन हस्तलिखित पाण्डिया का विवरण (दूसरा खण्ड)

१ प्रियसन को लालनदास विषयक सूचना (दे० सद्म क्रमांक १, पृ० ६४) पर उनका अनुवादक श्री विशोरीलाल गुप्त ने यह टिप्पणी जोड़नी है कि लालचदास हलवाई थे ब्राह्मण नहीं। इसका जन्म १५६५ ई० में कदापि नहीं हो सकता। ये लालनदास, बरेली निवासी, तथा अवन त्रिलास और भरत की बारह मासी रचनाकाल क्रमशः १६४३ ई०, १६३३ ई० के लेखक लालदास से अभिन्न होते हैं। दे० ना० प्र० पत्रिका, काशी की त्रयोदश खोज विव० (१९२६ २८ ई० प्र० स० २६२।

२ विपिन हरन सनह मुखवाई चरन गहे लालच हलुआई। १ ह० च०

३ दे० सद्म क्रमांक २, पृष्ठ ६३।

४ पृ० २२८ कवि सख्या १४६, मिश्रबन्धु विनोद २०१३ वि०

पुस्तकालय में है। शीपक है—'ब्रजविलास-ब्रज माळा'। उनके अनुसार 'यह वही पोथी है जो 'ब्रजविलास' शीपक के अन्तगत उद्धृत हुई है, और जो कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी के भारतीय मुद्रित ग्रन्थों के सूचीपत्र में गलती से बाबूराम द्वारा रचित बताई गई है किन्तु जो हिंदी की अनेक रचनाओं की भाँति इसके केवल सम्पादक हैं।^१ शर्माजी ने इस हस्तलिखित प्रति के विषय में आगे लिखा है कि मेरी प्रति में हाथ का लिखा हुआ एक नोट है जिसमें कहा गया है कि इस रचना के रचयिता का नाम लालच भी दिया जाता है। श्री शर्मा ने अनुमान किया था कि सम्भवतः लालचदास का वास्तविक नाम ब्रजवासीदास था और 'लालच' उनका उपनाम या तखल्लुस था।^२

जाहिर है कि स्वर्गीय शर्मा का यह कथन अस्पष्ट है। 'ब्रज विलास' का 'हरिचरित' होना अत्यन्त सदिग्ध है क्योंकि वह भारत के पश्चिमी प्रान्तों की 'पच्छिम देस की भाळा' कही जाने वाली बोली में लिखी गई है। वस्तुतः ये ब्रजवासीदास खोज रिपोर्ट १९४१-४३ में उल्लिखित ब्रजवासीदास से अभिन्न प्रतीत होते हैं।^३

५४ विष्णु पुराण

लालचदास द्वारा लिखित एक अन्य काव्य विष्णु पुराण की सूचना बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (दूसरा खण्ड) में दी गई है। श्री नलिन विलोचन शर्मा ने लिखा है कि परिषद् सग्रहालय में इसके दो हस्तलेख सुरक्षित हैं।^४ विवरण के अनुसार इसमें विष्णु पुराण के आधार पर कृष्ण लीला वर्णन किया गया है तथा कृष्ण जीवन के विभिन्न अंगों पर प्रकाश डाला गया है। परिषद् सग्रहालय की एक प्रति के पृष्ठ खंडित हैं और इसमें रचनाकाल या लिपिकाल के विषय में कुछ नहीं पाया जाता है। हाँ दूसरी प्रति में रचनाकाल १५८५ दिया गया है।^५ रचनाकाल विषयक पत्तियाँ इस प्रकार हैं—

-
- १ पृ० २, ह० च० भूमिका।
 - २ वही।
 - ३ प्र० सं० १९४१-४३।
 - ४ पृ० ७, हरि चरित भूमिका।
 - ५ वही।

पद्मह सी पचासो जहाना, कथा आरम्भ रिह तहाना
 मास अपाङ्ग कथा अनुसारो, हरिवासर व्रत उजिआरी
 मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के शोध छात्र श्री गाविन्जी के पास सुरक्षित
 'हरिचरित को जो प्रति देखने को मिली है, उसमें भी रचनाकाल विषयक
 पक्तियाँ लगभग इसी तरह हैं—

समत पन्दरह से सतासो जहिआ
 कथा अरभन कोहा ठहिआ
 मास अपाङ्ग कथा अनुसारो
 हरी वासर रजनी उजिआरा

विष्णु पुराण के विषय में इनसे अधिक सूचना नहा प्राप्त हो सकी है ।

५५ रचनाकाल

सासी ने लालचदास का परिचय देते हुए 'भागवत' का रचनाकाल नहीं दिया था । शिवसिंह सराज ने उनका जन्म सवत् १६५२ दिया हुआ है ।^१ प्रियसन ने भी उनका यही जन्म काल बताया है ।^२ लेकिन शिवसिंह और प्रियसन को इस सूचना का आधार क्या है यह अज्ञात है ।

मिश्र बधुआ ने भागवत दशम स्कन्ध भाषा का रचनाकाल सवत् १५८५ और हरिचरित को रचना का सम्बत् १५८५ माना है । उनकी सूचना का आधार लाला भगवानदीन को प्रति था । अपने विवरण में उन्होंने जो ग्रन्थ उद्धृत किया है, उसमें पद्मह सी सतासो पाठ है ।^३ हरिचरित के रचनाकाल की सूचना उन्हें वहाँ मिली, यह नहीं मिलता । प० रामचन्द्र गुवल, डा० रामकुमार वर्मा, डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, सुश्री रतनकुमारी आदि ने लालचदास की कृतियों का रचनाकाल १५८५ वि० और १५८७ वि० माना है ।^४

कई प्रतियों में हरिचरित का रचनाकाल स० १५२७ वि० मिलता है । हरिचरित को सम्पादकीय भूमिका में उद्धृत एक पत्र के अनुसार डा० बानुदेव शरण अग्रवाल ने हरिचरित का रचनाकाल यही (सवत् १५२७ वि०) माना है ।^५

- १ दे० सदभ, क्रमांक ३, पृ० ६३ ।
- २ दे० सदभ क्रमांक १ पृ० ६४ ।
- ३ पृ० ३, भूमिका, हरिचरित पर उद्धृत ।
- ४ दे० सम्म, क्रमांक २, पृ० ६४ ।
- ५ पृ० १ भूमिका ह० च० ।

श्री नलिन विलोचन शर्मा ने लालचदास की मृत्यु के उपरांत हरिचरित को पूरा करने वाले कवि 'आसानन्द' की निम्नलिखित पक्तियों में काव्य के रचना काल का निणय करने का प्रयास किया है—

अति प्रजन कथा जब भएउ, सकट प्राण लालच कर भएउ
भग्नि करस प्रभु कह सो जाएसि, मुरसरि निवट अरप जन पाएसि
बोए मन अस्तुनि प्रभु लग ठावां त्रिस्न चरित्र भाखा बहु गावा
दमम सकष भागवत होई कथवघ लहि गाएसि सोई
इहे सोच रहा जिव मोही समस्त कथा करी पै सोई
एहि विधि विनवो भगवता त्रिस्न चरित्र लौनीन्ह तुगठा
सवन वैतिक बीति जब गएउ शोडस सन एकोत्तर भएउ
विस्तु कथा उपजावहु भाऊ हरिपद लीन्ह आसानन्द नाऊ ।^१

इन पक्तियों की व्याख्या करत हुए श्री शर्मा ने लिखा है कि 'आसानन्द का रचनाकाल स० १६७१ वि० है। रचनाकाल के प्रसंग में यह पक्ति—'सवत् वैतिक बीति जब गएउ शोडस सन एकोत्तर भएउ' यह भी सिद्ध करती कि है कि यही लालचदास का निर्वाण काल था। सवत् १५२७ वि० में लालचदास ने जिस ग्रंथ की रचना प्रारम्भ की थी उसे सवत् ६७१ तक पूरा नहीं कर पाए और १४४ वर्षों तक लिखते रहे। यह स्पष्ट अविश्वसनीय है। १५८७ की रचना काल मान लेने पर यह निष्पन्न निकलता है कि लालचदास प्राय ८४ वर्षों तक जीवनपर्यन्त हरिचरित को रचना में लगे रह। कवि की दूसरी रचना 'विष्णु पुराण' के रचनाकाल के सम्बन्ध में १५८५ वि० भी सिद्ध करता है कि हरिचरित में १५२७ वि० अगुद्ध पाठ है।^२

'सवत् वैतिक बीत जब गएऊ का अर्थ होना चाहिए जब कई सवत् बीत गए अर्थात् लालचदास की मृत्यु के कई वर्षों के पश्चात् आसानन्द ने उनके छोड़े हुए काम में हाथ लगाया। इस पक्ति से यह अर्थ लेना कि लालचदास की मृत्यु भी उसी सवत् में हुई थी गलत मालूम पड़ता है। आश्चर्य कि शर्माजी ने 'शोडस सन एकोत्तर' से १६०० और १ अर्थात् सम्बत् १६०१ अर्थ न लेकर १६७१ अर्थ लिया।

५६ मरे विचार से 'हरिचरित' के रचनाकाल का सधान हम 'हरिचरित को 'समे विनव नाम भी तबही' पक्ति से लगा सकते हैं। 'विलम्ब नामक सवत्सर

१ पृ० ८, भूमिका ह० ख० पर उद्धृत।

२ पृ० ८, भूमिका ह० ख०।

६० वर्षों में एक बार आता है। गणना के अनुसार उसे स० १५८२ में पढ़ना चाहिए। पुरानी बैथी लिपि में 'व्यासी' का पच्चासी पढ़ लिया जाना असंभव नहीं है। 'सत्ताइस' और 'सतासी' पाठ लिपिकारों के प्रमाद से आ गए होंगे। लालचदास ने हरिचरित की रचना सवत् १५८२ में प्रारम्भ की और वसवध लिखने के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गयी और कई वर्षों के उतरांत सवत् १६०१ में आसानन्द ने लालचदास द्वारा छोड़े गए काय को आगे बढ़ाना प्रारम्भ किया।

हरिचरित का रचनाकाल संवत् १५२७ से लेकर सवत् १५८७ के बीच कमी हो उसका रचनाकाल पचावत के पूर्व है, अतः प्रस्तुत अध्ययन में इसे सम्मिलित किया गया है।

खोज रिपोर्टों द्वारा सूचित अन्य रचनाएँ

५७ प्राचीन जवघी की कुछ रचनाओं की सूचना खोज रिपोर्टों में उपलब्ध होती है। ये रचनाएँ न अभी प्रकाशित हुई हैं और न इनके विषय में कहीं विस्तृत सूचना मिलती है। नीचे खोज रिपोर्टों में दिए गए विवरणों के आधार पर उनका परिचय दिया जा रहा है —

५८ (१) लखनसेनी का हरिचरित विराट पद्य

ईश्वरदास की रचना 'स्वगराहिणी कथा' पर विचार करते समय हमने देखा है कि लखनसेनी ईश्वरदास द्वारा स्मृत कवियों में से है।^१ नागरी प्रचारिणी पत्रिका की खोज रिपोर्टें दखते हुए मुझे लखनसेनी नामक कवि और उनकी रचना 'हरिचरित विराट पद्य' की सूचना मिली।^२ लखनसेनी की सूचना का जितना अंश खोज रिपोर्ट में उद्धृत किया गया है उससे उनकी रचना का काल, कतिपय पूर्ववर्ती और समसामयिक कवियों तथा सामाजिक परिस्थिति इन सब का थोड़ा बहुत परिचय प्राप्त हो जाता है। कवि न जौनपुर नरेश इब्राहिम के शासनकाल में काव्य की रचना स० १४८१ में की।

बादिशाहि जे वीराहिम साही, राज करहि महि मडल माहो

आपुन महाबली पुहमी धावे, जउनपुर मह छत्र चलावे

सवत चौदह सइ एकासी, लखनसेनी कवि कथा प्रग (?) सी।^३

जौनपुर के इतिहास से ज्ञात होता है कि सन् १४०२ ई० में मुबारक शाह की मृत्यु हुई और अमीरों ने इब्राहिम शाह को सिंहासन पर बैठाया। इब्राहिम

१ लखनसेनी पंडित कवि कीन्हा। ४, स्वर्गा०

२ पृ० ५१, नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी, वष ५६, स० २००८।

३ देखिए परिशिष्ट

शाह ने १४०२ ई० में १४४० ई० तक शासन किया। सगनसेनी ने उसी के शासनकाल सन् १४८१ (सन् १४२४ ई०) में अपने नाय की रचना की। राज विवरण में उद्धृत अंग का प्रारम्भिक भाग थोड़ा अस्पष्ट है। विवरण का सारांश इस प्रकार है—

५६ बामशाह इब्राहिम शाह जो महिमडल पर राज्य करता है स्वयं महा बली है और पृथ्वी पर विचरण करता है। जौनपुर में अपना ध्य चलाता है। सन् १४८१ में लखनसेनी कवि ने कथा प्रकाशित की। सभी गुणी समाप्त हो गए तो बैजलस राजा के पास गए। बैजल उस प्रसन्न हुए और उनका जी बही रम गया। लखनसेनी ने भाषावद्ध किया तथा को (इसकी कुछ पक्तियों का अर्थ नहीं खुलता वे सबवत् काव्य की प्रशंसा में लिखी गयी है) डोलेस्वर अनुका राम जो तेजराशि है और राजाओं के कुल धम की निभाने वाले हैं, लखनकुमार उही का पुत्र है। वह दुजन रूपी हाथियों के निये सिंह के समान है।

कठ में सरस्वती बसें और हृदय में गणेश। लखनसेनी उस देग में नहीं बसते है। वह देग धय है (व्यग्य)। लखनसेनी कविया के बीच आए तो बड़े बड़े कवि लज्जित हो गए। धम और सतजुग के राजा गए। बलि के काय के लिए देवीपुर गए (?) वृतीनरेग घनसेनी गए। देव गणेश भोजपुर गए। जयदेव स्वर्ग की राह चले और घघ सुरपति के भाट (होकर) गए। नगर के नरेद्र उनारी गए और विद्यापति की लचारी गई। जो नगर में अमृत वृड की शाह लेते थे वे अब निधनता के वृड में नहाते है। उन पापियों का स्थान खोजता है जिन्होंने जम भर (भगवान का) नाम नहीं लिया। उन पापियों को जिन्होंने हरिनाम नहीं लिया। धम का प्रतिदिन हास ही रहा है। जन परि जन ने वह देश छोड़ दिया जहाँ उपभवन (?) नरेश बसता है। भोदू मथ जो वान के पास लगे रहते थे (कान फूकते थे) वे काज नहीं अवाज ही जानते थे। सभी धर्मात्मा कपटो हो गए। छोटे वैद्य रोग नहीं चोह पाते। बंधा हुआ कुजर भूखो मरता है और गधे को आदरपूर्वक सेबिन करके चराया जाता है। चदन काट कर करील लगाए जाते हैं और आम काट करके बबूल उगाए जाते हैं। कोकिल, हस, मंजार (मजोर ?) मारे जाते है और कौबे यत्नपूर्वक पाले जाते हैं। ससार सारिका के पख उखाड़कर मुर्गे पालता है। लखनसेनी वहाँ नहीं बसता चाहे उधार मांग कर भोजन करना पडे।

चौशा नगर जगत में प्रसिद्ध है। वहाँ गोरखसिद्ध का रामराज है। वे जय

जय कह कर जब विग्रह चड़ाते है तो शेष कांपने हैं और धरती लट्खड़ाने लगती है । वहाँ राजा बड़नदन राज करते हैं जो दूसरे राम बनकर उत्पन्न हुए है । चारा खान और चौरासी मीरा को उहोने गगा के तोर मारा । उनके पुत्र पूरनमल है जो शत्रु के हृदय को सालने में महाबली है । पूरनमल के ठाट में से चरती हुई साठ गायो को बांधा । कवि ने कौतुकवश विराट की विविधतापूर्ण कथा को सुरस काव्य में बाधा ।^१

ज्ञात होता है कि कवि ने अपनी जन्मभूमि की दुदशा से तग आकर वह स्थान छोड़ दिया था और काय चौसा नगर में लिखा था । उद्धृत अंश में कई आश्रय दाताओ (?) का उल्लेख है । डोनेस्वर अनुकाराय, उनके पुत्र लखन कुमार तथा चौसा के राजा बड़नदन तथा उनके पुत्र पूरनमल का उल्लेख कवि ने किया है ।

रचना की भाषा अवधी है । कवि जौनपुर राज्य का निवासी था । अत अवधी में रचना करना उसके लिये अस्वाभाविक नहीं था । लिपिकाल सवत् १८८७ है ।

६० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के संग्रहालय में लखनसेनि नामक कवि द्वारा रचित 'विराज पत्र' नामक काव्य सुरक्षित है ।^२ किन्तु उसमें कवि की आत्मपरिचयात्मक पक्तियाँ नहीं हैं । शाहेबकत का भी कोई उल्लेख नहीं है । हो सकता है कि किसी लिपिकार ने प्रारम्भिक पक्तियों को कथा की दृष्टि से अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया हो । किन्तु इस विषय में बलपूर्वक कुछ कहना अभी सम्भव होगा जब सभा और सम्मेलन की प्रतियों का मिलान कर लिया जाए ।

६१ (२) भीमकवि का डगव पुराण—

नागरी प्रचारिणी पत्रिका के एक अंक में 'डगवे पुराण' और उसके रचयिता भीम की सूचना दी गई है ।^३ यहाँ उसी विवरण के आधार पर रचना का परिचय दिया जा रहा है ।

जब सवत् १५५० हुआ और दुमुख नामक सम्बत् धीत गया और धावण शुक्ला सप्तमी आई तब भीम ने डगवे की कथा सुनाई । उनका (कवि का) कौन सा ठाँव है । कौन सा उनका देग है ? और कौन सा गाँव है जहाँ ये कवि कबोद्वर विचरण करत है ? वहाँ कौन भूपाल बसता है ? पृथ्वी के धम का प्राण स्वरूप

१ दे० परिशिष्ट लखनसेनी का हरिचरित्र विराटपत्र

२ अग्र स० २१२८, वेष्टन सख्या १३५० ।

३ पृष्ठ ५१, नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी, वष ५६, स० २००८ ।

एक दश है जहाँ निमल रह ?) बसते है । कवि नष्ट हो जाए कौन उस दोष दे ? यदि वह नाम न उल्लिखित करे ? कविता का वहाँ उत्पत्ति हुई । उनका कौन नगर है उसकी क्या जाति है ? उस समय अमरपुर कहते है । उधे वसुङ्ग इन्द्रदेव ने प्राप्त किया ? वहाँ जाति के कायस्थ करन कुबेह ? ये जो कलि में नेम आचार का पालन करते थे । उनके बखीर पुत्र नौरतन हुए जो अत्यन्त प्रबुद्ध और सु दर शरीर क थे । वीर ने मत मतग को पृथ्वी पर पछाड दिया । तब सबने उसको गवरह (गौरव) लिया । उसी कुल में बरियार भीम उत्पन्न हुए थे कुछ कथा कहना चाहते है । भारत की डगवै कथा का गायन करना चाहते है ।^१

पत्रिका में विवरणकार ने लिखा है कि जान पड़ता है कि रचयिता अमर नगर के निवासी और वसुङ्ग इन्द्रदेव कायस्थ के पुत्र नौरतन के कुल में उत्पन्न हुए थे ।

उद्धृत अंश की भाषा अवधी है ।

६२ (३) पुरुषोत्तमदास का जमिनी पुराण—

नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी के हिंदी ग्रन्थो के तेरहवें अर्धविक विवरण (१९४६ २८) में पुरुषोत्तमदास के जमिनी पुराण की यह सूचना दी गयी है—

सत्या ३६३ जमिनी पुराण रचयिता— पुरुषोत्तमदास (दास) कागज देशी, पत्र २६७ आकार १५ ६ इंच, पक्ति (प्रति पृष्ठ ११, परिमाण (अनुपुष्ट्य)— ४८००, पुण रूप अद्य त जीण पद्य लिपि नागरी रचनाकाल स० १८५२, १७९५ ई० लिपिकाल स० १८५८ १८०१ ई० प्राप्ति स्थान श्रीकृष्ण बिहारी मिश्र माडल हाउस लखनऊ ।

उपयुक्त विवरण के अनुसार इस ग्रन्थ का रचनाकाल सवत् १८५२ वि० है । विवरणकार ने ग्रन्थ का यह रचनाकाल 'अन्त में उद्धृत इस वाक्य के आधार पर दिया है—'इति श्री महाभारत अस्वमेध के पवनि राजा जय संपूर्ण चरणन नाम पद्य भाव सभी ध्याय ४६ इति श्री जयमुनि कथा समाप्तम् सवत् १८५२ चैत्रमास वृश्च चतुर्थी चंद्रवासर लेपनीर्थी पितवर भाट धस्यान विरनाउ ।

६३ वस्तुतः विवरणकार ने लिपिकाल को रचनाकाल समझ लिया है । लिपिकार ने अपना नाम पितवर भाट बताया है और अपना स्थान 'विरनाउ'

वताया है। सीमाव्यवस्था हमारे अनुमान की पुष्टि चौहवें त्रैवापिक विवरण (सन् १६२६ ३१ ई०) से हो जाती है। इसमें ग्रन्थ का विवरण इस प्रकार दिया गया है—

सन् २७४ जेमिनी पुराण रचयिता पुरुषोत्तमदास (दादरपुर) पत्र १६०, आकार १० ३/४ × ४ ३/४ इंच पंक्ति प्रति पृष्ठ ८ परिमाण (अनुच्छेप) ३८४०, खडित रूप बहून पुराणा, लिपि नागरी, रचनाकाल स० १५५८ १५०१ ई० प्राप्ति स्थान प० कैनाशापतिजी तेनगुरिया पुरोहित ग्राम बिजौनी डाकघर बाह जिला आगरा ।

ग्रन्थ का प्रारम्भ दोनों हस्तलेखों में समान है, अतः कोई संदेह नहीं रह जाता कि दोनों हस्तलेख एक ही ग्रन्थ के हैं। द्वितीय प्रति (१६वें त्रैवापिक की) खडित है और उसमें लिपिकाल नष्ट दिया हुआ है। इस प्रति का विवरण अत्यन्त सावधाना से दिया गया है। ग्रन्थ में सङ्कोच कर रचनाकाल सम्बन्धी और कवि परिचयात्मक पंक्तियाँ अलग दे दी गयी हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल सन् १५५८ है न कि तरहवें त्रैवापिक विवरण में दिया हुआ सन् १८५२। कवि ने रचनाकाल का उल्लेख इस प्रकार किया है—

सन् पत्रह से अठ्ठावन निमन्त चत माल (स) का आवन
शुक्ल पत्र प्रतिपक्षा मुहावन श्री गोविन्द कथा गुन गावन
उत्तम दिवस चन्द्रकर वारा, मेपक सुज वसत प्रगासा
हरिप्रसाद पुरुषोत्तम दासा, अश्वमेध करि कौह प्रगासा^१

यही नहीं कवि ने अपने निवास स्थान, रासक (सम्भवा आश्रयदाता) और उसका भी परिचय दिया है। परिचय यहाँ विवरण में उद्धृत रचनाश के आधार पर दिया जा रहा है—

६४ जम्बू द्वीप भरत खड में का यकुब्ज की प्रचण्ड परिपाटी है। वहाँ सप्तपुरी नामक महास्थान है कोशल देश की सब कोई जानता है। इस देश में निमल नीर वाली सरयू के तीर रामपुरी अयोध्या है। अयोध्या में पापो का नाश करने वाला 'सगादार' नामक स्थान है जहाँ रामचन्द्र का आसन है। वहाँ से चार योजन दक्षिण, पापहारिणी आदि गोमती बहती है। वहाँ नारायणपुर नामक सुन्दर देश (इलाका या गाँव ?) है। जहाँ विकार नरेश बसते हैं। उनके राजकुमार ब्रह्म दधीच मुजान हैं। उनकी समानता करने वाला कोई अन्य राजा अन्य नहीं है। उस इलाके में दादर नामक नगर है जहाँ यतिया और

सतियो का बहुत आदर होता है। उस नगर के राजा रुपमल्ल हैं (जिनका वंश लक्ष्य है। वे नित्य धर्म की उन्नति चाहते हैं। उसी आदर ग्राम में राममल्ल पुरुषोत्तम निवास करते हैं। पुरुषोत्तम की प्रति वंश की विभूति अपने पिता क्षेमानन्द में बहुत है। क्षेमानन्द के पुत्र पुरुषोत्तम हैं। वे पहले जगन्नाथ गये। वहाँ जाकर उन्होंने कमल नयन भगवान् की प्रदक्षिणा की। फिर अम्बकपुरी में जाकर गुरु किया। उन्होंने अपने गुरु रघुनाथ का चरण मनाया जिन्होंने उन्हें 'याकरण और निश्चुन (?) पढाया।'

खोज रिपोर्ट में दिए गये अंश को परिशिष्ट में उद्धृत कर दिया गया है।

इतने प्राचीन कवियों का इतना स्पष्ट परिचय कम मिलता है। पुरुषोत्तम कवि अवध प्रदेश के थे, उनकी रचना की भाषा अवधी है, जो उनकी मातृभाषा रही होगी।

ध्वनि विचार

व्यजन

६५ प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त व्यजन नीचे दिए जा रहे हैं—

क	ख	ग	घ			
च	छ	ज	झ			
ट	ठ	ड	ढ	ड्	ढ्	
त	थ	द	ध			
प	फ	ब	भ			
र	ल	ग (विरल)	स			
ह						
अद्व स्वर	य	व				
अनुनासिक	ङ	ञ	ण	न्	ह्	म्
	(अनुस्वार)					

६६ विभाजन

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त व्यजनों को वास्तविक स्थिति क्या थी इसे ठीक ठीक प्रामाणिकतापूर्वक आज नहीं बताया जा सकता है। केवल तर्कमग्न अनुमान लगाया जा सकता है। यह अनुमान मुख्यतः दो आधारों पर लगाया जा सकता है, ध्वनि सम्बन्धी ऐसी प्राचीन उल्लेखा, जिनसे व्यजनों की स्थिति पर प्रकाश पड़ता हो तथा आधुनिक अवधी के व्यजनों की स्थिति के आधार पर।

प्राप्त ग्रीक और भारतीय अभिलेखों तथा प्राकृत वैयाकरणों की सूचनाओं के आधार पर डा० मुनीतिशुमार चटर्जी ने यह विचार प्रकट किया है कि म० भा० शा० के उत्तर काल तक तालव्य स्वर व्यञ्जन सवन स्पर्श सधर्षो हो गए थे (दे० १३२ ओ० डी० बी० एल)। ग्रीक अभिलेखा में ध् के लिए स्, स, त, और ज् के लिये ज् इ ध्वनियों का प्रयोग हुआ है (दे० १३२ ओ० डी० बी०

एल)। इनके अतिरिक्त पररुचि से लेकर मार्गण्डेय तक के प्राच्य वैदिकग्रन्थों ने चयन ध्वनियों के द्विविध उच्चारण का संज्ञेय या उच्चेय किया है। मार्गण्डेय ने लिखा है कि मागधी में च ज ब पून य होता है। (च, ज योर्जादि य स स्वात्) षटर्षी के अनुसार सयुक्तांगर च्च यज निश्चित ही सप्तर्षी श्रुति के साथ स्पष्ट तालश्च स्पग-सप्तर्षी उच्चारण का द्योतक है (दे० १३२ आ० डी० बी० एल)

डॉ० बाबूराम सक्सेना ने दिखाया है कि आधुनिक अवधी में च छ जू ऋ का उच्चारण स्पग सप्तर्षी है (दे० १२ ए० अ)। इसलिये हम बात को पूरा समझना बना है कि विवेच्यकाल में इनका उच्चारण स्पग सप्तर्षी था।

६७ स्वर मध्यस्थ ङ और ढ ध्वनियाँ म० भा० आ० में इ और ढ में परिवर्तित हो गई थी (दे० १३३ ओ० डी० वी० एल)। प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में ङ और ढ से विकसित र ध्वनि मिलती है दारिड। २८ च० (५) <दाड़िम, कुरिल <कुटिल। ङ और ढ ध्वनियाँ का इ हुए बिना र् में विकसित होना सम्भव नहीं प्रतीत होता। जहाँ तक 'ड' का सम्बन्ध है वह फारसी लिपि में स्पष्ट है। उदाहरण के लिए 'दुग्गम गड'। ४ मिर० मनेर खानकाह की प्रति में ३,५ लिखा है। इससे स्पष्ट है कि यहाँ ३,५,१,० 'गड' के लिये है 'गड' के लिए नहीं। इसलिये प्रारम्भिक अवधी में इ और ढ ध्वनियों का होना निश्चित है।

६८ यद्यपि प्रारम्भिक अवधी की विवेच्य रचनाओं में य और व के प्रचुर उच्चारण मिलते हैं किन्तु इनका वास्तविक उच्चारण नया था और इनकी स्थिति नया थी यह बताना दुष्कर है। डॉ० बाबूराम सक्सेना के अनुसार आधुनिक अवधी में इनका उच्चारण बहुत कुछ इ और उ की भाँति होता है (दे० ६८, ६९ ए० अ)

डॉ० चर्जी ने लिखा है कि ई० पू० की तीसरी शताब्दी तक 'य' का उच्चारण सप्तर्षी हो गया था और फिर यह म० भा० आ० के उत्तर काल तक स्पग सप्तर्षी होकर मूल ज से अभिन्न हो गया (दे० १३३ ओ० डी० वी० एल)।

अवधी में 'ग' 'गे' में प्रारम्भिक व प्रायः 'व' हो गया है। ज्ञात होता है कि प्रारम्भिक अवधी में आधुनिक अवधी की ही भाँति 'व' का उच्चारण 'उ' से मिलता जुलता था और उससे विभक्त मात्र ही भिन्न था। सम्भवतः इसी उच्चारण को प्रकट करने के लिये प्रारम्भिक अवधी के हस्तलेखों में कहीं-कहीं 'व' को 'उव' लिखा मिलता है।

६९ ऊष्म ध्वनियों में प्रारम्भिक अवधी में साधारणतः दन्त्य (सम्भव

वत्स्य) सघर्षों स ही मिलता है। यद्यपि कभी कमार 'ग' मिल जाता है। 'ग' रा० ज० जसी धार्मिक रचना में बहुतायत से मिलता है। किन्तु 'ग' अवधो की प्रकृति का उच्चारण नहीं है। 'प' का प्राचीन उच्चारण प्रारम्भिक अवधो में नहीं रहा होगा। यद्यपि यह वण मिलता है। लिपि चिह्न 'प' 'ख' ध्वनि को प्रकट करता है।

शेष व्यञ्जनों के विषय में कुछ विशेष विचारणीय नहीं है।

अनुनासिक

७० अनुनासिकों में ङ् ञ अपने वग के स्पर्श के पूर्व शब्दों के मध्य में ही मिलते हैं। जैसे—'लङ्क' (लिखित रूप लक)। २ लो० क० पञ्च (लिखित रूप पच)। २८ मै० स०

'ण्' शब्दों मध्य में और अपने वग के स्पर्श के पूर्व प्रयुक्त होता है—
(क) भै हरण (भय हरण)। २।१० ह० च०। किन्तु 'ण्' का इस प्रकार का प्रयोग विरल है। (ख) कुडर (५२ लो० व० रुड। ११ स० क०।)

न् और म् आदि मध्य दोनों स्थितियों में मिलत है—

नरवै । २६ च०, नरिदन । १ मै० स०

अकुतान । ६ रा० ज० दूनहु । ५ ग० ज०

मूख । २७ लो० क० मोती । १ स० क०

परम । ४६ लो० क० रामहि । ४६ लो० क०

अनुस्वार (—) जिम स्पर्श के पूर्व प्रयुक्त होता है उस वग के अनुनासिक (पचम वण) का प्रतिनिधित्व करता है—

लक । २ लो० क०, पच । २८ मै० स०

कुडर । ५२ लो० व०, वधन । ३।१० ह० च०

खम । १० च०

म् कहा-वही व, म्ब या ब में परिवर्तित दिखाई पड़ता है—

कवैल । ४५ मिर० (सि), अद्वित । ४२ स० क०

दारिब । ३५ मिर० (सि)

एक स्थान पर 'म्ब' का परिवर्तन 'म्म' में दिखाई पड़ता है—

अमर । २।२ मिर० (सि०) < अम्बर = बादल

म्ह और 'ह' प्रारम्भिक अवधो में सदैव शब्दों के मध्य में प्रयुक्त होते हैं।

म्ह बहुत कम मिलता है—

तिह । २ सा० व०, लीन्ह । २ मै० स०

दोन्ह । ५ स० व०,

सम्हा । २५ प०

तुम्ह । ४ मे० स०,

तुम्ह । १७ मिर०

७१ प्रारम्भिक अवधौ में प्राप्त ध्वजनों का रूप सम्भवतः इस प्रकार था—

	स्वरयत्र मुखी	कथ्य	कठारतालव्य या मूषय	तालव्य	वत्स्य	दत्त	ओप्य
स्पर्श		क ग	ट ठ			तृ इ	प ब
महाप्राण		ख घ	ठ ड			ध ध	प भ
स्पर्श सघर्ष				च ञ			
महाप्राण				छ झ			
पाशिव				त			
महाप्राण				दृ			
गुठित					र		
रगिष्ठ			क				
महाप्राण			ख				
सघर्ष	ह			न (?)	स		
अनुनासिक		ट	ण	य	र		म्
महाप्राण					दृ		म्
अर्द्धर					य		व

७२ प्रारम्भिक अवधौ की विशेषता वरतः समस्त मुख कर्णों सेना उच्चारण
की विधा है किमुकि अवधौ पर महाप्राण मुख र (रर) व अर्द्धर की
सूचना विने । मृ, मृ और मृ, सम्भवतः एक ही वरत की तद्वत्ता क मर
में प्रयुक्त होते थे ।

जैसा पहले कहा गया है श् अवधी वा अपना व्यञ्जन नहीं है, प्रारम्भिक अवधी में भी वह बहुत कम प्रयुक्त हुआ है। उसे 'इचुयशाना तालु' के अनुसार तालव्य ही मान लिया गया है। यो बंगाली में श को चटर्जी ने तालव्य वत्स्यं ठहराया है (दे० १४० ओ० बी० वी० एल)।

७५ ङ, ढ, ल्ह् को छोड़कर सभी निरनुनासिक व्यञ्जन शब्द के आदि और मध्य में प्रयुक्त होते हैं हैं ङ्, ढ, ल्ह् शब्द के आदि में नहीं प्रयुक्त होते।

क्—कचोर । २ लो० क०

किरण । १ मै० सत,

रक्त । ४ लो० क०

अधकाल । २४ स० क०

कारन । १।८ ह० च०

लोरिक । १३ मै० सत०

ख्—खोपा । २ लो० क०

खाइ । १६ स० क०

लेखें । ५ लो० क०

राखा । २ रा० ज०

खेलहि । २ प० प० १ ह० च०

माख । १७ मै० सत०

ग्—गोवार । ५ च०

गनि । १ मिर०

मुगुत । ७ मै० सत

गावहि । १।८ ह० च०

सोहाग । ३ च०

जग । ५ मिर०

घ्—घेरसि । २ लो० क०

घट । ३ स० क०

सिघ । ३२ स० क०

भात । २।८ ह० च०

मेघ । २।८ ह० च०

सिघासन । ६ मिर०

च्—चांद । १६ च०

चित । १ स० क०

पच । २८ मै० सत

चीन्हा । १ मै० सत

बकुची । १७ च०

खैची । १२ रा० ज०

छ्—छाडेउं । ३ लो० क०

छाडि । ४२ स० क०

पाछें । २१ मै० सत०

छुधावत । १।८ ह० च०

बिछवाई । २ ला० क०

किडु । १५ मिर०।

ज्—जुगत । १३ च०

जम । २ रा० ज०

बाज । २।८ ह० च०

जोवन । २१ मै० सत

खन्नहजा । १२ च०

दुरजोवन । ८ स० क०

म्—भनकारा । १२ लो० क०

मूठ । २।८ च०

भारी । ३२ स० क०	जुमी । २।८ ह० च०
साँझ । २१ स० क०	माँझ । २१ मिर०
ठ—ठूट । २३ च	टोना । २ मै० सत
टेका । ४५ स० क०	वाट । ८ च
कपट । मै० सत	भाट । १७ स० क०
ठ—ठेला । १६ च०	ठरकाई । १।८ ह० च०
ठढा । ६ रा० ज०	रोठा । १७ क०
भूठ । १।८ ह० च०	उठि । ५ रा० ज०
ड—डराउ । १३ लो० क०	ढहकावा । ११ मै० सत
ढवर । मिर०	लाहू । १ लो०
हिंडोला । ८ मै० सत	कुण्ड । ३५ स० क०
ड—छाड़ेंउ । ४८ लो० क०	गड़न्त । ५ मै० सत बड़ । ४।८ ह० च०
ढ—हू डि । १० च०	हुकद । ३ मै० सत
ढाका । ३४ स० क०	गढ़ । १ लो० क०
बढावा । ३।८ ह० च०	चढ़े । २३ स० क०
ड—गढ । १ लो० क०	बगवा । १।३।८ ह० च० चढे । २३ स० क०
त्—तेहि । ५ लो० क०	तहनी । १२ मै० सत०
तन । ३१ स० क०	उतर । १ लो० क०
नित । ११ मै० स०	ओति । २ मिर०
प्—घोरा । ३ लो० क०	पीती । ११।मै० सत
बैघत । ३१ स० क०	हाप । १४ च०
पुषिमो । १५ मै० सत	अरय । १२ मिर०
द्—दइय । १६ लो० क०	दरब । मै० स०
दुसरे । ४ मिर०	चाँ । १ लो० क०
जदुनाप । ३।८ ह० च०	बदला । १० स० क०
प्—धीप । ५ च०	घरउहि । ४।८ ह० च०
धीग । ४ रा० ज०	बुधि । ३ लो० क०
धुपावत । १।८ ह० च०	दगधि । ३१ स० क०
प—पावत । १ लो० क०	परा । ४।८ ह० च०

पक्षी । २८ मिर (श)
 उपरहि । २।८ ह० च०
 फ—फिर । ३ लो० क०
 फुनि । ६ मिर०
 बिफारि । मे० सत
 ब—बसीठ । १ लो० क०
 वेद । ४ स० व०,
 जबहि । २।८ ह० च०
 भ—भा । १ लो० क०
 भो । ३१ स० क०
 सभ । ४ मे० सत
 य—यहि । ५ लो० व०
 येहि । २६ स० क०
 हरियर । ८ मे० सत
 र—राय । १ च०
 रूख । २६ स० क०
 भारि । ५ रा० ज०
 लू—लाज । १७ लो० क०
 लेहु । ११ मिर०
 मालिन । २ मे० सत
 ल्ह—हुल्हसे । १ प०
 काल्हि । ४२४ मिर०
 ब—बाह । १८ च०
 बोहि । ४२४ मिर०
 आवत । १ मे० सत
 श—श्रवन । ४ रा० ज०
 रीखेसर । ४ रा० ज०
 स—सरग । १ लो० व०
 सकति । ३ मिर०
 उपघी । ५ रा० ज०

दिपहि । २ लो० क०
 अलप । २ स० क०
 केरेसि । २ मे० सत
 बिहफइ । ७ लो० क०
 मडफ । ४६ स० क०
 बहुरि । ४ प० प० १ ह० च०
 अब । ४ लो० क०
 कवि । ५ स० क०
 भुइ । २।८ ह० च०
 अभरन । ७ ला० क०
 श्राभन । २८ स० क०
 यहू । २५ मे० स०
 पाइय । १ लो० क०
 दाया । ६ रा० ज०
 रचि । ५ रा० ज०
 हकारा । १ च०
 सरीरा । २७ स० क०
 लोह । २ मे० सत
 निरमल । १७ लो० व०
 अकेल । १ मिर०
 कुल्हारी । २।६ ह० च०
 वा । ४।८ ह० च०
 सावा । १ लो० क०
 पेंवरि । ४ मिर०
 द्यामी । १ स० व०
 दोश । ८ मे० प०
 सामी । ७ रा० ज०
 संदेस । ४ या० क०
 देसी । १० मिर०

ह—हाथह । ७ लो० व०
हम । ५ रा० ज०
चौहा । १ मै० सत

हवराई । २ मै० सत
नहूँ । ७ लो० क०
करहु । ७ रा० ज०

स्वर—

७४ प्रारम्भिक अवधौ के मूल स्वर इस प्रकार हैं—

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ ओ, औ

प्रारम्भिक अवधौ में 'ऋ' स्वतंत्र या किसी व्यंजन से संयुक्त रूप में नहीं मिलता है। 'ऋ' का स्थान 'रि' ने ले लिया है जैसे—रिखि । ४६ स० क० ईश्वरदास की रचना 'स्वर्गारोहिणी कथा' में इसका प्रयोग शब्द के मध्य (कृष्ण । ४ स्वर्गा०) में मिलता है किंतु इसका उच्चारण प्राचीन भारोपीय न हो कर क्रिष्ण रहा होगा। जहाँ तक अन्त्य स्वर—अ का प्रश्न है, डॉ० बाबूराम सवसेना ने इसकी स्थिति प्रारम्भिक अवधौ में स्वीकार की है (दे० ए० अ० ८६)। उ० 'य० की विवेचना करते समय डा० चटर्जी ने भी इसकी स्थिति निस्संदिग्ध रूप से मानी है (दे० ७० ५० उ० व्य०)।

मूल स्वरो के उदाहरण

७५ ये स्वर शब्द के आदि मध्य, अंत में मिलते हैं—

अ—अमोल । ५ लो० क०
मनुवज्ज । १५ लो० क०

रक्त । ४ लो० क०

आ—आज । १ लो० क०
सौपा । २ लो० क०

अयानी । ३ लो० व०

इ—इक १ मै० स०
विभारि १ मै० स०

मालिन । २ मै० स०

ई—ई । ५४ स० क०
मोती । ४ स० क०

दीन्ह ५ स० व०

उ—उरर । २।८ ह० व०
अह । ३।८ ह० व०

जनुआन । ३।८ ह० व०

ऊ—ऊरट । १४ लो० क०
लाहू । १ लो० क०

भूठ । १ लो० क०

ए—ए हि । १७ रा० ज०
आएँ । १७ रा० ज०

अएँहू । १८ रा० ज०

ए—एव । ५ मिर०	देखि । २ मिर०
मुलाने । ३ मिर०	
ओ—ओहन । १२ लो० क०	कोउ । ८ लो० क०
जा । ३ ला० व०	
औ—ओलन । ८३ स० क०	रोवै । ३२ स० क०
तो । ३६ स० व०	

७६ अनुनासिक स्वरो के उदाहरण—

इन स्वरो के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं—

अ	अधियारा । ५ लो० क०
आँ	भाभर । १६ मै० स०
इ	दिपहि । २ ला० क०
ई	गोसाइ । २।६ ह० ष०
उँ	आएहुँ । १६ रा० ज०
ऊँ—	ढूँढइ । २१ मिर०
एँ (ह्रस्व)—	जेँहि । ६ लो० क०
ए—	मेंटेसि । ३६ स० क०
आ (ह्रस्व)—	कोँहार । ३ स० क०
ओ—	मोला । २६ मै० स०

अनुनासिक व्यञ्जन के निकटवर्ती स्वरो का भी उच्चारण कभी कभी अनुनासिक होता था जसा कि निम्नलिखित उदाहरणों से प्रकट होता है—

मह । २८ च०	मैनाँ । २, मैस०	बिनाँ । १३ मैस०
माटी । १५ मै० स०	भाँय । ४२ स० क०	

स्वर सयोग

७७ प्रारम्भिक अवधो की रचनाओं में प्राप्त स्वर-सयोग नीचे दिये जा रहे हैं—

अइ—	वहुतइ । १ लो० क०
अइउ—	भइउँ । ६ लो० क०
अइ—	भई । ७ लो० क०
अउ—	समउ । ४ लो० क०
अऊ—	गऊ । १० च०

आइ—	नाइ । १ लो० व०
आई—	जाई । २ लो० व०
आउ—	वइसाउ । ७ स० व०
आऊ—	राऊ । ६ स० व०
आएँ—	जाएँ । १८ ह० च०
आएँउ—	लाएँउ । ८० लो० व०
आए—	आए । ८० मिर० (गि)
इअ—	विअहि । ४ रा० ज०
इआ—	दुनिया । २।६ ह० च०
इउ—	रहिउ । ३४६ मिर० (गि)
इएँउ—	निएँउ । ७ लो० व०
इए—	दिए । ८।१ ह० च०
ईऊ—	सोऊ । ८२ मिर० (शि)
उअ—	गअअ । १६ मे० स०
उअउ—	दुओ । २।७ ह० च० (उच्चारण दुअउ)
उआ—	भुआर । ६ स० क०
उइ—	दुइ । २१ स० क०
उई—	गईई । ३६४ मिर० (शि)
उए—	मुए । ५४ लो० क०
एँइ—	वेई । ३३ च०
एई—	लेई । ८२ मिर० (शि)
एँउ—	भएँउ । २।६ ह० च०
एउ—	देउ । ५ लो० क०
एऊ—	लेऊ । २६ च०
एएँउ—	खेएँउ । २५ लो० व०
ओइ—	कोइ । ४६ लो० क०
ओई—	होइ । ५ मिर०
ओई—	कोई । १ मिर०
ओँउ—	कोउँ । ३६ च०
ओउ—	कोउ । ४६ लो० क०
ओऊ—	कोऊ । ४४ च०

ध्वनि परिवर्तन —

७८ प्रारम्भिक अवधौ में मिलने वाली ध्वनि परिवर्तन की प्रमुख प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं —

(१) क्षतिपूरक दीर्घाकरण—

ऊतर । १७६ च० (प)	<	उतर,
गाग । १० लो० क०	<	गङ्गा
चीत । १६४ च० (प)	<	चित्त

(२) क्षतिपूरक अनुनासिकीकरण—

चित । ६ स०क०	<	चित्त,
मित । ४८ लो० क०	<	मित्त (?) <मित्र

(३) बहो कही द्वित्व रूप सुरक्षित मिलते हैं—

हृथ्य । २६० मिर० (शि)
कथ्य । २ मिर०

(४) कही कही गव्द के आद्य अक्षर में स्वर की मात्रा में परिवर्तन दिखलाई पड़ता है । यह परिवर्तन दीघ से ह्रस्व की ओर है—

दिवारी । ५ लो० क०	<	दीपावली,
अभरण । ७ लो० क०	<	आभरण,
अनदा । ५ स०क०	<	आनद,
अरभ । ५ स० क०	<	आरम्भ,

(५) आद्य और अनादि अक्षर में स्वर के गुण में परिवर्तन—

दँवस । २५३ च० (प)	<	दिवस,
वेँरास । ७ लो० क०	<	विलास,
सौरत । ३२ च०	<	शोणित,
बिहून । ३०३ मिर० (शि)	<	बिहीन,
लिलार । ३२ मिर० (गि)	<	ललाट

(६) ए और इ का परस्पर विनिमय—

वेरास । ८ लो० क०	<	विलास,
दवस । २५३ च० (प)	<	दिवस,
खड़ा । २० रा० ज०	<	श्रीड़ा,
पिरम । ६७ च० (प)	<	प्रेम

(७) 'उ' वा 'आ' में परिवर्तन—

कोडर । २०७ मिर० (घ)	<	बुडल,
गोफा । ३७ मिर (शि)	<	गुफा

(८) शब्दों (विशेषतः क्रिया रूपों) के मध्य स्वर 'अ' का कभी क्षतिपूर्क और कभी अकारण दीर्घीकरण—

भगान । १३ स० (प)	<	भाग्,
मगाहु । १४८ मिर (शि)	<	माग्,
ढेराउ । १४७ मिर० (शि)	<	ढर
सत्यावतो । १५ स० व०		सत्यवतो

(९) अत्य 'अ' का दीर्घीकरण—

बाछा । १४ स० क०	<	वत्स,
मता । १८ मिर० (शि)	<	मत,
म्रिया । २२ मिर० (शि)	<	मृय

(१०) शब्द के आदि में 'अ' और 'इ' का आगम—

अस्तुति । ५११ ह० च०
अकलकित (कलकित के अर्थ में) । ४ स० क०
अस्थान । ५५ स० क०
इस्त्री । २।२३ ह० च०

(११) उद्धृत अ को 'य' श्रुति—

लौयन । २१ मिर० (शि)
सायर । ७३ मिर० (शि)

(१२) स्वरभक्ति—

परकारा । १७ र० ज०	<	प्रवार,
सासतर । २२१ मिर (शि)	<	शास्त्र

(१३) आ वा 'ह' में परिवर्तन—

सारस	<	सहरस । ४।१८ ह० च०
------	---	-------------------

(१४) मूल 'य' वा 'ज' में परिवर्तन—

जउ । ५ लो० क०	<	यदि,
आयुत । ३२ स० क०	<	अयुक्त
मजूर । २५१ मिर० (शि)	<	मयूर

(१५) ज और 'द' का परस्पर विनिमय—अविकाश उदाहरण ज < द
क ही मिले है—

दुदिष्टिल । २१ स० क० < जु—युधिष्ठिर
 अपत्स । २७६ मिर० (शि) < अपजस < अपयश
 जलमेदव । २३० मिर (शि) < जनमेजय
 सावज । ३५ स० क० < श्वापद

(१६) मध्यवर्ती ट, ड, ढ का र में परिवर्तन—

कुरिल । ३४ मिर० (शि) < कुटिल,
 खरग । २५४ च० (प) < खडग
 दारिड । १८ च० (प) < दाडिम

(१७) ड, 'र' में परिवर्तित होकर कभी कभी 'ल' बन जाता था—

तालुका । रा० ज० < ताडका (?) < ताडका

(१८) स० क० में एक स्थान पर 'उद्धार' के स्थान पर 'उद्धाट' मिलता है। 'तस भये उद्धाट' । १४ स० क०, यह या तो लिपिकार का प्रमाद है या जिस प्रकार ट > ड् > र क ध्वनि परिवर्तन हुआ है, सम्भवत उसी प्रकार र > ड > ट का भी विकास हुआ होगा।

(१९) र् और ल का परस्पर विनिमय—

'र' और 'ल' का परस्पर विनिमय प्राचीन काल से होता रहा है। प्रारम्भिक अवधि में अधिकांश उदाहरण र < ल के हैं। यह परिवर्तन अनादि अक्षरो में हो दिखाई पड़ता है—

बेरास । ८ लो० क० < विलास
 दर । १३८ च० (प) < दल
 सकर । १६३ च० (प) < सकल
 मदिल । ५७ सक क० < मदिर,
 दुदिष्टिल । ५० मिर (शि) < युधिष्ठिर

(२०) 'न' का 'ल' और 'र' में परिवर्तन—

जलमदव । २३० मिर० (शि) < जनमेजय
 जरम । ३५३ प० < जम

सम्भवत 'न' 'र' में परिवर्तित होने के पूर्व 'ल्' हुआ होगा—

(२१) 'परग' । ५० लो० क०

पग में 'र' का आगम सम्भवत किसी ण्द के साहचर्य पर हुआ होगा।

(२२) विरोग ५ लो० क० < वियोग अथवा वित्रोग । किन्तु य, अथवा 'व्' का 'र' में परिवर्तित होना समझ नहीं प्रतीत होता। इन ण्द का प्रयोग आज भी अवधो में होता है (लेखक स्वयंभूक्त) इसलिए यह लिपिकार का प्रमाद भी

नहीं है। जान होता है कि वियोग में रोदन का भाव जोन्ने के लिये इस गब्द का निर्माण लोके में हुआ था। वियोग + रोदन = विरोग ऐसी दशा में इसे स्वतन्त्र शब्द माना जाना चाहिए।

(२३) अल्पप्राण व्यजनो का महाप्राणीकरण—

सभ । ३१४ च० (प) / सव

खेडा । २० रा० ज / खीडा

भभीछत । २७ स० क० / वि० / विभोपण,

मडफ । ३६० मिर० (शि) / मडप

(२४) असयुक्त व्यजनो का अवशिष्ट महाप्राणत्व—

लिहा । २७ मिर० (शि) / लिख

रुहिर । ३३ मिर० (शि) / रुविर

(२५) दाउद की रचना में एक स्थान पर 'स' का परिवर्तन 'क' म दिखलाई पड़ता है—

कराप । ४५ लो० क० / सराप / शाप

सम्भवत इस परिवर्तन का क्रम इस प्रकार रहा होगा—

शाप / धाप / सराप / चराप / कराप क्योंकि

(२६) 'ग' का 'च' में परिवर्तन भी दिखलाई पड़ता है—

चतुरगुन । १४ रा० ज० / चतुरग्न

(२७) स छ का परस्पर विनिमय—

अपछरा । ३१ मिर० (शि) / असरा

परसेव । १८४ मिर० (गि) / परछेव के अर्थ म

(नेहि लगि परसेव गधप देव)

(२८) 'म्' का 'म्ब' व 'व' या 'उं' में परिवर्तन—

अव्रित । ४२ त० क० / अमृत

अवरित । ८८ च० (प) / अमृत

चवेली । १६५ मिर० (शि) / चमेली

आव । ११८ मिर (गि) / आम्न

हवत । २८० च० (प) / हमन्त

दारिड । १८ च० (प) / दाडिम

कभी कभी 'म्ब' का परिवर्तन 'म्म' में दिखलाई पड़ता है—

अमर । ०५२ मिर० (शि) अम्बर

(२९) य का व में परिवर्तन—

विवोग । ७८ मिर० (शि) ∟ वियोग

कवा । ३ । ४ ह० च० ∟ कया

अतिवत् । २४१ मिर० (शि) ∟ अत्यत्

(३०) मूल 'व' का व में परिवर्तन—

मूल 'व' का 'व' में परिवर्तन अवघो की प्रमुख वनिगत विरोधता है ।

बेरास । ८ लो० क० ∟ विलास,

वरख । ६ स० क० ∟ वय

कवि । ५६ स० व० ∟ कवि

बस । ६७ मिर० (शि) ∟ वस

सुवास । ११३ मिर० (श) ∟ सुवास

(३१) 'न' का न्य में परिवर्तन—

न्यानी । स० क० ∟ नानी

जग्य । १ । २३ ह० च० ∟ जन

(३२) 'ज' का न् में परिवर्तन—

खागा । ५० स० क० ∟ खज

(३३) प्रारम्भिक अवधी में श्व का विकास क, छ, ख् तीनों यजना म हुआ दिखलाई पड़ता है—

राकस । ३ । १६ ह० च० ∟ रागस,

परतछ । २ । २० ह० च० ∟ प्रत्यस

भखहि । ८० मिर० (शि) ∟ भक्ष

रूप विचार

रचनात्मक प्रत्यय

७९ प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में जो रचनात्मक प्रत्यय मिले हैं वे इस प्रकार हैं—

- (१)—आ, स्वाभक, लघ्वभक
पका । २७२ च० (प)
वाद्या । १४ स० क०
- (२)—आइ, भाव वाचक सज्ञा बनाने का प्रत्यय
महराई । ३५५ च० (प)
चनुराई । ११६ ट० च०
पहूनाई । १३६ मिर० (सि)
- (३)—आई सम्बन्ध वाचक (पुल्लिग आवा)
पराई । १०० मिर० (सि)
परावा । १० मै० म०
- (४)—आउ,—आऊ 'करने वाला' अपवोधक प्रत्यय
पेराउ । १४२ च० (प)
पेराऊ । २४ च० (प)
बटाऊ । ३७ लो० क०
- (५)—आउ,—आव—भाववाचक सज्ञा बनाने का प्रत्यय
मिराउ । २६४ च० (प)
मिरावा । १७० च० (प)
- (६)—आत —भाववाचक सज्ञा बनाने का प्रत्यय
(केवल 'शुशल के साथ प्राप्त)

दुससात । १६१ मिर० (गि)

- (७)—आन —त्रियार्थक सणा वा प्रत्यय
मवान । १३ व० (प)
मिलान । ३१२ मिर० (गि)
- (८)—आनी —'बाला के अथ विशेषण वा प्रत्यय
गवानी । ४८ व० (प)
(भवारिन के अर्थ में)
विनानी । २५ मिर० (गि)
(विशानी पठित व अथ में)
- (९)—आर, यार—भाववाचक सणा बनाने का प्रत्यय
जेउनार । ३२ व० (प)
धमकारा । १ व० (प)
अधियारा । ११ लो० क०
पत्तिमार । ५३ लो० व०
बढ़ियार । १० स० क०
- (१०)—आर, आरो—बाला बोधक प्रत्यय
जुभारा । ३६ व० (प)
धनुकार । ६७ व० (प)
रतनार । ७६ व० (प)
छननारो । ३३ व०
- (११)—आल—युक्त बोधक प्रत्यय (स्त्रीलिंग—इली)
रसाल । ७८ मिर० (शि)
रसाली । ६२ मिर० (शि)
- (११)—हया—करने वाला और लक्षणक प्रत्यय
परवरिया । १३७ व०,
रसिया । ७ मै० स०
रोगिया । ३० मिर० (शि)
- (१२)—इल —सम्बन्ध वाचक विशेषण का प्रत्यय
वनइल । १५२ व० (प)
अमरैल । २६० व० (प)

आगिल । ७।१ ह० च०

- (१३)—ई —भाववाचक सज्ञा का प्रत्यय
 कुरवानी । २।११ ह० च०
 नटवाजी । ३।१८ ह० च०
- (१४)—उ अ, उ आ—स्वाधक प्रत्यय
 गरुअ । ३३७ मिर० (शि)
 गरुआ । १२ स० क०
 अगुआ । ५३ मिर० (शि)
- (१५)—उना, —लघ्वयक
 मघोना । ७४ लो० क०
- (१६)—ऊ, —स्वायक, लघ्वयक
 धोरू, हरखू । १३५ च० (प)
 गरु । २३६ च० (प)
- (१७)—एरा —‘करने वाला’ बोधक
 कुदेरा, चितेरा । २५ मिर० (शि)
- (१८)—क, —‘करने वाला’ बोधक
 धानुक, पायक । ५१ च० (प)
 विघवासक । ४२० च० (प)
- (१९)—कार —करने वाला बोधक
 गुनिताकार । ३६ च० (प)
 धनुकारा । ११४ च० (प)
- (२०)—गुना—गुनी—(स्त्रीलिंग) आवतमूलक प्रत्यय
 चउगुना । २२ भै० स०
 दसगुनी । ११८ मिर० (शि)
- (२१)—न —क्रियायक सज्ञा का प्रत्यय
 गवन । ८ लो० क०
 बाजन । १७ स० क०
- (२२)—न —करने वाला वाचक प्रत्यय
 मगन । ८ लो० क०
 बनमाइन । ४२६ मिर०

- घावन । १६ मिर० (शि)
- (२३)—प —भाववाचक सता का प्रत्यय
सयानप । ७१ मिर० (शि)
- (२४)—ब क्रियाधक सता का प्रत्यय
बहव । १८ मै० स०
- (२५)—यर विनेपण का प्रत्यय
हरियर । २४ च० (प)
अधियर । ६ मै० स०
- (२६)—यार 'युक्त बोधक प्रत्यय
थनियारा । ५० लो० क० (अनीवाला, तेज)
बरियार । १६ च० (प)
गुनियारे । ५६ लो० क०
- (२७)—र स्वायक प्रत्यय
पियर । ६२ मै० स०
आघर । १५२ मिर० (शि)
- (२८)—रा लघ्वयक और स्वायक
लुबुधरा । ४०६ च० (प)
जियरा । १५ मै० स०
- (२९)—रु लघ्वयक, स्वायक
बछरु । २।१४ ह० च०
- (३०)—वा लघ्वयक प्रत्यय
बेटवा । १० रा० ज०
- (३१)—वाती, —बारी, 'वाली', 'वती' बोधक
पतिवाती । ४६ च० (प)
पियाबारी । २५८ च० (प)
- (३२)—सर —क्रम एव आवत बोधक प्रत्यय
दोसर । ४ लो० क०
चौसर । ६२ मिर० (शि)

उपसर्ग

८० प्रारम्भिक अवधौ की रचनाओं में जा तदभव या अथ तत्सम शब्दों के साथ प्रयुक्त सस्त्रुत के उपसर्ग मिले ह उ हैं नीचे दिया जा रहा है—

(१) अ— ध्येष्ठ मुदर के अथ में
अरुपइ । २ लो० क० अपरूप के अथ में

(२) अ— निपेधाथक
अमोला । ८८ च० (प)
अयानी । ३, लो० क०

(३) अउ — अपकप सूचक
अौगुन । १० लो० क०
अवगुन । ५१ मिर (ति)

(४) अत— निपेधाथक
अनजानत । ४१२ ह० च०
अनचिन ही । ३ मै० स०
अनरितु । २८ मै० स०

(५) अप— अपकप सूचक
अपजस । १८७ च० (प)
अपमगल । ५६ मिर० (ति)

(६) कु— 'कुरे' के अर्थ में
कुमारग । २४३ प०
कुदिन । ८५ लो० क०
कुबुधि । ५११ ह० च०

(७) नि— निपेधाथक
निगुनयहि । ६ लो० क०
निलज । १७ लो० क०
नीकलक । ३१२ ह० च०

(८) निर— निपेधाथक
निरमलि । ५ लो० क०
निरगुन । ४११ ह० च०

- (६) पर — अयायक)
परपुरुष । २५७ व० (प)
परनाती । ८ रा० ज०
- (१०) पर— 'विशेष रूप से' के अय में प्रयुक्त
परजरा । ७६ लो० व०
- (११) परि— अधतत्सम शब्दों के शब्द प्रयुक्त
परिहस । १७ मै० स०
परिहरि । ३।२ ह० च०
- (१२) प्रति— अधतत्सम पार, पाल के साथ प्रयुक्त
प्रतिपारहु । ४७ मिर० (पि)
प्रतिपाली १८६ मिर० (शि)
- (१३) वि— विशेष रूप म' क अय में प्रयुक्त
बिहसत । ८ लो० क०
बिमोहा । १६ लो० व०
बिमोहेव । ३१ मिर० शि०
- (१४) वि— निषेधायक
विरस । २४१ प०
विकरारी । ४ रा० ज० (फारफो बेकरार)
- (१५) स— सहित व अय में
सभूरन । ७ लो० व०
सयानी । १६ ला० व०
सभागी । २१ मिर० (पि)
- (१६) सु— सुन्दर या अच्छे के अय में
सुवानी । १२ लो० व०
सुरूपा । १६ ला० व०
सुरस । १।१ ह० व०

सज्ञा

८१ प्रातिपदिक शब्द—

प्रारम्भिक अवधी की विविध रचनाओं में प्राप्त प्रतिपादितों के अन्वय

स्वर नीचे दिए जा रहे हैं। डॉ० सक्सेना ने प्रारम्भिक अवधि के शब्दों में अन्त्य—अ को स्थिति स्वीकार की है (दे० १६५ ए० अ०)।

—अ

नग १२,	विहा १,	बसीठ ११ लो० व०
कपठ १६२,	नारद १२,	मालिन १२ मै० स०
ब्रामन १२,	विधिन ११	होम १२ रा० ज०
मन ११,	घर १६	जाप १४४ स० क०
पावक १३,	चरित १२,	कोह १२ मिर०
पुल्ल १४११	वोन् ११११,	बैस १७११ ह० च०

—आ

मनसा १५,	राजा १२,	वोरा १७ लो० क०
रतना १२,	बुलबुला ११,	हिडोला १८ मै० स०
सभा १३,	राजा १४,	अजोधा १३ रा० ज०
चरचा ११३,	वाछा ११४	हीरा १६, स० क०
रसना १३,	सवेरा १२,	पोया १६ मिर०
बचा १७११	दाआ १२११	भिला १५११ ह० च०

—इ

विहङ्गन १८,	आगि १६,	रेनि १६ लो० क०
मालति १३,	दूतिनि १३,	सउति १५ मै० स०
पाशनि ११५,	धति ११७,	सेमि ११७ रा० ज०
नारि १३०,	मुकुति १३३,	कीरति १४५ स० क०
सकति १३,	दिष्टि १२,	जोति ११ मिर०
भगति १४११,	आखि १४११,	रीलि १५११ ह० च०

—ई

हियारो १६,	अगुरो १४५ (च०),	प्रियमी १४५ लो० क०
पुयमी ११	कुटनी १८,	कौडी ११ मै० स०
काँबरो १४,	गोसाइ ११०,	सखिमी १३० रा० ज०
आरती ११७	धनुही १३०,	नेगो, जोगो १३५, स० व०
पानी १२,	तिरो ११,	जोतिखी ११५ मिर०
प्रियमी १४११,	पूहमी १५११,	सामी ११ ह० च०

—उ

समउ ।४,	नाउ, १८,	रितु ।५ लो० क०
चाउ ।२१,	रितु ।६,	पीउ ।१२ मै० स०
घनु ।२१	सुभाउ ।१३,	राउ ।३ रा० ज०
राउ ।३६,	जिउ ।४२,	पाउ ।४५ स० व०
पसाउ ।१२,	जोउ ।६,	आमु । २१ मिर०
बपु ।३।१	राउ ।५।१,	कुवेर ।३।११, ह० व०

—ऊ

बटाऊ ।३७,	भाऊ ।३०,	गोरू , १५ लो० क०
गुरु ।१,	नगदू	पलदू ।८ स्वर्गा०
आसू ।२१,	मिर०	
भ्रीजू ।१।१२,	राहू ।३।११ ह० व०	

—ए

पाडे ।३८ च० (प) केवल इसी छन्द में

टिप्पणी—

विविध रचनाओं में प्राप्त सज्ञा शब्दों का छरानुरोध से दीघ स्वर ह्रस्व और ह्रस्व दीघ होता रहता है ।

जैसे—

इह गुन कतहुँ न देखेउ नारी । १२ लो० क०
 आभरन बहून सो नारि सुरूपा । १६ लो० क०
 बात बहे अभि के सासा । ३६ स० व०
 तो सो एक कहीं निजु बाता । ३६ स० क०
 तुम्ह तो बचन राउ के पेला । ३६ स० क०
 हस्तिनापुर बसे सो राज । ११ स्वर्गा०

८२ विवेचित रचनाओं में साधारणतः सज्ञा शब्दों के लघु और दीघ रूप मिले हैं । दीर्घतर रूप बहुत कम मिले हैं । अकारान्त पुल्लिङ्ग रूप को अकारान्त करके दीघ रूप बनाया जाता है जैसे—

अति रे स्याम गोबरीरा भवर कि सरवरि होइ । ७ मै० स०

भर्वरा पुनि उड छाडन कहा । ५७ लो० क०

आकारान्त लघुरूपों (पुल्लिङ्ग) में अन्त्य आ को 'अ' करके और वा जोड़

कर उसका दीघ रूप बनाया जाता है जैसे—

बेटा—लघुरूप का दीघ रूप बेटवा जो इस पक्ति में दिखाई पड़ता है—

त्रिभुवन सुन्दर देखवा सो जग जनमिहि आइ । १० रा० ज०

ईकारान्त स्त्रीलिंग लघुरूपों के अत्य' ई को 'इ' करके और 'या' जोड़कर उसे दीघ बनाते हैं, जैसे—

तुहि जस तिरी कुवा घसि लेई । २४ लो० व०

तिरिया एक अकेली अहा । १८ लो० क०

ईकारान्त पुल्लिंग शब्दों के दीर्घ रूप स्त्रीलिंग रूपों की ही भाँति बनते हैं जैसे—

'भाइ' पुल्लिंग लघुरूप का दीघ रूप 'भइया'—

मै लोरिक भैया (भइया) मुधि देती । ८ च०

इसी तरह मघौना । ७४ लो० क०—उना लगा कर बना है ।

प्रारम्भिक अवधौ में दीघतर रूपों के उदाहरण मिले हैं वे राकारान्त हैं ।

हियरा । ४२ लो० क०

जियरा । १५ मै० स०

हियरा (दीघतर), हिषा (दीघ), हिष (लघु)

जियरा (दीघ तर), जिया (दीघ) जिय (लघु)

लिंग विचार

८३ प्रारम्भिक अवधौ में सना शब्द या तो पुल्लिंग होते हैं या स्त्रीलिंग । साधारणतः अकारान्त और आकारान्त शब्द पुल्लिंग होते हैं और ईकारान्त तथा ईकारान्त स्त्रीलिंग, जग—

कुअर । ५ च० राजा । ४ च० पुल्लिंग

कुवरि । २० लो० क० कटारी । १३ च०

किन्तु इसके अपवादों की भी कमी नहीं है । भाई ६ च० गिनानी । ४३७ मिर० खलिरो । २० लो० क० जैसे शब्द पुल्लिंग है और तिरिया । २० लो० व० चाइ । ६६ च० (प) कया । ६६ च० (प) जैसे १६ स्त्रीलिंग है ।

अकारान्त और ईकारान्त शब्दों में अत्य स्वर के स्थान पर इति या इन रखकर उन्हें स्त्रीलिंग बनाया जाता है—

कुरग मे कुरगिनि । १६ मिर० या सिपि न सिपिनि । ४२६ मिर० माली स मालिनि । लो० क० पापी स पापिनि । २४ लो० क०

निग विनीपता सम्बन्ध वाचक परसर्गों और भूतकालिक वृद्ध ती क्रियाओं में बनी रहता है—

जस अकलकित चौय क चन्दा । ४ स० व०
 राम कीस्त के बाल सघाती । ३ । १२ ह० च०
 गावत ही बुधि जग की माता । २ । ह० च०
 केरे कुन्नि में पाइत धरा । ३६ च०
 नाग मेस होइ केई धन हरी । ३७ च०

जड वस्तुओं में निग निर्धारण आकार प्रकार की विशालता और लघुता के आधार पर होता है जैसे—

लोआ ले के नीर कह घाई । ४ रा० ज०
 लोआ लौकी, बड़ी लौकी, कमण्डल
 लौकी ममकि उठी गा सबही । ४ रा० ज०

वचन

८४ द्विवचन का प्रयोग भारतीय आप भाषाओं में बहुत पहले समाप्त हो गया था। प्रारम्भिक अवधी में (१) एक वचन और बहुवचन मिलता है। एक वचन वस्तु का एक होने तथा बहुवचन उसके एकाधिक होने का भाव प्रकट करते हैं। एक वचन और बहु वचन के रूप कारक विभेचन में मिल जायेंगे। इसलिए यहाँ उनका उदाहरण देना किया जा रहा है।

आदराय बहुवचन का उदाहरण—

भयाह करहु तउ रहाहु । ३७ लो० व०
 (राव करिया सारित के प्रति) मया (शुना) कीनिए ता रहिर
 गुन्य अस्त भए । ७ लो० व०
 समूह वाचक शब्द सोग पच
 हिरें आहि (हिं) हमारेउ तागू । ३८ लो० व०
 सोग पच कई होति न बानी । २८ भे० ए०

पारक

८२ प्रारम्भिक अवधी में शब्द के दो कारक हैं—प्रतिशारी और विनायी मिलता है।

अविकारी रूप का प्रयोग साधारणतः कर्ता और सम्बोधन कारका में होता है। अविकारी रूप एम्बचन और बहुवचन दोनों के लिये प्रयुक्त होते हैं—

८६ अविकारी रूप—कता एक वचन—

सुनि राजा अस उत्तर दी हा । २६ च०
 मालिन पान दूत कर लीहा । २ मै० स०
 प्रथम पितामह ख्रिस्टि उपाई । २११ ह० च०
 बाहर भीतर राउ न जाई । १५ रा० ज०
 जस कोहार घर वानवे फोर राजकुमार । ३ स० क०
 चेरी सुनि के फुनि फुरि आई । ४३६ मिर०

सबोधन—

अस चादा । तुम्ह लाज गवाई । १७ लो० क०
 अस आँखर त बोलिसि घाई । ७ मै० स०
 एकामिनि । सुन बोल हमारी । २६ मै० स०
 आरे अघम । कवन ते आहि । ५ रा० उ०
 अब तें कहसि रे कया । कैसे मोछ होइ हमार । ३२ स० क०
 ऐ करतार । काह यह भया । ४३६ मिर०
 बेगि चलहु रे भाई ! नृपति कस के आन । १ । ४ ह० च०

टिप्पणी—सबोधन चिह्न मैंने लगाए हैं ।

अविकारी रूप कर्ता बहुवचन—

मिरगा पय लाधि जो जाहीं । ५१ च०
 लदुर पपिहा कुठकहि मोरा । १० मै० स०
 वन मो ब्रामन होन सुखी । १६ रा० ज०
 तहवा कया करहि धमारी । २५ स० क०
 चेरी सब धाइ । ४३६ मिर०
 चकित चित्त सखी सब घाई (ई) । २१६ ह० च०

अविकारी रूप कर्ता कारक म ही नहीं अन्य कारकों में भी प्रयुक्त मिलते हैं—

कर्म—

साथ काटि कीहा मुख फारा । ३३ लो० क०
 तेहि रतना मालिन ह्काई । मै० स०

सुनहु रिने अश बचन हमारी । ६ रा० ज०
 प्रनवो गनपति मन चित लाई । १ स० क०
 चित्र देति के गोजु चितेरा । २ मिर०
 गनपत की मे चरन मनावो । १।१ ह० च०

करण—

जि (गि) यहि छाठ हनि । ५४ लो० क०
 सहरस सबद हियर फाटउ । १४ मै० स०
 गुर उपदेश गोसाइ आए तोहरे पास । १० रा० ज०
 तोहरे बल मे करजै बनदा । १ स० क०
 सबन नहि सुने । २८ मिर० (सि)
 गुरु प्रसाद कछु कहौ विचारी । ३।१ ह० च०

अपादान—

नाक काटि तुहि देसनिसारउ । २४ लो० क०

सम्बन्ध—

पाकर हल देखि छतनारी । ३३ च०
 भाठी भेद न मैना जानसि । १६ मै० स०
 गए वस वैवहार । ७ रा० ज०
 विधि परिपच जानि नहि जाई । ३३ स० क०
 राजा मदिर पूत औनरा । १४ मिर०
 ब्राभन वचन होए परमाना । ५।१ ह० च०

अधिकरण—

नगर सोर जब अथवा । ३६ लो० क०
 बरइ भाग तन मोहि । ३ मै० स०
 चली त्रौप लौका ले पानी । ५ रा० ज०
 कठ बैठि जो कहइ भवानी । ३ स० क०
 जो रसना ओ हि नाउं न आवा । ३ मिर०
 जननी गरम होत हम जहिया । ६।१ ह० च०

टिप्पणी

प्रारम्भिक अवधी में कुछ ऐसे शब्द मिले हैं जो हकारात्त हैं और अविकारो रूप की भाँति कर्ताकारक में होते हैं—

जाकर पियह परदेसइ आवई । ६ मै० स० (जिसका पिउ परदेस से
आता है)

जिउ जिउ मनह तवान । १ मै० स०

(जैसे जैसे मन सतस हुआ)

लोगह कर हुतें लीह कटारा । ४३६ मिर०

(लोगो ने हाथ से कटार छीन ली)

अवधी में आज भा शब्द के अन्त में ह जो० देने की प्रवृत्ति पाई जाती है,
जैसे—

राजह गवा सनावा खाय ।

(जिला गोण्डा में गाये जाने वाले आल्हा का एक टुकड़ा ।

लेखक—स्वयसूचक)

अवधी में वही-वही शब्दों का आकारात रूप पाया जाता है, जिसका
कोई स्पष्ट कारण नहीं दिखाई पड़ता, जैसा प्रारम्भिक अवधी में है—

का लोगा तुहु घरहुँ पियारु । १ मै० स०

बालक बाछा कपिला गाई । १४ स० क०

‘लोगा’ पाद पूर्यथक प्रयोग हो सकता है लेकिन ‘बाछा आज भी जनता
में प्रचलित है । इसी तरह से ‘मना ‘मन’ के लिए बोला जाता है—चाहे जउन
मना होए जाय (चाहे जो मन हो जाए, मन चाहे जिसकी इच्छा कर ले)
लेखक स्वय सूचक ।

अनुमानत प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त ‘मनह लोगह रूप ‘मना’ और ‘लोगा
के पूर्य रूप के सूचक है । ‘पियह’ भी बहुप्रयुक्त ‘पिया’ का ही पूर्य रूप प्रतीत
होता है ।

नीचे प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त सज्ञा शब्दों के विकारी रूप
दिए जा रहे हैं—

८७ विकारी रूप—एक वचन

(१) इ, हि, ए, इ, ए, - (कवल अनुनासिक)

रहा नाव परदेसइ जाहू । १६

लेन न देइ मुखहि सो साँसा । २

परगट मारि कटारइ मरउ । २५

का होइ कुवरु दूतें तोरें । १६

सरगहि चाद उतर अनु देखि लोर त्रिहसान । ५५

अभरन पहिरा अठ गिय हारू । ७
 खोपा गियइ वैठि सहराई । २
 सुछज सेज अधियारें लावसि । १७
 परहि मांभ होइ उजियारा । २८
 परम आच जेहि हियरे लागइ । ४६
 —सो० क०

(२) पुनि का सोरहि मुख दरसाऊं । १७
 जाकर पियह परदेसइ आवइ । ६
 कुटनी कइ बोलहि पतियानी । ४
 में बारइ तोहि अस्थन दोन्हा । ३
 सबरह (हू) सपने सेज अनवन भाँति सवारिए । १७
 —मै० स०

(३) सो नर सदा वैकुण्ठहि जाई । १४
 एक दिन राजा अहेरहि जाई । ३—रा० ज०

(४) कपट रूप पर त्रियहि देखे । २६
 एते रूप में सीतहि देखी । २६
 नगी नारि जो देखै सो नर नकहि जाइ । ३०
 हिदैं भई सुमयान के जोती । १
 नयन नरायन मुखहि मुरारो । १—स० क०

(५) कुँअरहि तजि के आगे घावा । ४३६
 कुँअरहि परत पारधी घावा । ४३२
 हिए समान हुई जनो तागा । ४२८
 सारग वान फोक ले हाथहि । १८—दिर०

(६) अबहो कस न देवकिहि मारो । ७।१
 दाते (तें) चापि जीभि अनुसारो । २।११
 चरनोदक ले सिरहि चटावा । १।६ ह० च०

टिप्पणी

१—ऊर दिए गए विकारो रूप के उपाहरणो में स ऐसा कोई नहा है, जिने निस्तदिग्य रूप से सम्बन्ध कारक का रूप कहा जा सक्र ।

गाहि चाँद । ५५ सो० क०, सीतहि । २६ स० क०, कुँअरहि परत ।

४३२ गिर० में विभारी रूपों को सम्बन्ध कारक का रूप कहा जा सकता था किन्तु इह असादान (सरगहि चाँद उतर जनु), धम (एत रूप में सीतहि देखी), भाव सप्तमी (कुमरहि परत पारुषो धाया) के रूप मानना अधिक उचित लगता है ।

२—सम्भवत सम्बन्ध कारक के ए० व० रूपों में परसग युक्त विभारी रूपा का ही प्रचलन प्रारम्भिक अवधि में अधिक था । उक्ति-यक्ति प्रकरण में भा सामान्यत इस कारक में 'कर' परसग युक्त रूपों का प्रयोग होता था ।^१

साधन के मैनासत में सम्बन्ध कारक एक वचन में—अट्
प्रत्ययान्त रूप का प्रयोग मिलता है—

पियह भोग बिन रहइ न कोई । १२

(प्रिय के भोग के बिना कोई नहीं रहता)

नरकह कुण्ड आन सो मलसि । २

(नर के कुण्ड में लाकर डालती है (तू) ।

पियह पीत न टाडियइ । १०

(प्रिय की प्रीति न छोड़िए)

विभारी रूप बहुवचन—

(१) हि, इ, नि, ग, न, ह

खिन खिन राज दुवारहि जाई । २२ च०

सुनि बातइ खुशलिन तस रोवा । ४ लो० क०

ले गई चाँदा बातनि ताहो । ४ लो० क०

सोरह करी सपूरन भई । ७ लो० क०

1 Commonly the genitive is formed by compounding the base with the adjectival affix 'kara'

—पृ० ३२, स्टडी उ० व्य० प्र०

—हि हि प्रत्यय उ० व्य० प्र० में प्रधानत कम, सम्प्रदान और अधिकरण तथा करण कारक रूपों में प्रयुक्त होने से ।

दे० It indicates the accusative and dative, generally and at the locative instrumental as well

—पृ० २७, स्टडी, उ० व्य० प्र०

- जे हि बाटन गा लोरक साइ । ५३ ज०
 सरग तराइन भाकि बसावड । २६ लो० क०
 हाथह मिहदो किएउ सिगार । ७ लो० क०
- (२) यहि वातनि तै ओखर पावसि । ६
 नयन ह हंस मुख रोइ । ४
 नयन गग कोसह भरे । ६
- (३) जैसे खाउ अतीयही बांची । १२
 बेटवाह दीह जनेउ अस बोले भतिमान । १५
 तिह रिखि अह के दाआ सुफल भए सब काम । १८
 —रा० ज०
- (४) बात कहा भाइह समुभाई । १५ स्वर्गा०
 गिरिह सहित चले त्रिपुरारी । ४८ स० क०
 सभा पुरी तहें जैसे भाइन सहित । ५६ स० क०
 पाट के घोटिह माडौ छावा । ५२ स० क०
 दब दान विप्र ह कह दाहा । २६ स० क०
 कहे रिपिन के राज । १३ स्वर्गा०
 कहु स्वामी रिख ह के नाहा । २१ स० क०
 हाथ ह फूलह के गेहुआ । ५ स० क०
- (५) राजे घार्या ह आएस दी हा । १६
 राजे पडित ह कहा बोलाई । १६
 तोरठा चापाइह के सजा । १०
 पुरख ह भहि पुरवारथ हारौ । ४२६
 हाथि ह ऊपर परी अबारी । ४३४
 —मिर०
- (६) विविन हरत सतठ सुलदाई । १ । १
 नैनहि छूट रक्त के धारा । २ । ८
 केस छोरि के चरनह लागे । ५ । ४
 —ह० च०

८८ विकृत रूपो का प्रयोग कृदन्ती भूतजानिक क्रियाओ के साथ कर्ता के अर्थ में भी होता है—

एक वचन—

चाँदहि आछर मनहि लजाई । २० च०
 मेनइ मालिन घरि भूतभारी । २८ मै० स०

अपरित राजे उजगुत कीएउ । ५ । १ ह० च०
 तबहि रखे अस कहा बखानी । ५ रा० ज०
 पुरबिल लिखा बिघाते (ते) बेदहु मेदनहार । ६ स० क०
 महथे (थे) नगर सुनी यह बाता । २०५ मिर० (शि०)

बहु वचन—

महरे मन्दि सव योति बुभाई । ११ वं०
 तोर पितइ घाइ मोहि कीहा । ३ मै० स०
 इरु छन राज नरिन्दन कीहा । १ मै० स०
 रसिकन्ह जाइ कही अस वाता । १ । ८ ह० घ०
 विप्रह वेद पढे मन लावा । १७ रा० ज०
 सभ रानिह कीह पाधारी । १७ स० क०
 देवतह आएस इह कर माना । ८ मिर०

विभक्तियाँ

८६ अकारान्त अविकारी शब्द कभी कभी उकारान्त हो जाते हैं जैसे रजायसु । १४०, बीजु । १, बजोर । ७ च० (प, बुधवार, आ औतार । २ । १३, मातु ३ । १३ ह० च०, फतु । ५७ स० क०, चितु । ३, परागु । २ स्वर्गा० ये उकारात् रूप प्रयोग की दृष्टि से अधिकारी शब्दों से अभिन्न हैं ।

जैसा कि ऊपर देखा जा चुका है अधिकारी शब्द एक वचन बहुवचन तथा कर्ता और अर्थ कारकों के लिये भी प्रयुक्त होते हैं ।

अवधी में अकारान्त तथा आकारात् पुल्लिङ्ग अविकारी शब्द बहुवचन में कभी कभी एकारान्त हो जाते हैं (दे० एवोल्यूशन आफ अवधी १६०) प्रारम्भिक अवधी में इस रूप के उदाहरण विरल हैं । दाऊद और कुतबन की रचनाओं में ऐसे एकाक्ष उदाहरण ढूँढे जा सकते हैं—

बहुधिये बहु भेस बनावा । २६ च० (प)

सेवा करहि राउ ओ रानें । ७ मिर०

अविकारी के अतिरिक्त—अह, ए, ए—(केवल अनुनासिक)—हि, हि प्रत्ययान्त विभूत रूप ए० व० में प्रयुक्त होते हैं ।

विकृत रूप बहु० व० में—हि, न, ह, नि, हि, आ प्रत्ययान्त रूप प्रयुक्त होते हैं ।

आकारान्त और ईकारान्त शब्दों का अल्प दोष स्वर विकृत होने पर ह्रस्व हो जाता है जस—

पिता का पितइ । ३ मै० स०, और चाँदा का चाँदहि । ३८ सो० क०

सत्तावन । ६ स्वर्गा०
 साठ । २५ च० (प)
 अरसठ । ५४ स० क०
 असी । ४२ च० (प)
 इक्यासी । १७ च० (प)
 चौरासी । १२ च०
 सौ । ४७ च०, स । १३ च०
 लाख । ३७ लो० क०, लख । ५४ स० क०
 सहस । ७२ लो० क०
 कडोर । १ मै० स०, कोटि । १५ रा० ज०

- (६३) २—कृमात्मक सख्या वाचक
 परयम । ११ लो० क० पहलै । ५८ च०, पहलें । १ मै० स०
 दुतिआ । २ । ६ ह० च०, दोसर । ५ लो० व०, दुसरे । ५८ च०
 तीसर । १४ लो० क०, तीज । ४६ स० क०
 चौथें । ३७ च० (प)
 पचवें । ७ स० क०
 छठए । ७ स० क०, छठी । ३५ च०
 अठएँ । ७ स० क०, अठउ । ५७ लो० क०
 नवमी (तिथि) । १४ रा० ज०
 दसम । ७ । १ ह० च०
 बरह । ३६ च० (प)
 चौदह । ३३ च० (प)

- (६४) अपूण सख्यावाचक—
 आधि राति । १० लो० क०

- (६५) आवृत्तिमूलक
 चवगुना । ११ मै० स०

टिप्पणी—

दोनों अर्थ में 'विवि' का प्रयोग निर० और ह० च० में मिलता है ।
 विविकर । १४६ निर० (१), बीबीकुच । १ । ६ ह० च०

सर्वनाम

(६६) प्रारम्भिक अवधो में प्राप्त सर्वनामो के रूपो का विवरण नीचे दिया जा रहा है —

उत्तम दृश्य	एक वचन	बहुवचन
अविकारी रूप	हउ	हम
	भइ	
विकृत रूप	मुहि मोहि	हम
	मौ, मा	हमहि, हमै (विरल)
सम्बन्ध वाचक	मार	हमारा
विशेषण	मोरें	हमरें
स्त्रीलिंग रूप	मोरो,	हमारी

टिप्पणो—

१—दाउद और कुतबन की रचनाओ में कुछ स्थलो पर 'हउ का प्रयोग कमकारक ए० व० में हुआ है —

आखि काडि क तोता धावा, लार कहा हउ एइँ पइ खावा ६४ लो० क०
(तोता जोयो आँखें निकाल करके दौडा । लोरिक ने कहा कि यह मुझे खा
लेगा (इसने तो मुझे खाया)

सेख जन दा हौँ पयि लावा । ६ च० (प)

(सेख जेनुदीन मुझे रास्त पर लाए)

तेहि हौँ गा बेसमार । ३१ मिर (शि)

(बह मुझे बेहोश कर गई)

२—मिर० में हम का विकृत रूप 'हमाह' दो स्थलों पर मिलता है—

वाहे तजिसि हमाह । १२८ मिर० (शि)

करवट सीस देइ जा कोई बैस ह जाय हमाह । २६१ मिर० (शि)

सम्भवत रूप हमह या हमहि रहा होगा । शब्दो के मध्यवर्ती 'अ को दोष करने की प्रवृत्ति प्रारम्भिक अवधो में मिलती है (दे० ७६ क्रमांक ८) ।

(६७) अविकारी रूप एक वचन

हउ अस बोलिउँ चतुर सयानी । ३ लो क०

सुरज कहा भइ चाँदा बुलाठव । १० लो० व०

अउ हउँ सती सोर पर आनी । २७ मै० स०
 भई बारइ सोहि अस्पन दोहा । ३ मै० स०
 पगु घोखे में धीह जो घाउ । ५ रा० ज०
 जेहि गुमिरत में मनि गति पाई । १ स० क०
 सवन सुनहु चित साइ करि कहों बात ही एक । ६ मिर०
 हसी बुवरि में तबही जाना । १६१ मिर० (शि)
 गनरत को मै चरन मनावो । १ । १ ह० क०

रा० ज० और स० क० तथा स्वर्गा० और ह० क० में 'हउ' के उदाहरण नहीं मिले है ।

अधिकारी रूप बहु वचन—

हम जीते मन मह जनि हारहि । ३५ लो० क०
 खिला बहुत हम दूनहु प्राणी । ५ रा० ज०
 हम गोनव द्वारिका दिन दस लागिहि जात । १० स्वर्गा०
 इह के राज यह रे हम कहे । १० मिर०
 मननी गरम होत हम जहिया । ६।१ ह० क०
 मै० स० में अविकारी 'हम' का कोई उदाहरण नहीं मिला है ।

विकृत रूप : एक वचन—

भुहि तजि सुरज्र चाव लै भागा । । ४ लो० क०
 राजा भया मोह कइ हिरदइ पठवहु मोहि । ३६ लो० क०
 पाय लागि के सुरजन भो पति जाइ मनाइ । ५ लो० क०
 तोर पितरं थाइ मोहि को हा । ३ मै० स०
 अब मोपह कत मैना जाइ । ४ मै० स०
 जिह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊ । १ रा० ज०
 कइ मोकह जस परे बिचारा । ६ रा० ज०
 सो स्वामी मोहि कटहु बुझाई । ६ स० क०
 गरुअ साप लै मोकह दोहा । ३२ स० क०
 सेज बैठि अब बिरसहु मोहो । मिर० (शि)
 होइ मो मन साति । ५६ मिर० (शि)
 करो क्रिया मोहि देहु मुरारी । ३।१ ह० क०
 मो कह भए ब्रह्म बरवानी । ७।१ ह० क०

विकृत रूप बहुवचन—

काह भया हम कह चिन चनी । ६ लो० क०
 हम हुक विछु कौज दाया । २ ह० च०
 हम कह विधि ऐसी रबि राखा । ५ रा० ज०
 गद्य कस्ट विधि हम कहें दीहा । ४५ स० क०
 क्रिस्न पास हमै जान देहू । १६ स्वा०
 वह रे चोर हम जो उ चोरावा । १८३ मि० (श)
 हमहूँ कह आहै यह पया । ४३२ मिर०
 हमहि बिजोह सखी सो की हा । ४२ मिर० (शि)

मै० स० में उत्तम पुरुष सवनाम के विकृत बहुवचन का कोई उदाहरण नहीं मिला है ।

सम्बन्ध वाचक विशेषण एक वचन—

नाह मोर हौं बारि बियाही । ४ लो० क०
 लावइ आगि बीच मोरें । ६ लो० क०
 अब बुधि देउ सुनहु तुम मोरी । ८ चं०
 पिता मोर अनु काह न राजा । ५ मै० स०
 पिता राज मारे कउने काजा । ५ मै० स०
 सुरज दास कवि बरना प्राननाथ मोर । १ रा० ज०
 दीह तोरि जो मोरि गति आई । ६ रा० ज०
 कौन पाप है पुरबिल मोरा । १३ स० क०
 हिहें मोरे लेहु निवास । २ स० क०
 देस देस मोरि चर्चा होइ । १३ स० क०
 (भरमि) पाउ मोर सूब न परइ । ४२४ मिर०
 उठहु चलहु घर साथ होइ मोरे । २२ मिर० (शि०)
 कस न मोर मुख देखहु आई । ८१६ ह० च०
 जस बोह की गति तैसी मोरी । ११५ ह० च०

सम्बन्ध वाचक विशेषण बहु वचन—

भाई हमार जो आहि बटाऊ । ३७ लो० क०
 मलिक नथन सुनु बोल हमारै । ५६ लो० क०
 नगरहु केर जो हमरे आए । १ च०
 एक मास सुन बोल हमारै । २५ मै० स०

एकामिनि मुा बोल हमारी । २६ मे० स०
 पिअहि नीर रहे प्रान हमारा । ४ रा० ज०
 हठ ना रहि है हमरे आगे । २१ रा० ज०
 फहै राजा अब मुनि हमारो । १८ रा० ज०
 ईसरगस कवि प्रनवो हूरखित चित हमार । २ स० क०
 गरु हमारे भाग । ८ स० व०
 पर पुरुख तहे कीत हमारी । ७ स्वगा०
 सबसेउं बडा जो पीर हमारा । ५ मिर०
 हमरौ कह कहाँ कहि जाई । ६ मिर०
 जो तैं बात सुनि (न) सि हमारी । ४६ मिर० (शि)
 धिक जीवन धिक जम हमारा । १५४ ह० च०
 हमरे कहत बहुत दिन लागहि । ११५ ह० च०
 सुनु राजा तै विनय हमारी । ७११ ह० च०

६८ मध्यम पुरुष

प्रारम्भिक अवधी को रचनाओं में प्राप्त मध्यम पुरुष सवनाम के विविध रूप नीचे दिये जा रहे हैं—

	एक वचन	बहु वचन
अविकारी रूप	तू, तूँ तैं, तै	तुम, तुम्ह, तुम्ह तुहि, तुह तुहु, तोह
विकृत रूप	तुहि, तोहि, तोह, तो	(हैं) तुम्ह तुम, तुइ (?) तुम्हइ, तुम्हहि तुम्हहि, तोहहि (विरल)
सम्बन्ध वाचक विशेषण	तोर, तोहार, तोहर, तोरे	तुम्हार तुम्हर
स्त्रीलिंग रूप	तोरा, तोहारि	
अविकारी रूप	एक वचन	

तू रनि जो कीहा हम पासू । ६ लो० व०
 बाएह मरि रैन तूँ पावधि । १७ ला० व०
 यहि मारण तैं दली कोई । २० सो० व०
 अस ओशर तैं बातिधि घाई । ७ मे० स०

आरे अपम वचन ते आही । ५ रा० ज०
 भौ सहाय ते जालपा क्या कीह अनुषार । २ स० क०
 अब राजा ते तपसा जीता । १२ स० क०
 तू चढ रुपु देखु अस कहा । ५२६ मिर०
 पूछिसि को रे कौन ते नाठ तोर का आहि । १८८ मिर० (सि)
 सोह तो उह सग गइसि बिलाई । ४३ मिर० (सि)
 मुनु राजा ते बिनय हमारी । ७१ ह० च०

अविकारी रूप बहुवचन

मोर गनित तुम लोरिक जानहु । १० ला० क०
 कहउं बोल सबही तुम्ह मानहु । १० लो० क०
 कहेसि लोर तुम्हें भला न क्रिया । १५ लो० क०
 मइ करि जउ तुहि (तुहें) इहवाँ रहहु । ३७ लो० क०
 मालिन बचन सुनहु तुम जनम कि नित नित होइ । १० स०
 मेल चोर तोर देखउं कि तुम्हें दहुँ एहि जोग । ४ मै० स०
 का लोपा तुह घरहु विमारु । १ मै० स०
 कहे श्रवन तुम तुरित सिधावहु । १ रा० १०
 राम रूप तुम्ह भलि गति जानी । १ रा० ज०
 कहीं चले तुम पाडौ कहहु आपन सतिभाउ । ७ स० क०
 बनखड जो व्याधी तहवाँ तुम्ह जाव । ३८ स० क०
 समे देवता तुहु बाटी किति एक जस लेहु । ४६ स० क०
 पूछिसि कौन रहहु तुम कहीं । १३५ मिर (गि)
 तुम्ह सब एहि कहैं पुन सिखरावहु । १६ मिर०
 जहि सरवर सोह गइहु नहाई । १५५ मिर० (सि)
 देवी गति तुम्ह कस न जानी । ७१ ह० च०
 खेम कुसल घरहि सिधावहु । २१५ ह० च०
 तुह तो कस करी लरिकाई । ८१ ह० च०

धिकृत रूप एकवचन

नाक काटि तुहि देस निसारउं । २४ लो० क०
 चाँद लेउ ताहि सरग चलावउ । २६ लो० क०
 तो कह बरहि न आवइ काऊ । ४० च० (प)

तोहि माचिन चूदर पहराऊ । २ मै० स०
 तो कह मैना बहुत बिचारू । १४ मै० स०
 एक पुत्र जो तोहि मा पावो । १० रा० ज०
 कहु रिखि इह के राजा पूछत हाँ सो तोहि । ६ स० क०
 तो कह प्रसन भये नरनाहा । १२ स० क०
 हौं पुनि तोहि लागि हौं आई । ४४ मिर० (शि)
 मैं रस बात कही रस तो सो जो रस कीजे बात । ४७ मिर० (शि)
 तच्छक जाइ उसे नृप तोही । ५१ ह० च०

विवृत रूप बहुवचन—

दिन दस तुम्ह कह पथ चलावइ । १० लो० क०
 तुम ते वेद ब्रह्मा अनुसारा । २१ ह० च०
 तुम्ह ते बुधि जन करहि के वारा । २१ ह० च०
 तुम्ह गति शमी जानि न जाई । १६ स० क०
 तुम्ह देखे मन हरष हमारा । ८ स० क० (ऋषि के प्रति)
 बरख साठि में तुम्हे मन लावा । १६ स० क०
 से उपकार कहीं तुम सेती जिहि घट रहै परान । २३ मिर० (शि)
 कै मिमु ताहि साय लै गई । १५५ मिर० (गि)
 तुह त नारदादि गुन गावहि । २१ ह० च० (ईश्वर के प्रति)
 जो सम्प हम तुम्हो (हि) देलावा । ३३ ह० च०
 शरवन तुम कह नीर पठावा । ६ रा० ज०

सम्बन्ध वाचक विरोध एक वचन

कहसि चेर तोर होइ अक्सरि । २६ लो० क०
 तू (तो) हर पूयो चाँद सपूनी । ३८ च०
 वा ह्राइ मुवरू दूतें तोरें । १६ लो० क०
 तोर निरइ धाइ मोहि कीहा । ३ मै० स०
 एह प्रसात् प्रभु दोज दरसन देखो तोर । १११ ह० च०
 मैं मारा तोर धवन पूता । ६ रा० ज०
 जनम जनम तोहार गुन गावा । १० रा० ज०
 तोर जोय आपन के जानी । ४८ मिर० (गि)
 तारे विना नाव है काहा । ६८ मिर० (गि)
 कह तोहारे जोग उजारो । १०६ मिर० (शि)

मम तोहार का जान गवारी । ६।८ ह० च०
सब तजि तोहरे सगहि लागी । ५।१६ ह० च०

सम्बन्ध वाचक विशेषण बहुवचन

लोर लागि चित बाधेउ कुवरु भाइ तुम्हार । १६ ला० क०
तुम्हरे देस यह तोता जोगी रहा होइ बट पार । ६६ ला० क०
बहुब तुम्हार न फावहि मैना । १८ मै० स०
कहत डेराउ पास तुम्हरे वैसे । २१ स० फ०
कहा तुम्हार न अहै भला । १६ मिर० (शि)
काल्हि कहहु जो जोय तुम्हारे । १३४ मिर० (शि)
सो राजा छै करै तुम्हारा । ८।१ ह० च०
जो तुम्हरे लघु बालक आही । २।१६ ह० च०

६६ अ य पुरुष जीर दूरवर्ती सकेत वाचक

अय पुष्प तथा दूरवर्ती सकेत वाचक —अय पुरुष वाचक सवनाम दूरवर्ती सकेतवाचक सवनाम के रूप में भी प्रयुक्त होते हैं । नित्य सम्बन्धी सवनाम के रूप भी इसी तरह हाते हैं । नित्य सम्बन्धी सवनाम के रूप सम्बन्ध वाचक सवनाम रूपों के साथ दिए जाएंगे । नीचे अय पुरुष अरु दूरवर्ती सकेत वाचक सवनाम रूपों का विवरण दिया जा रहा है—

	एकवचन	बहुवचन
अधिकारी रूप	सो, से, सेइ, इ वह, उह, उवह, ऊ ओहि (ओ ?)	ते, तिह, तेह, तिन उन्ह, ओइ, बोइ, बोए, उइ तिन्ह हि तिहहि, ति है (विरल)
विभूत रूप	तेहि, तिह, हि ओ, ओहि, बोहि ता, ताहि, तासु	उह उन उन्हहि

टिप्पणी—

तेइ, सेइ, (ए० व) और तिह तेह तिन, उह (व० व०) वस्तुतः विभूत रूप हैं जो कर्ता रूप में प्रयुक्त होते हैं ।

अधिकारी रूप ए० य०—

(क) सो विंगो पूर मात्र सो लावा । ३७४ घ० (घ)

अउ सो गाररि मागि कइ लोहा । ५३ लो० व०
 फिरइ भाग दिन ओछे मोत सो बेरी होइ । ५ मे० स०
 तवही सो धन लडावे । १७ रा० ज०
 ओ नर सदा बैकठिहि जाई । १४ रा० अ०
 दया धम सो सदा अचारा । ६ स० क०
 सो नर नकहि जाहि । ३० स० व०
 वरिस पाच मह भएउ सो आई । १६ मिर०
 कहीं सो हरिचद है सतवती फत रावन कत राम ।

४३० मिर०

बधो बैर समूझि सो आवा । १।१३ ह० च०
 सो नर पार न पावे । ३।२ ह० च०

(ख)

से

स० व०, स्वगा और मिर० में 'सो के साथ 'स
 का भी प्रयोग मिलता है, यद्यपि ऐसे प्रयोग विरल हैं—
 सेउ न पावहु सम (स) कर ममा । १५ स० क०
 सेउ—वह भी

से उपदेस करव मैं भारी । १८ स्वर्गा०

स हक कह दे गएउ विवोगा । ७० मिर० (शि)

(राजकुमार)

से उपकार कहीं तुम सेती । २३ मिर० (शि)

(ग)

तई,—इ

घोर घोर कह मारस छूटेउ

तइ घान लिएउ (उ) छुड़ाइ । ८७ लो० व०

तइ नुप प्रान लीह सिरु नाइ । १। ६ ह० च०

तेइ नहि कीहा छनिव विमारा । ६ स० व०

(घ)

वह उवह, उह, क

हउ आहि के वह जिय बस मोरें । १६ लो० व०

उहो ब्राह्म कुम्होडउ आई । ३८ च (१)

हौ र मिरणा उवह पारष भई

वह रे गात सब हा किय टाढा । २६३ मिर० (गि)

उह शनि मिरणावति पह आई । २२२ मिर० (गि)

उह रो हरिय सग वियोगी । ४।१ ह० च०

उहे कथा हरि नारद पाई । ४।१ ह० च०
ऊ फिर चेर न होइ । ३०८ च० (प)

(ङ) ओहि (ओ ?)
कोहि परान ओहि जीवन मोरा । २१ मे० स०

टिप्पणी

सम्भवत ओहि में—हि समेतायक अर्थ्य है । ओहि अर्थान् वही । अय पुरुष वाचक सवनाम शब्द 'ओ' है ।

'सो और 'वह' (विरल) का प्रयोग अप्राणिवाचक कम के रूप में भी होता है—

दइय का लिखा होत सो पाइउ । २३ लो० क०
माखन होत सो अगम न खावा । १।१० ह० च०
सो लेइ राउ चले पुनि कैमे । ११ रा० ज०—सो प्रसाद
सो कछु कहहु गोसाइ । ८ स० क०
करो सोइ रहै अकय कहानी । ४३६ मिर०
मैं वह भाग चीर तर दोठी । ७५ च० (प)

मिर० एक जगह 'सो' का प्रयोग प्राणिवाचक कम के रूप में भी हुआ मिलता है—

एक न पूत रहा घर ओहि के सो विधि सेउँ लिए माँगि । १३ मिर०

अधिकारी रूप बहु वचन

(क) ते तीर बैठि ते लेहि भर आहँ । २१ च० (प)
घनि ते बोल घनि लेखन हार घनि त आखर अरय
विचारा । ५६ लो० क०
जहि घर कत ते करहि बैरासू । ६ मे० स०
सुरजदास कवि बरनो सुन तै राम पुरान । २ रा० ज०
ते पाडो कत लेहि निवासा । ६ स० क०
लेत साँस उसमहि ते काना । ५२ मिर० (शि)
त्रिध भयेउ आत्रहु पडर भये ते कम । ३०७ मिर० (शि)
ते बिलभरे परे जल मोही । १।१७ ह० च०
(वे-पत्नी) विपमर जल में पडे ।
ते हरि जरत उबारेउ तहि आ । ६।१ ह० च०

(ख) ति ह, तेह, तिन

जिह देखा ति ह गयउ पराना । ११६ च० (प)
 ऐसे सत तिह उघटा रेनि रहै ससार । ४७ स० व०
 तिन देखैउ दिखैमुरि समदि राउ बैसाउ । ७ स० क०
 पथी आवहि तिह पानि पिवा बहु । ११६ मिर० (शि)
 तेह आप महँ की ह विचारी । ४४२ मिर०
 गोलुल जाइ ज म तिह लीहा । २।२ ह० च०

(ग) उ ह, वाइ, ए, वे, उइ

उह मनुसेकर आरी पावा । ४० मिर० (शि)
 व रे चलहि यह धावइ मिला कोस दस जाइ । ३०६ च०(प)
 गवनि कराह उइ सबद सुहाई । ३८ मिर० (शि)
 नील जलद बोइ दूनी भाई । ३।१६ ह० च०
 वोए गोलुल होए प्रगटे जन लालच के स्वामी । २।४ ह०च०

टिप्पणी

लो० व०, च०, च० (प), मै० स०, ह० च , रा०ज० में 'उह' का
 अविकारी प्रयोग नहा प्राप्त हुआ है ।

ति ह, तिन, व, उइ सना के साथ प्रयुक्त रूप नहा मिले ह । 'उह' का
 ऐसा प्रयोग एक स्थल पर ह० च० में मिला है—

उह बिप्र ह बड़ अजगुन की हा । १।२२ ह० च०

वोए, वो, वे, का भेद केवन लिखित प्रतीत होता है । अवधो ध्वनि प्रकृति
 के अनुसार इन सप्तका उच्चारण बढ रहा होगा ।

ते छुन नोखठ गावहु आर, त सारिब तुम्ह बहनां पाई । '

२४२ च० (प)

में त अप्राणिवाचक वम व रूप में प्रयुक्त जात हाता है ।

निवृत्त रूप एक वचन

(क) तहि, जिहि ह—ह

तहि पर कामिनि गज बिद्यानहि । ५ लो० व०

तहि बाटे से बनिज पगारा । ५१ च०

तहि रउना मानि हहराई । २ म० स०

तहि मह सीनि पाट की राना । ३ रा० उ०

तहि निन राम लीह अवतारा । १४ रा० ज०

तेहि पाठे जालपा कै माया । ३ स० क०
 तहि सरवर कर करौ बखाना । २० स० क०
 पाठे तेहि क जता (चिता) लीहा । ३ मिर०
 तहि सम प्रियमी और न बेऊ । ५।१ ह० च०
 तेहि मारग नारद रिपि आए । ३।११ ह० च०
 अरु तिहि लाइके बियाहें जाई । ३६ च० (प)
 तिई दिन द्रुत महि (मुहि) अउर न भावा । १८६ च० (प)
 द्रुत लखन तिह पास साधन आप समारि । ४ मै० स०
 निह जोवन सो कउन पिरीती । ११ मै० स०

(ख) आहि, वाहि, ओ, उहि

ओहि बइ हाव न हस्ती सहइ । १५ लो० क०
 ओहिकै करत समै वा दुखी । १६ रा० ज०
 जो रसना ओहि नाउ न बावा । ३ मिर०
 मैना घाइ ओकर मुख चहा । ७ मै० स०
 हमरे वात उहि सौँ अस मुनी । ३६ मिर० (शि)
 जदुनाएक ओहि निकट बोलाए । २ । ११ ह० च०

(ग) ता, ताहि, तामु

ताकर धरम दुहैं जग धारा । ४० च० (प)
 ताकौ वार न वाकियह । ३ मै० स०
 ताकर रूप मै बरनों काहै । १६ स० क०
 सती होई सत ताकर गनिअै । ४३६ मिर०
 लै गइ चाँदा वातन ताहो । ४ लो० क०
 चा (जा) रलें नार ताहि कर हिपा । ७ मै० स०
 मते हवारि न पूहइ ताहो । १ । १२ ह० च०
 तब राखन अब पूछा ताहो । ५ रा० ज०
 ताहि देस भल बसइ न कोई । ४ स० क०
 भोसर अउर देखावह ताहो । ११ मिर०
 भगिनी तामु देवकी माऊ । ७ । १ ह० च०
 बहिहि काह कम कोऊँ तामू । १६ मिर० (शि)
 प्रथमहि घरत चीतवौ ताब । १ । १।१ ह० च०

टिप्पणी

दाऊद और साधन ने अय पुरुष सवनाम के एक व० विकृत रूप में 'तिस' का प्रयोग किया है। प्रयोग विरल है—

निरहत पयरेँ तिसवे बाँधे । २४ घ० (प)

जुगजुग फूटइ पानव ति ह नित तिसको जाइ । १५ मै० स०
ह० च० में अय पुरुष एक वचन विकृत रूप में 'वा का प्रयोग हुआ है—

वाको काल आए निअराना । ४ । ८ ह० च०

विकृत रूप बहु वचन

(क) तिह, - हि, तिहहि, ति है (विरल)

जनु तिह भीतर धरे । २ लो० क०

उह दुख तिह सुख रैन दुहेली । ८ मै० स०

तिह के शोग भले जीव लेई । ६ रा० ज०

तिह के गम रहो मन जानी । १८ स० क०

ति ह कह आहि न मोख । ११ मिर०

तिह कर कहा भूठ करि जानहि । १ । ८ ह० च०

तिहहि रुचइ जिन पास पियार । २३ मै० स०

तैतिस कोटि देवता ति हहि भौ अघार । ४७ स० क०

बना सग पन तिहै बिलासा । ८ स्वार्गा०

तिहहि रोआए दिहाँ दु ग भारी । ३ । ७ ह० च०

(ख) उह उन उ हहि

बहुत लोग हम उह के मारे । २७ घ०

मुगिपी सारी उन पहिराई । ५८ घ०

उह दु ग तिह मुग रैन दुहेली । ८ मै० स०

अउर बटुन उह केरि बड़ाई । ६ मिर०

जमेहु जोउ हुन गाउ । ४१० मिर०

जा उहहि निहारिहि मारि । ३३६ मिर० (ग)

सगि उह ग्या जाइ । २ । ८ ह० च०

टिप्पणी

१—तिह ति है तिहहि तिहहि का प्रयोग गंगा के माथ में नहीं मिसा
उह का ऐसा प्रयोग रा० ज० में एक स्थान पर मिलता है—

उह तानी कह तानी निआवहु । ५ रा० ज०

२—मै० स० में एक स्थान पर नित्य सम्बन्धी विशेषण 'तवन' का प्रयोग मिलता है—

तवन नेह नित बेरसम कामिनि यह ससार । १८ मै० स०

३—उहहि केवल मिर० (शि) में एक स्थान पर मिलता है । दे० प० १६० (ख के अंतगत दिया गया उदाहरण)

नित्य सम्बन्धी सवनाम—

अथ पुरुष तथा दूरवर्ती सकेतवाचक सवनाम तथा नित्य सम्बन्धी सवनाम के रूपों में कोई अन्तर नहीं मिला है । इनका प्रयोग सम्बन्ध वाचक सवनामों के साथ होता है । सम्बन्ध वाचक सवनामों का उदाहरण देने समय इनके उदाहरण भी सामने आ जाएंगे ।

१०० सम्बन्ध वाचक सवनाम—

प्रारम्भिक अवधि की विवेचित रचनाओं में प्राप्त सम्बन्ध वाचक सवनामों के विविध रूप इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहु वचन
अधिकारी रूप	जौ, जेइ, जे	जेइ, जे जिह, जिन
विकृत रूप	जेहि, जेहि, जेह जिह, जिह	जि ह, जिन जेहि, जिनहि
टिप्पणी—	जा	

जेइ, ए० व० जि हव, जिन वस्तुतः विकृत रूप हैं जो कता रूप में भूत कालिक श्रुतियों के साथ प्रयुक्त होते हैं ।

अधिकारी रूप एकवचन—

चाँद कहा सो मुख जो अइसहि पतिपाइ । २७ लो० व०

जेइ रे सुना सा चाहहि रोवा । ४१ लो० व०

जो आवा सो रहा न कोई । १ मै० स०

कोटि तीरथ जो कोहा गहने दीहा मन

सुरजदास कवि धरनों सुन ले राम पुरान । २ रा० ज०

समा लोग जो करइ मदाई । जनम जनम सो नरकहि जाई । ४ स० क०

पुन क्या जे यह मुने ताकर होइ सिध काज । ५७ स० क०

जीय दान जो चाहै नि दस सेवा करउ सो बार । ७ मिर०

जेइ सिरजा तेहू से बका । ४२६ मिर०

इह के प्रभ जो होइहि चारा । ७।१ ह० च०
 'जो' का प्रयोग अप्राणिवाचक 'कर्म' के रूप में भी होता है—
 परम (पेम) कहानी वही जो याता । २३ लो० व
 पहले पुनि जो दई उगाने । १ मै० स०
 जो मागिसि सी पाइसि विधि सउ । १३ मि०
 सो कीछु कहहु जो मनुसहि भावे । ५।८ ह० च०

अधिकारी बहुवचन—

जे रहे मान सो आगे हारे । १२६ च० (प)
 जेइ आए सो समदि चलाए । ४७ च०
 जिन सिरजा इह देवस बयारा । १ च (प)
 जिन कलि बेलसेउ एह । १ मै० स०
 चा (जा) रउं नार ताहि कर हिया, एक छांड जिन दोसर क्रिया ।
 ज ७ मै० स०

सो न कहहि जे जरत उवारब । ४ । ११ ह० च०
 जिह हरि कौरव सन सघारा । ६ । १ ह० च०
 तीन भुवन जे भरियुर राखा । २ रा० ज०
 जिह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊं । १ रा० ज०
 कीह धय जे बैताल पचीसी । ४ स्वर्गा०
 असन जिह विधि लिखा होई लिलाट । १४ स० व०
 जे जन जिये वियोग के मारे, ते तन कला पंच बस मारे ।

६३ मिर (सि)

जिन्ह पावा तिह दारिद भागा । १३ मिर०

टिप्पणी—

'जे' के कुछ ऐसे प्रयोग मिले हैं जो अप्राणिवाचक और प्राणिवाचक कर्म के रूप में प्रयुक्त हुए प्रतीत होने हैं—

जे महरें जेठनार जिवाये । सगरें वीरन बाजें आये ।

११६ च० (प)

(जिनकी महर ने जेठनार जिभगया था व सक्त वीर काम नही आए)

अउर पल्लि जे मारे ताकर नाउ को लेहि । १५४ च० (प)

(और जिन पत्नियों को मारा उनका नाम कौन ले)

जे छद नौखड गावहु आइ, ते लोरिक तुम्ह कहवा पाई ।

२४३ च० (प)

(जिन छदो को नौखड में गाते हो ऐ लोरिक ! तुमने उन्हें कहाँ पाया)

छद छ^२, घोका

विभूत रूप एक बचन—

(क) जेहि, जेहि, जिह, जिह, जिहि

जेहि लागि तजेऊ सम घर बाहू । तेहि बिन कम अत्र जिवन अपारू ।

८१ लो० क०

जेहि कारन हउ जीउ न पारउ देखेउ फल सताप

तेहि सेतेँ पचि दाहे । ४४ लो० क०

गयी (यउ) सो जान जिह मैला । ६९ च० (प)

बाठ कहत जिह बिस चढहि । ७६ च० (प)

जेहि घर कत ते करहि वेरामू । ६ मै० स०

जिह राखइ करतार । ताकउ बार न वाकियइ । २ म० स०

जेहि सुमिरत मै मति गति पाई । १ स० क०

आपनि तिस्टि जाइ जेहि केरी । २ मिर०

जेहि मारग सिंसु आवहि जाहो, घदन पसारि ठैठ मग ताहो ।

१ । १३ ह० च०

जा—

जा कह कछु हाय कै देई । ३८ लो० क०

सुन मालिन सावन तेहि भावइ, जावर पियह परदसर आवइ ।

—६ मै० स०

जाहि देस ठाकुर मद होई ताहि देश भल बसइन कोई । ४ स० क०

जा कहँ भौह होइ चरन मैलो सो रे होइ जरि छार । ७ मिर०

प्रथमहि चरन चीतवो ताके सरब लोख बोदर बस जाके १ । १ ह० च०

टिप्पणी—

कहो कहीं 'जिससे' के अर्थ ये 'जे' का प्रयोग मिलता है—

सादर क्या कहीं कर जोरी । मै न कहावो जे मति भोरी ।

१ स० क०

(मैं आदरपूर्वक हाथ जोड़ कर क्या कहता हूँ जिससे मति का भोरा न कहलाऊँ)

सो न बट्टु जे मुटुनि हमारो । ५ । ११

(बह बहो न । त्रिमने हमारी मुक्ति हो)

सो उरकार करो अगने त्रिय जे पारो यहि याह । ६३ मिर० (गि)

(अरो जी में बह उरकार (?) बह त्रिमने उगरो गवर पाऊ)

विकृत रूप बहु वचन

जिह, जिन—

जिह रूपवर्ती यह धन मादो । तेहि न पाँव उ बाँधा सादो ।

२३ १०

जिन धी होइ सो नाउ न लिये । १०६ ध० (ग)

जिन्ह विधि रासइ सत श्री । २ मे० स०

तिहहि रचइ जिन पास पियार । २३ मे० स०

जिन देवसन गुरिजन रिपु भये । ३३८ मिर० (गि)

जिन्ह बह स्रो पति अग्या दोहा । ३।११ ह० ध०

जनहि, जिनहि—

ओर ह दीह जैनहि जस जाना । ४७ ध०

जिनहि पय दिखराइ दीह है तिह बहै जरम न भून । ४ मिर०

१०१ निकटवर्ती संकेतवाचक सवनाम

निकटवर्ती संकेतवाचक सवनाम विशेषण का भी काम करते हैं । प्रारम्भिक अवधो की रचनाओं में प्राप्त निकटवर्ती संकेतवाचक सवनामों के विविध रूप इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहु वचन
अधिकारी रूप	यह, एह इह ई	इह एह, ए
विकृत रूप	यहि, हि, इ इह, ह हि ए	इ ह, इन इहहि इनहि,

टिप्पणी—

'इह' विकृत रूप बहु वचन है जो भूतकालिक वृद्धत के साथ कर्ता रूप में प्रयुक्त हुआ है ।

अधिकारी रूप एकवचन

(क) यह, एह—

बइठ तोतइ यह जब तक रहा । ६६ लो० क०
पात्रे तो पद्यताए भूठा यह ससारा । २१ मै० स०
एह जग के है एह बेवहारा । ८ रा० ज०
हमहूँ कह आहै यह पया । ४३२ मिर०
एह बालक अदुवस उघारव । २।६ ह० च०

(ख) इह, ई—

लगि जस इस आहि वुतकारी । ६४ च० (प)
इ सब लोरि लोरक के अपबारा । २७ च० (प)
की इह तपसा की नारी अहई । २६ स० क०
चित अनते घर इह फुसिलावे । १२१ मिर० (शि)
इहै देत जानेउ जदुराई । ४।८ ह० च०

टिप्पणी—

१—अधिकारी रूप ए० व० का प्रयोग अप्राणिवाचक कर्म के रूप में भी होता है—

राहु केतु यह दखत अहा । ४० लो० क०
जिन सिरजा इह देवस बयारा । १ च० (प)
दयी लिखा जो ई आहा । ३६ च० (प)
जाता देखउ यह ससारा । १ मै० स०
तोहि अस सुदरि यह वन दोहा । ३६ स० क०
जाहु तुरत घर आपने ई सब लेहु गिनाइ । ५४ स० क०
अनि यह रचि कै चरित पसारा । २ मिर०
एह कुबुधि राजे बड कीहा । ५ ह० च०
२—एह, और यह का अंतर केवल लिपिगत है ।

अधिकारी रूप बहुवचन

इह, इन, ये, एइ—

सवन लागि मन्तर इन्ह कहे । ४२ लो० क०
अबाबकर उमर उसमान अली तिघ ये चारि । ७ च० (प)
इह हमार सब देखु सरीरा । २७ स० क०
उत्तम जम धय ऐ (ए) इ लोगा । १६ स्वर्गा०

जो इह पय दिखइ दीह है । ५ मिर०
 इन न मोह काहू कर माना । १२६ मिर० (गि)
 येइ अस कहा कुवर हारावा (?) । ११६ मिर० (शि)
 ए आपुस मह कहै लराई । ३६३ मिर० (शि)

टिप्पणी

(१) 'एइ' और 'येइ' वा अन्तर केवल लिपिगत है ।

(२) मै० स० की एक पक्ति में 'यह' का प्रयोग बहुवचन के रूप में हुआ है—

अब यह बारह मास तुलाने । २७ मै० स०

डा० सक्तेना ने 'यह' की बहुवचन के रूप में प्रयुक्त रूप माना है (दे० एवोल्यूशन आफ अवधी) ।

विद्वृत रूप एक वचन

(क) एहि टि, इ—

यहि विरोग जउ नाह न आवा । ५ ला० क०
 सुनहु कान दइ यदि गुन यारे । ५६ लो० क०
 पाँच भूत की हतिया एहि मो । १६ म० स०
 एहि रग रहे राजा बारह बरख तुलाना । १५ रा० ज०
 एहि विधि घम निवाहे जाई । १६ स० क०
 कहेसि बान हनि का एहि मारौ । १८ मिर०
 अन्निन कथा भागवत प्रगटित एहि ससार । ४११ ह० च०
 लोरकहा हउ एह पइ तावा । ६४ लो० क०
 (लोर ने कहा इसने मुझे घाया)

(ख) इह, हु, हि—

इह कविलास अउर को आवा । १६३ चं० (प)
 जो कछु होइ घम इह माहा । १६ स० क०
 इहि जा जनम न मिलितउ काऊ । ३६७ मिर० (शि)

(ग) ए—

एकर रूप न जाइ विनेषी । २६ स० क०
 अग भग कछु एकर करऊ । ३१७ ह० च०

विद्वृत रूप बहुवचन

(घ) इह इन—

जउ इह महँ एउउ मरि जाइहि । ७३ लो० क०

मरन सनेह हिये उर इनवे रहे न पास । ११३ च० (स)
 प्रीति जाइ इन वातनि सरग होइ मुख कार । १३ मै० स०
 इह के कथा कहो रिपि रामा । १३ स्वर्गा०
 दुग्गम गड इह सेउं नहि रहा । ४ मिर०
 आदि अत इह कह भ (१) नाहो । २।६ ह० च०

(ख) इहहि, इनाहि—

वयो (केव) कोउ इनाहि मारे पारा , १० स्वर्गा०

इहहि देखे वड कुमगुन तेली चिकरा मीन । ५६ मिर० (शि)

इहहि का प्रयोग केवल मिर० (शि) और इनाहि का केवल स्वर्गा० में मिला है ।

टिप्पणी

मिर० में एक स्थल पर 'एतिन्ह' का प्रयोग मिलता है—

जे एतिह कर ली ह सोभावा । १८३ मिर० (शि)

१०२ प्रश्न वाचक सवनाम

प्रारम्भिक अवधी की विवेचन रचनाओं में प्राप्त प्रश्न वाचक सवनाम के विविध रूप इस प्रकार हैं—

	एकवचन	बहुवचन
अधिकारी रूप	को कउन केइ, के (विरल)	किह, के, किनि

विवृत रूप केहि, वा (प्राणिवाचक)

वा काह } अप्राणिवाचक
 काहे }

विशेषण कउन

टिप्पणी

किनि और किह बहुवचन विवृत रूप हैं जो कर्तारूप में प्रयुक्त हुए हैं ।

अधिकारी रूप एक वचन

(१) को, कउन

निष्टि अपार देखि को पारइ । ३४ लो० क०

गिनत न आवइ कउन सो लेखा । ४७ लो० क०

तिह नित को आपह उहकावा । ११ म० स०

त्रि ह विधि राराइ छत सा कउन डोलोव पार । २ मै० स०
 त्रिय का जग्य अंन को पावा । १७ रा० ज०
 आरे अघम कवन ते धाही । ५ रा० ज०
 अपनी मनि को जोरइ पारा । ३ स० क०
 दो उचाय रस वचन गुनाये । ३० मिर० (त्रि)
 तुरआ सबहु गो को पारा । ७।१ ह० च०

(२) वेइ, के—

केइर (रे) निपूती चादा कोसी । ४५ लो० क०
 पुरदिल लिखा विघाते वे दहु मेटनहार । ९ स० क०

अविकारी रूप बहुवचन

के, विनि, किह—

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में इस रूप के केवल तीन उदाहरण मिले हैं । वे नीचे दिए जा रहे हैं—

अश्रित सोचे के रे सँवारी । १६ मिर० (त्रि)
 कलजुग माह ऐस विनि किया । ४३६ मिर०
 कौआ कैसे मुआ (किह मारा) कर तारा ४।८ ह० च०

(इस पंक्ति में कैसे मुआ और किह मारा दोनों दिए गए हैं । 'किह मारा' का पाठ मान लिया तभी यह उदाहरण सगत है)

विकृत रूप एक वचन

(१) केहि

अइस न जानउ केहि कह धरा । २७ लो० क०
 सो पाइयो कहवाँ ने केहि सो छाँड़े राज । १३ स्वर्गा०
 कहिसि काह केहि कारन रोवहु । ६१ मिर० (शि)

(ख) का—

काकरि धिय यह कहँवा जाई । ६८ लो० क०
 नाकर धरम पाप कह केरा । २१ म० स०
 काके टीका सारो काके सौपो शहन भडार । ७ रा० ज०
 कहो कासो घर पठवो सदेसा । ३१ स० क०
 का कर बाप काहे कर वारा । ४३७ मिर०
 सेवक वपुरा काही (हि) पुकारे । २।१७ ह० च०

अप्राणिवाचक रूप

का, काह, काहे—

वा होइ कुँवरू दूतें तोरे । १६ लो० क०
 काह कहउँ कस ऊतर देऊँ । १६ लो० क०
 काहे कह विधि कीन्हु बिछोवा । ६२ ला० क०
 पोस मास का करिहे मोरा । १६ मै० स०
 काह भएउ सम भोग । ४ म० स०
 नेह काहे कर पाप पियह कारन सिर दोनियइ
 फिरति अहो मदिर अपने मह का करिहे करतार । ४३८ मिर०
 आपि क मटक काह दहु होई । ४३५ मिर०
 काहे कहैं पिहना मुह दिहा । १३५ मिर०
 जूमी जात का करतीउ (करतिउ) भाई । १।८ ह० च०

टिप्पणी

१—‘जे प्राणी गुनयो करै जम का कहा बसाइ । १’ स्वर्गा० में ‘कहा’ ‘काह’ का ही परिवर्तित रूप और समानाधिक ज्ञात हाता है । अर्थ है—जी प्राणी गुनते हैं (भगवान् का नाम) यम का उन पर क्या बस है ?

कर्ता रूप में प्रयुक्त रूपों के अनिश्चित प्रश्नवाचक सवनाम कं विकृत रूप बहुवचन का कोई उदाहरण प्रारम्भिक अवधो की किसी विवेचित रचना में मुझे नहीं मिला है ।

प्रश्न वाचक विशेषण

कउन, कवन—

कउनि नारि कहवाँ दृति आई । १८ लो० क०
 कवन माख जउ सो जिय मारा । १७ मै० स०
 कवन बोल तुम बोनिन लागे । २१ रा० ज०
 कौन मुख ते भयेउ बिआहा । २१ स० क०
 जहहु कौने बाट पराई । १४५ मिर० (धि)
 कौन देत हरि लीह गोपाला । २।८ ह० च०

१०३ निज वाचक सवनाम

प्रारम्भिक अवधो की विवेचित रचनाओं में प्राप्त निजवाचक सवनाम के विविध रूप इस प्रकार हैं—

अविकारी रूप आप, आपु

विभूत रूप आप, आपु, आपहि
 आपुहि
 विशेषण आपुन,
 आपन, आपना
 अपने, आपने
 आपु

अधिकारी रूप

आप, आपु—

वे पहिया के आप जनावै । १८ च०

(कर्ता सौरिक)

आपु लहि (वेवलायक)

तव धन सब आपुही सोई । ४ स० क०, आपु+ही (वेवलायक)

आपु आप कह लागि गोहारी । ४३४ मिर०

आपुहि सो प्रभु त्रिभुवन जोगी । ११२३ ह० च०

आपु या आप का प्रयोग प्राणिवाचक कम की भाँति भी होता है—

फिर फिर चादा आपु दिखावइ

मोहि देखे मुकु वेवट आवइ । १८ लो० क०

दूत लखन तिह पास साधन आप सँभारि । ४ म० स०

अन नृप आपु सँभारइ कहि अम्बिका जाई । ४४४ ह० च०

विभूत रूप—

जस कीरति आपु कहै लेई । ३८ लो० क०

ते आपहि काहे ओडेरसि । १२ मे० स०

तिह नित को आपहि डहकावा । ११ म० श०

आप आपु कहै लागि गोहारी । ४३४ मिर०

या तेहि लगि आपुहि परगटा । ३ मिर०

तेह आप मह कोह बिचारी । ४४२ मिर०

आपुहि अगम अगोचर आपुहि प्रगट देखाव । ११२३ ह० च०

निजवाचक विशेषण—

करिया लोर आपुन कर गहा । १६ लो० क०

बडूरि जाहि घर अपने बावन कहा सुनहि तू मार । २३ लो० क०

कहाँ चले तुम पाढी कहइ आन सतिमाउ । ७ स० क०

जाहु राज घर आपना । १५ स० क०
 अपने घर तैं जासि । २६ स० क०
 जाहु तुरत घर आपने । ५४ स० क०
 आपन आनि दिहिसे एक खीरु । १५६ मिर०
 आपुन क्रिसन करावहि पूजा । १।२३ ह० च०
 जिन्ह जाना अपने घर माही । १।२४ ह० च०

टिप्पणी—

१—प्राणिवाचक कर्म (अविकारी) के जो उदाहरण ऊपर दिये गये हैं वे परसग रहित विवृत रूप भी हो सकते हैं ।

२—ह० च० और रा० ज० में 'आपु' के केवल ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे प्रतीत होता है कि निजवाचक विनेपण के रूप में 'आपु' का भी प्रयोग होता था ।

आपु परार जो सभ के देखे । १।२४ ह० च०
 (जो सबका अपना और पराया देखे)

आपु परार न चोह भुआरा । २२ रा० ज०
 (भूपाल (दशरथ) अपना पराया नहा पहचानते)

'परार' निश्चित रूप से पर (अय) का पठ्ठी या सम्बन्धाचो विनेपण रूप है जिससे प्रकट हाता है कि इन स्थला पर प्रयुक्त 'आपु' निजवाचक विशेषण है ।

१०४ अनिश्चय वाचक सबनाम

प्रारम्भिक अवधो में प्राप्त अनिश्चयवाचक सबनामा की तीन श्रेणियाँ हैं—

१—'अउर' तथा इसके समानाधिक 'पर' तथा 'आन'

२—कोई

३—सब

नीचे इनके विविध रूपों का विवरण दिया जा रहा है—

	एक वचन	बहु वचन
(१) अविकारी रूप	अउर, अवर आन	औरह औरह
विवृत रूप	औरहि आन	औरह
विरोपण	परा, परार पराइहि	

अविकारी रूप—

अवर बचन हर मुखहि न आवे । १८ च०
 यह सिर देहज लोरकाहि अउर न देखइ पार । २५ मै० स०
 ओरो देव चले समभारी । ४८ स० क०
 एहि सरि अउर न पूजै कोई । १५ मिर०
 तेहि सम प्रियिमी और न कोऊ । ५।१ ह० च०
 आन होइ तउ मरइ लजाई । १७ लो० क०
 आन क्या को कहे है भारी । ६ च०
 आन भवर तोह भैखउ । ८ मै० स०
 राम छाडि नहि आन आधारा । १६ रा० ज०
 आन की भीच आन ना भरई । ४३६ मिर०
 आन' का प्रयोग अप्राणिवाचक कम की भाँति भी होता है—
 मैं का करब अब आन । ३४ च०
 आन भवर तोह भैखउ । ८ मै० स०

अविकारी रूप बहुवचन (विरल)—

औरह कहा न मारी बहुरि षट्ठे तिरकूट । २४६ मिर० (सि)

विकृत रूप एकवचन

तोह दखत औरहि लइ गयऊ, । १४ मै० स०
 आन का सरबस आपु हरि लेई । २८ स० क०
 आन की भाच आन ना भरई । ४३६ मिर०

विकृत रूप बहुवचन (विरल)—

औरह दीह जेनहि जस जाना । ४७ च०

विशेषण—

परार, परा, पराइहि—

तोर बैर जठ सिर पट्टचावउ घीय परारी आनि
 आपु परार न चोह मुआरा । २२ रा० ज०
 हतिया लागिहि दस पराइहि । ७३ लो० क०
 आपु परार ओ सम के देनै । १।२४ ह० च०
 परा घन हरे घोर चनु जेसु । २।१० ह० च०

(२) 'ओइ वाचन रूप

इसक विविध रूप इस प्रकार है—

अविकारी रूप—

कोइ, कोउ, केउ, केहू, काहू

अप्राणिवाचक—

कछु, किछु

विकृत रूप—

काहू—

अविकारी रूप—

दुखी होइ जनि कोइ । ४८ लो० क०

अइस चलहु नहि सुधि कोउ पावा । ८ लो० क०

दोसर न केउ जो कर उपकारा । ४६ लो० क०

कइ केहू कहु हइ मग लावा । ४५ लो० क०

धुआं केर घौराहर पृथमी कोइ न रहा निदान । १ मै० स०

सभ कोउ खेलइ परम घमारी । १४ मै० स०

सभ काहू घर बार संभारेउ । ६ मै० स०

तोहि समतूल पूजे नहि कोई । १० स० क०

जानि कोउ जाने जो मति भारी । ९ स्वर्गा०

सभ केउ लीन्हा सावज गए लोग ग्रिह माह । २३ स० क०

चतुर सुजान भाख सब जाना अइस न देखेउ कोइ । ६ मिर०

चेरी चाह वहि केउ न कहाई । १५४ मिर०

दारिद दत काहु नहि चाखी । ३५ मिर० (शिर)

अवरगति नाही कोउ दूसर । १११५ ह० च०

ग्रिह गोपी केहु जानि पावा । ४८ ह० च०

अन धन कह ची है सभ कोई । ८ रा० ज०

अप्राणिवाचक रूप—

कछु—

कछु, अनिश्चयवाचक सवनाम का अप्राणिवाचक रूप है । यह अवि
कारी और समवत् (अविकारी रूप) प्रयुक्त होता है—

जो कछु अहै हमार सोफिन जान तुम्हार । १ च०

सपनें बहुतक मै कछु देखा । ६ च०

भोग मुगुत माहि कछु नहि भावइ । १६ मै० स०

आन भंवर तोह मखड लेन (लेत) जगन कछु जाव । ७ मै० स०

राम कया किछु भाखो कहत न लागे खोर । १ रा० ज०
 जोग जतन तप किछु नहि होई । १५ स० क०
 सो वछु कहहु गोसाईं सुनत ग्यान जेहि जाग । ८ स० क०
 ओ सब कया न आहहि भली
 किछु रे भली किछु जेसी जेसें जासो । ११ मिर०
 रावइ धहुत आसू पर आसू किछो न समुझ सरोर । २१ मिर०
 गुण प्रसाद कछु कहीं विचारो । ३।१ ह० च०

टिप्पणी—

ह० च० में अनिश्चय वाचक सवनाम के लिये 'कवनित' का भी प्रयोग हुआ है ।

कवनित राई लोन उतारहि । ३।६ ह० च०
 (कोई (गोपी) राई लोन उतारती है)

विकृत रूप

मुखी न जान दुख काहू केरा । ४६ लो० क०
 काहू क ग्रिह पैठहि घाई । ३।६ ह० च०
 काहू कह न रहो सुधि गात । ३८ मिर०

३—सब, सभ

अधिकारी रूप सब

विकृत रूप सब, सर्वाहि, सभे

अधिकारी रूप—

अथवा मुक मुरुज परगमा जानइ सभ ससार । २६ लो० क०
 विदवास पडित सभ आहि । ३४ लो० क०
 अन धन कह चो है सभ कोई । ८ रा० ज०
 जाहि सुने सब पातक जाहि । ८ स० क०
 ओ सब कया न आहहि भली । मिर० ११
 पछिले पाप घोइ सब गए । ५ मिर०
 यह सब धर्य जन लालच सग बसत भगवान । १।१५ ह० च०

विकृत रूप—

सबही सिधि आइ पडित पाई । १० लो० क०
 सभे लोग कह देतिस पाना । ४७ च०
 सब कह राजा बैतेक दीहा । १५ स्वर्गा०

कर उठाइ समही देहु पाना । ५७ स० क०
 सब सेज बडा जो पीर हमारा । ५ मिर०
 सब कह परोहन बीतिह आनी । १७ मिर०
 सब मह व्याप रहे तुम सामी । १११ ह० च०

विशेषण—

सगरी (छोर्लिंग)

सगरिइ रैन खोज मह कीन्हा । ६६ ला० क०

टिप्पणी—

सेव के अतिरिक्त 'सरब' का भी प्रयोग मिलता है—

सरब लोक बोदर बस जाके । १११ ह० च०

सयुक्त सवनाम—

१०५ प्रारम्भिक अवधी में सयुक्त सवनाम जो, सो सब, कोउ, कोई, कुछ के सयोग से बने मिलते हैं ।

जो कुछ । १ च०	सब कोई । ५६ च०
सभ कोई । २१६ च० (प)	जो कोई । २२६ च० (प)
सब कोउ । ४४३ च० (प)	सभ कोई । १४ मै० स०
सभ केहु । ८ मै० स०	सा कछु । ३१८ स० क०
जो कछु । १६ स० क०	सभ केउ । ५४ स० क०
जो किठु । १२ मिर०	जो कोई । ६६ मिर० (शि)
सभ कोई । ८ रा० ज०	सब काहु । २१२ ह० च०
सो कछु । ३१८ ह० च०	

टिप्पणी

सब का सयोग सो, ते, तुम्हें, ई के साथ मिलता है—

सो सब । १६ स० क०

त सब । ३६ मिर० (शि)

तुम्ह सब । १६ मिर०

ई सभ । ५४ स० क०

१०६ सवनाममूलक विशेषण

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में सवनाममूलक विशेषणों के विविध रूप इस प्रकार हैं—

(१) रीति वाचक—

- अस तिरिया । १६ लो० क०
 अइगी तिरिया । २८ लो० क०
 यहि (इ) सर घाँ । ५७ घ०
 पैस (पान्त) भेषुहारा । ७६ घ० (प)
 तति सावरि । ६ लो० क०
 अस दुग । १ मे० स०
 कस पाग । १६ मे० स०
 तैस फल । २६ मे० स०
 अस ठाकुर । ४ । २ ह० घ०
 जस बोद की गति वैसी मारी । १ । १५ ह० घ०
 सोहि अस मुदरि । ३६ स० क०
 जस निमल मोती । १ । स० क०
 तस विवेश । ४ स० क०
 अइस न देतेउँ कोइ । ६ मिर०
 पढित अम भा । १६ मिर०
 ऐवेहि गगि । १५८ मिर० (गि)
 तस वान । १६५ मिर० (शि)
 कस नेह । १८७ मिर० (शि)

परिमाण वाचक

- एत रूप । १२ लो० क० अत बड । ४५ लो० क०
 एतनइ बोल । १८ मे० स०
 जत भाआ । ४ । १४ ह० घ०
 कनै दुख । ३ स० क०
 जत (सम्पत्ति) आहै ससार । १३ स० क०
 एतना नोके । ३३ स० क०
 एत बोल । १७६ मिर० (शि)
 तस पछताव । २३० मिर० (शि)
 बुधि जेती । २३३ मिर० (शि)
 ऐस (अइस) रूप । २७४ मिर० (शि)
 अस सारूप । २७४ मिर० (गि)
 जस दिन । ३०३

सख्या वाचक

केते अहि मारजें । ४३ लो० क०
 केतिक दिवस । ८ । १ ह० ष०
 जत बालक । ६ । ४ ह० ष०
 मुनि जेते । ४ । २५ ह० च०
 जेत अछर । १ स्वर्गा०

परसर्ग

१०७ प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त परसर्ग नीचे दिये जा रहे हैं—

सम्बन्ध वाचक

के । १३, कइ । २, के । ६, केर । ८०, कर । १५, क । ३, का ।
 २३ लो० क०
 केर, कई । २, कौ । २, कर । ६, के । १३, क । २२ मै० स०
 को । १, के । २, के । ३, को । १४ रा० ज०
 कर । ११, के । ६, कइ । १, क । ४, केर । ४३, कह (इ) ।
 ३ स० क०
 क । १, केरी । २, के । ४, को । ४, के । १०, कर । ११ मिर०
 के । १ । १, कौ । १ । १, को । २ । १, के । ५ । १, क । १ । ७,
 कर । ३ । ७ ह० च०

कम, सम्प्रदान

कह । ६ लो० क०, वहुँ । ४ च, किह । ८४ च० (प)
 कह । ५ मै० स०
 कह । ४, के । ७ रा० ज०
 कह । १८, कह । ५५, स० क०, के । १३ स्वर्गा०
 कह । ४, कह । ४३०, कौ । १३ मिर०
 कौ । ३ । १, वह । ७ । १, केह । ७१, क । २ । १,
 के । ८ । १ ह० च०

करण

सेंती । १२, सेतें । ६, सिउं । २२, सन । २३, लो० क०
 सौं । ४६ च० (प)
 सौं । २, सउं । १७ मै० स०

घो । १० रा० ज०
 से । २८, से । २८ सो । १२, सो । ५३, से । ५५, ते । २१ स० क०
 सो । २, सेजे । २, से । ४३३, मे । ४६ मिर० (गि)
 सा । १ । १, सो । १ । १, ता । ३ । ६ ह० च०

अपादान

हुते । १७, हुत । १, हुति । १८, ते । ३, ते । ५७ लो० क०
 से । रा० क०
 ते । १२ स्वर्गा०
 से । ४२६ सेउ । ४३२, हुने । ४३६ मिर०
 ते । २ । १, हुते । ४ । ४ ह० च०

अधिकरण

पर । ५, मह । १२, माफ । १३, माह । ३८ लो० क०
 मे । ३, मह । १६, मो । १६, मे० स०
 माह । २, मह । ३, पर । ६, मा । ११ मो । १६ रा० ज०
 माह । ११, माह । २३ स० क०
 मह । ५, माफ । २१, महि । ४२६ मिर०
 ऊरर । ६ । १, मो । ५ । १, माते । २ । ८, उपरहि । २ । ८
 मह । १ । ७, महभारि (भारि) । १ । १२ ह० च०

परसर्गों की भाँति प्रयुक्त होने वाले कुछ अय शब्द—

१०८ उपयुक्त परसर्गों के अतिरिक्त कुछ अय शब्द ऐसे हैं जिनका प्रयोग प्रारम्भिक अवधी में परसर्गों की भाँति हुआ है। नीचे उन्हें दिया जा रहा है—

(१) पइ, पइ ('से' 'द्वारा' के अर्थ में)—

तू पइ बोल जाइ जस पावसि । २४ लो० क०

तू पइ—तोपै तुझमे

अब मो पइ मैना कत जाइ । ४ मै० स०

मोपइ—मुझते

मापइ जाय करहु अस बातें । ६ । ६ ह० च०

(२) पहुँ (पास, निकट के अर्थ में)—

बिहँसत चाँद लोर पहु गई । ८ लो० क०

बनौ भीम नारायन पाहीं । १८ स्वर्गा०

समुझि सभारि राइ पहु आए । ४३७ मिर०

(३) लागि, लगि ('के लिये' के अर्थ में)—

लोर लागि मालिन घर गई । ७ लो० क०
 जेहि लगि इहवाँ आइहि । ६ लो० क०
 माँटी लागि जिव आप बिछारजै । १५ मै० स०
 तेहि लगि आपुहि परगटा । ३ मिर०
 काहे लागि हतसि सुकुमारी । ७ । १ ह० च०

(४) लहि, लगि (तक, पर्यन्त के अर्थ में)—

तउ लहि लौरिक कोस दुइ गएऊ । २१ लो० क०
 जहि लगि सबे पिरियमी सिरी । ६ च० (प)
 जउ लहि लोर न हम घर आवइ । १६ मै० स०
 तव लगि अन नखाइ । १६ । स० क०
 जब लगि हौं न कुरमिति पावौं । २१ मिर०

(५) नित ('के लिये' के अर्थ में)—

तिह (तिहें) नित को आवह बडकावा । ११ मै० स०
 तिह नित कौन बिटारइ आपू । ११ मै० स०
 तिह नित का तै भुरवसि । १२ मै० स०

(६) लगौं (पास, निकट के अर्थ में)—

पुरुख लगौं तिरिया दिखरावा । २० लो० क०

(७) सग ('के साथ' के अर्थ में)—

हन औ परब लोर सग मानाँ । १५ मै० स०
 ब्रजकुल सत सग रह । ३ । १ ह० च०

(८) पास—

पुरुख एक आइइ बोहि पास । २८ लो० क०
 दूत लखन तह पास । ४ म० स०
 धावन पठइय राजा पासू । १६ मिर० (शि)

(९) समेत

मुहज समेत विरस्पनि पावा । ८ लो० क०

(१०) तर ('तले, नीचे' के अर्थ में)—

जेहि तर बसे परा मुहि दूखा । ४३ लो० क०
 चपर सकट तर लय बढाए । १ । ८ ह० च०

(११) बिच—

मैन खवन बिच तिल एक परा । ३ ज०

(१२) ओर—

पर ओर घाते । २० च०

(१३) सम ('समान' के अर्थ में)—

तेहि सम प्रियिमी और न बेऊ । ५ । १ ह० च०

(१४) हेतु—

व्यासदेव सुत हेतु विचारा । ७ । १ ह० च०

(१५) कारन ('के लिये' के अर्थ में)—

गावहि रिले सत मुख कारन । १ । ८ ह० च०

(१६) उपर, उपरि—

ताहि उपर धति सुवासित ढारी । १७ रा० ज०

कोरे करिहि हम ऊपर छाहा । २४२ मिर० (घि)

(१७) सहित—

गिरिहि सहित चले त्रिपुरारी । ४८ स० क०

(१८) सरि (बराबर)—

एहि सरि अउर न पूजे कोई । १५ मिर०

एहि सरि—इनके बराबर

(१९) पठतर (समान, बराबर के अर्थ में)—

महासती ती सीता तेहि पठतर सत तोर । ५० स० क०

टिप्पणी

१— के और 'कइ' का अन्तर केवल लिपिगत प्रतीत होता है । उच्चारण में दोनों 'कइ' रहे होंगे ।

२—डॉ० सक्सेना का मत है कि सम्बन्ध कारक का परसग 'कौ' वस्तुतः 'कउ' रहा होगा । (दे० ए० अ० दे० टिप्पणी २७१) इसी प्रकार अधिकरण कारण का परसग 'मो' मउ रहा होगा (दे० ए० अ० टिप्पणी २८१) ।

□ □

क्रिया

१०६ धातु

प्रारम्भिक अवधो को धातुयें अय की दृष्टि से या तो भाव वाच्य है या कम वाच्य । कमवाच्य धातुयें अकमक या सकमक होती है, जबकि भाववाच्य धातुयें केवल अकमक होती हैं । धातुआ के साधारण और प्रेरणायक प्रकार होते हैं जैसे 'चलहि । १३ लो० क० और 'चलाउव' । ८० लो० क० । नामधातुयें अकमक होती हैं जैसे खोया गियइ बैठि लहराई । २ लो० क० ।

११० सहायक या अस्तिवाची क्रियायें

प्रारम्भिक अवधो में क्रियाओं के साथ सहायक क्रिया का संयोग अपेक्षाकृत कम मिलता है । सहायक क्रिया का संयोग केवल अपूर्ण कृदन्तो निश्चयायक वतमान, अपूर्ण कृदन्तो निश्चयायक भूत, पूर्ण कृदन्तो निश्चयार्थक वतमान तथा पूर्ण कृदन्तो निश्चयायक भूत रूपों में ही हुआ है । अय स्थानों पर ये अस्तिवाची रूप में ही लिखाई पड़ती है । प्रारम्भिक अवधो की रचनाओं में प्राप्त सहायक या अस्तिवाची क्रियाओं के रूप नीचे दिये जा रहे हैं—

१११ वतमान

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	अहो । ५ च० आछो । २४६ च० (५) हउ । ६ मै० स० हो । १६ रा० ज० ।	हहि । ६६ लो०क० अहहो (हि) । १ मै०स०
मध्यम पुरुष	होसि । ६१ च० आहिसि । ५ रा० ज० आहि । ५ रा० ज०	होहु । ३१ मिर० (सि) आछहु । ३६ स० क० वाटहु । ४६ स० क०

अय पुरुष	आद्ये । २६१ च० (प) हृद् । २ लो० क० आहि । १५ लो० व० अहृद् । १६ मै० स० अहा (ह) १८ लो० व० आहृद् । ६६ लो० क० वाट । ३८ स० क० वा । २६ च० (व)	आहि । ६१ च० आद्यहि । १८५ च० (प) है । १० मै० स० वाटे (टड?) ७ मै० स० आहृद् । ११ मिर० अहृद् (हि) । ६ मिर० हृद् । २ मिर०
----------	---	--

टिप्पणी—रा० ज० । ङ, स० व० । २८, मिर० । ७० शि० में होसई का प्रयोग वतमान निश्चयार्थं और अनुशास्य में मिलता है।

११२ भूतबाल

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	मइत् । ६ लो० व० मएत् । १३ स० व०	होत् (ते?) ६।७ ह० च०
मध्यम पुरुष	मइस । १४ मै० स०	
अन्य पुरुष	हुत् । १ लो० व० होत् । २५ लो० व० भवा । ६५ लो० व० मएत् । ६० लो० व० मत्ता । ६५ लो० व० अहा । १४ लो० व० मौ । २२ मै० स० मइ । १३ रा० ज० मा । १४ मिर०	भए । ५ लो० व० मए । १४ स० व० होत् । १६ रा० ज० अहे । १२७ मिर० (शि)

११३ भविष्य

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	हात् । २२ लो० व०	
मध्यम पुरुष	हात् । ५ लो० व०	
अन्य पुरुष	होत् । २ लो० व० होत् । ८० च०	

११४ अनुज्ञार्थ

	एक वचन	बहु वचन
मध्यम पुरुष	होहि । १४३ मिर० (घि) होहु । २ स०क०	
अथ पुरुष	होइ । ६ लो० क०	
	हो । १३ लो० क०	
	होहि । ६ रा० ज०	

११५ भूत सम्भावनाय

उत्तम पुरुष एक वचन
चोर होतेउ तोर अमरन लेतेउ । २१० च० (प)

मध्यम पुरुष बहुवचन
वारक होतेउ । १६७ च० (प)

अन्य पुरुष एकवचन
लोग पच नइ होति न कानी ।
सरसो आजु उतरतेउ पानी । २८ मै० स०

११६ पूर्व कालिक

होइ । २०३ च० (प)

भै । (भै वाचन भै छह बलि तहिआ) । ३।२५ ह० च०

टिप्पणी—(क्रिया सयोग)—

प्रारम्भिक अवधी में कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ क्रिया सयोग के लिये अस्तित्वाची क्रिया रूप 'हो' का प्रयोग न करके 'भा' रूप का प्रयोग हुआ है । परवर्ती अवधी में ऐम सयोग नहीं दिखलाई पड़ते—

देस देस मुरि (मोरि) भइ गइ लाजा । ४३ लो० क०

चलत चलत जो भै गै सामा । ३३ च०

तहवा भै कै करहि पुकारा । २३ स० क०

काल रचना

११७ प्रारम्भिक अवधी में तीन प्रकार लिखलाई पड़ते है—(१) निश्चयाय (२) अनुज्ञाय और (३) सम्भावनाय । निश्चयार्थ के रूप तीनों कालों में होते हैं । अनुज्ञाय के दो रूप—वतमान और भविष्य के मिलते हैं । सम्भावनाय का एक ही रूप भूत सम्भावनाय मिलता है ।

इनके अतिरिक्त कुछ रूप वृद्धों और सहायक क्रियाओं को मिलाकर बनते

है। प्रारम्भिक अवधी में इस प्रकार के रूप निम्नलिखित हैं—

(१) अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयाथ

अपूर्ण कृदन्त + वर्तमान निश्चयाथ सहायक क्रिया

(२) अपूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयाथ

अपूर्ण कृदन्त + भूत निश्चयाथ सहायक क्रिया

(३) पूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयाथ

पूर्ण कृदन्त + वर्तमान निश्चयाथ सहायक क्रिया

(४) पूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयाथ

पूर्ण कृदन्त + भूत निश्चयाथ सहायक क्रिया

इस प्रकार प्रारम्भिक अवधी की क्रियाओं के काल भेद निम्नलिखित हैं—

१—वर्तमान निश्चयाथ

२—भूत निश्चयाथ

३—भविष्य निश्चयाथ

४—अनुज्ञाथ

५—भविष्य अनुज्ञाथ

६—भूत सम्भावनाथ

७—अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयाथ

८—अपूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयाथ

९—पूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयाथ

१०—पूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयाथ

कृदन्त

११८ अपूर्ण कृदन्त

अपूर्ण कृदन्त तकारान्त होते हैं। स्त्रीलिंग रूपों में वे तिकारान्त हो जाते हैं। अपूर्ण कृदन्त रूप दोनो वचन और तीनों पुरुषों में समान व्यवहृत होते हैं। उनमें परिवर्तन नहीं होता।

उक्त । १ लो० क०

जनियत (कमवाच्य) । ४० लो० क०

बिलसत । १० मै० स०

कहत । १ रा० ज०

सुमिरत । १ स० क०

देति । २६ स० क०

लखत । १ मिर०

फिरति । ४३८ मिर०

करावति । २।८ ह० च०

कहो कही अपूण कृदन्त वतमान निश्चयाय का काम करते हैं—

अउ तू कहत चाद मुरि (मेरि) जोई । ६४ लो० क०

। दिन दिन चौगुन होत बवाई । १५ रा० ज०

जाहि देस अस बरते जतजत सदा बुधिवान । ४ स० क०

भूत सम्भावनायक रूप अपूण कृदन्तो से बनते हैं—

जिउ देतेउ । ५३ लो० क०

११६ पूर्ण कृदन्त

प्रारम्भिक अवधो में पूण कृदन्त के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं । इनमें से १, २, ३ और १५ का प्रयोग कभी कभी विशेषण और साधारणतः भूतकालिक क्रियापदों के रूप में होता है । शेष का केवल क्रियापदों के रूप में ।

१—आ, २—ई, ४—ए, ३—इ, ५—एउ, इउ, ६—एन, ७—एसि, इस, इसि, ८—एहु, इहु, ९—इन, इनि, एहि, १० एउ, ११—अउ, १२—ईउ, ईता, १३—ईतेसि, ईतिसि, १४—एनिह, ईतिह, १५—अल ।

विशेषण रूप में—आ—रूप का प्रयोग पुलिङ्ग एकवचन संज्ञा के साथ, ई रूप का स्त्रीलिंग एक वचन संज्ञा के साथ, ए रूप का पुल्लिंग बहुवचन संज्ञा के साथ होता है—

पूछा केवल परम (पेम) सुनाना । २० लो० व०

नाह मोर हो बारि वियाहो । ४ लो० क०

बसिठ वचन बिसभरे सुनावा । लो० क०

अल वस्तुतः पूर्वी भाषाआ का प्रत्यय है । विशेषण रूप में इसका प्रयोग रा० ज० में मिला है—

मग्न के मारल विखिधर जेठे । २२ रा० ज०

आ, ई और ए प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग सभी पुरुषों के साथ हो सकता है । आ प्रत्ययान्त रूप दोनों वचना में प्रयुक्त होता है । साधारणतः अकर्मक धातु होने पर ये (आ, ई, ए रूप) कर्ता के लिंग वचन का अनुसरण करते हैं और सकर्मक धातु होने पर कम के लिंग वचन का—

(१) बसिठ वचन बिसभरे सुनावा । १ लो० क०

आज रात निसहै तैं गावा । ७२ व० (५)

- चाँद लागि मइ बहु दुख देता । ४७ लो० क०
 बहुरूपिये बहु भेस भरावा । २६ च० (प)
 कहेसि लोर तुम्ह भला न किया । १५ लो० क०
 चाँद जइस अपनहि तुम पावा । १८५ च० (प)
 हम जाना यह सखी तुम्हारी । २७४ च० (प)
- (२) सोह करा सपूरन भई, लोरि लागि मालिन घर गई ।
 ७ लो० क०
- यहि मारग तै देखी कोई । २० लो० क०
 अस चाल तुम्ह लाज गवाई । १७ लो० क०
 एक ईछी में पीता । १५० च० (प)
- (३) नहुँ नरवत लखि पाए गरह जो फबै निसक । ७ लो० क०
 तुम्ह भनि नरवई भए आपा (या) ने । ३१ लो० क०
 हम जीते मन मह जनि हारहि । ३५ लो० क०
- (१) दूती दूत बचन जिव कहा । ७ मै० स०
 जासउ भई आपन जिइ हारा । १७ मै० स०
- (२) तेहि रतना मालिन हकराई । २ मै० स०
 लीत दरब मालिन पुनि गई मैना के बार । २ मै० स०
- (३) मूए किरनपन बापुरे । १ मै० स०
- (१) बालमोक रामायन भाखा । २ रा० ज०
 तइ पापी मोहि मारि गिरावा । ५ रा० ज०
 मै मारा तोर श्वन पूता । ६ रा० ज०
 भीखा बहुत हम पावा । ५ रा० ज०
- (२) पाछे लागी खाई । १२ रा० ज०
 तब नृप दशरथ मनहि विचारो । ४ रा० ज०
 (इसमें 'विचारो' क्रिया का कर्म 'बात' निहित प्रतीत होता है)
- (३) तहवा राजा गए भुलाई । ३ रा० ज०
 कवन बोल तुम बोलन लागे । २१ रा० ज०
 तीनि भुअन फिरि आए कतहुँ न पूजी आस । १० रा० ज०
 (कर्ता हम)
- (१) पुत्र लागि राजा भ्रम छाँडा । १० स० क०
 अब राजा तै तपसा जीता । १२ स० क०

पुत्र लागि में तजा तेज भडारा । १५ स० क०
 तेहि पाछे तिह मगल गावा । १७ स० क०
 बहुत दुख तुम देखा । ५४ स० क०
 करि तोरय केसव मन लावा, अब स्वामी तुह दरसन पावा ।
 ७ स० क० ।

(वर्ता हम)

- (२) अस कया जग जमी । १६ स० क०
 तुम मोरी हीछया पुरई आसा । ५५ स० क०
 जेहि सुमिरत मै मति गति पाई । १ स० क०
- (३) वसुह पलानि चले त्रिपुरारी । ११ स० क०
 कहा चले तुम पाडो कहहु आपन सतिभाउ । ७ स० क०
 तो कह परसन भए नर नाहा । १२ स० क०

(वर्ता हम)

- (१) आगे कला दिगवर आवा । ५६ मिर० (शि)
 कैहि कारन तोह तोह जोग सेवारा । ६६ मिर० (शि)
 मै तो उहि लागि बहु दुख देखा । ६४ मिर० (शि)
 गति गुन देखा पडितन्ह । १ मिर०
 राजा एक सवन हम सुन । १२ मिर०
- (२) कुवर देखि वह गई वैभमारा । १०० मिर० (गि)
 तो हम एक कया यह कही । ११ मिर०
- (३) जे रे मुहम्मद भढए सिन्धे । ४ मिर०
 इन्ह के राज यह रे हम नहै । १० मिर०
- (१) उपजा क्रोध छाप रिखि दीन्हा । १ । १ ह० च०
 अरे अघम ते उह का कीहा । ३ । ७ ह० च०
 जाके कछु प्रभु मै आएसु पावा । २ । २ ह० च०
 भक्ति देखि बिप्रह सुप माना । ३ । २२ ह० च०
 मातु कलेका हस नहि छाका । २ । २२ ह० च०
- (२) उहे कया हरि मारद पाई । ४ । १ ह० च०
 तुह तो कस करी लरिकाई । ८ । १ ह० च०
- (३) धरन गहे सालच हनुशरि । १ । १ ह० च०
 हमही तोहरे पास सिषाए । २ । २२ ह० च०

टिप्पणी

छदानुरोध के कारण कहा कही स्वर दीर्घ या ह्रस्व रूप हो जाते हैं। अवधी में अत्य 'व' का उच्चारण प्राय 'उ' की तरह होता है। जैसे 'समदि राउ बइसाउ । ७ स० क० में 'बइसाउ' छदानुरोध के कारण 'बइसावा' हो सकता था। उदधून पक्ति में 'बइसाउ' भूतकालिक कृदन्त रूप है आशायक नहीं।

—ईन,—ईह,—ईनी,—ईही,— ईने,— ईन्हे,—आना,— आनी,— औने प्रत्ययात् रूप (१), (२), (३) रूपों से अभिन्न हैं। एकारान्त पूण कृदन्ती रूप का प्रयोग मध्यम पुरुष ए० व० पुल्लिङ्ग कर्ता के साथ भा हाता है जैसे बिनु अपराधु हते पर नारी। १४ स० क०

(४)—ई—

ई प्रत्ययान्त पूण कृदन्त रूप अय पुरुष बहुवचन स्त्रीलिंग कर्ता रूप के साथ मिले है। इसने उदाहरण विरल है। अनुमानत इस रूप का प्रयोग उत्तम पुरुष कर्ता के साथ भी होता रहा होगा—

सखी सहेलिन देखन आइ, हस हँस चाँद बहिरि केँ लाइ

। ५२ व० (प)

चेरी सब घाइ, पवरि बार पूँछे कहुँ आई । ४३६ मिर०

(५)—एउ,—एहुँ,—इउ—

एउ (कही कही—एहुँ) प्रत्ययान्त उत्तम पुरुष एक वचन पुल्लिङ्ग के साथ और—इउ प्रत्ययान्त रूप स्त्रीलिंग के साथ प्रयुक्त होने हैं।—एउ रूप कही कही स्त्रीलिंग कर्ता के साथ भी प्रयुक्त मिलता है—

राउ रूप चद बीडा मारेउ । १३ लो० क०

हउ अस बोलिउ चतुर सयानो । ३ ला० क०

भोग भुगत सम घरउ उनारी । ६ मे० स०

आएहु राजा भेटन तोही । १६ रा० ज०

पुन लागि मै भयेउ (उँ) विवोगी । १३ स० क०

तेहि पथ में लाइउ आधी । ४६ स० क०

अइस न देखेउँ कोई । ६ मिर०

उहि रे मान हों गइउ विलाई । १५५ मिर० (सि)

मै कत छोड़उ परम अभागी । २ । ८ ह० व०

(६)—एन—

अत्ययात् पूण कृदन्त, अय पुरुष बहुवचन कर्ता के ही साथ प्रयुक्त प्राप्त

हुआ है। इसका केवल एक ही उदाहरण मुझे मिला है—

तब पाठो उठि बिनती साएन । २० स्वर्गो०

(७) एसि, इसु, इसि—

ये रूप मध्यमपुरुष एक वचन तथा अन्यपुरुष एक वचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। मध्यमपुरुष कर्ता के साथ—एसि साधारणतः पुल्लिङ्ग के और इसि तथा इस स्त्रीलिङ्ग कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। अयपुरुष कर्ता के साथ इन रूपों के प्रयोग में ऐसा कोई अन्तर नहीं मिललाई पड़ता है—

मध्यम पुरुष

वचन तोर मोहि ओपद कहेसि न जोड हमार । १६ च०
ता अफरे (?) बोलिसि भौंउ हाई । २१ च०
अस ओखर तें बोलिसि घाई । ७ मै० स०
तें पद भइस माग नैं तातो । १४ मै० स०
अरे अरे अघम हतेसि सतापो । ६ रा० ज०
की तै भूलि परेसि बन आई । २६ स० क०
जो तै बात सुनिसि हमारी । ४१ मिर० (शि)

अय पुरुष

कावा (?) तजि नहि बोलेसि बोलू । १२ लो० क०
बूकिसि टाउ कहवा हुत आवा ।
घौत कहिस तुह ऊपर तोरी कीत न कानि । १२ मै० स०
तहवाँ देखिसि बन अधियारा । २४ स० क०
जन रावत सग लिहेसि बुलाई । १७ मिर०
जो भागिसि सो पाइसि विधि सेउ । १८ मिर०
मन मह कहेसि दाव भलि भएउ । ३ । ७ ह० च०
कुच बिख साए पिआण्सी पाए सोध निखान । २ । ६ ह० च०

(८) एह, इह—

एह, एउ और इह (स्त्रीलिङ्ग) प्रत्ययान्त पूण वृद्धतो रूप मध्यम पुरुष बहु वचन रूप में प्रयुक्त होते हैं—

भलें सोर आएह इहवाँ राखेह चित्त हमार । १ च०
आग्या बचन गोसाईं आएह कवने काम । १८ रा० ज०
सवा बहुत किएह तुह मोरी । १५ स० क०
बहा खाई के रहेह मोटाई । १३५ मिर० (शि)

तोह अगमनि घर आइहू हों डह परिउ भुलाई । -

—१५४ मिर० (ति)

भगती जुगती तुम्ह कीन्हेउ सेवा, मुकुतो न भागेहू तुम्ह वपुदेवा ।

३ । ३ ह० च०

(९) हम, इनि, एन्हि, इह—

ये रूप अय पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होने हैं । उरलान् रूपों में लिंगभेद का कोई आधार नहीं दूना जा सक्ता है । यहाँ उदघृत पक्तियों में 'बैठा इन्ह' क्रिया का कर्ता बहुवचन खालिग है । किन्तु इह प्रत्ययान् रूप खालिग कर्ता के साथ ही प्रयुक्त होता था यह नहीं कहा जा सकता ।

कै केहू कछु दे मगराइन भुवगहि लाग । ३६ च०

नैन नीर देह मोहि छिरकेहि आए लोग जेहि पास ।

६६ च० (प)

आदर के सुमिमिहि पास बैठाइह आइ । १२ रा० ज०

(कर्ता कौसल्या कैकेयी)

आदर के सब समदा से बैसाएहि पाट । १७ स० च०

जदब विहिनि कुरन चौबासी । ४ स्वर्गा०

दे रे असोस जोतिसा बहुरे पाएहि बहुत पसाउ । १५ मिर०

(१०) एउ—

एक प्रत्ययान्त पूण वृद्धती रूप अय पुरुष एकवचन पुल्लिग कर्ता के साथ प्रयुक्त होता है । इसे—एउ रूप (क्रमांक ८) से भिन्न समझना चाहिए । मध्यम पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होने वाला—एउ प्रत्ययान्त रूप वस्तुतः एहू का ही 'हू' का अल्पप्राण बना हुआ रूप है ।

जिउ कुवट कर एएउ छटाई । १५ सो० क०

साधन भए ते सेह पुषमो कीहा न रहेउ । १ मै० स०

बन बन फिरत पथ न पाएउ । ३ रा० ज०

चंद्र हस कर लीहेउ खांडा । १० स० क०

दुहर मास दिन दस मह जोरत यह औरानेउ जाइ ।

१० मिर०

अपरित राजे अजगुन कीएउ, छिनक भुअग कठ मो दीएउ ।

५ । १ ह० च०

(११) अउ—

उ प्रत्ययान्त पूण वृद्धन्ती रूप अय पुरुष ए० व० कर्ता के साथ प्रयुक्त

होता है। यह रूप केवल 'मउ' और 'गउ' क्रियापदों में दिखलाई पड़ता है जो छदानुरोध से 'मवा' या 'गवा' रूप में बहुप्रयुक्त हुए हैं। 'मउ' का उदाहरण अस्तिवाचक या सहायक क्रिया के प्रकरण में दिया जा चुका है।

लौकी भमकि उठि गौ तवही । ४ रा० ज०

कोस साठि गौ अधिक भुलाना । २४ स० व०

(१२) ईउ, ईता—

ये रूप अय पुरुष और उत्तम पुरुष ए० व० कर्ता के साथ प्रयुक्त मिले हैं। इनका प्रयोग केवल दाउद की रचना और मिरगावन में मिलता है। असम्भव नहीं कि ई या ईता प्रत्ययान्त वृद्धतो रूप का प्रयोग मध्यमपुरुष कर्ता ए० व० के साथ भी होता रहा हो।

उत्तम पुरुष एक वचन

कहिसि सुहज घन छाँडिजो मैं कोता दोस । ५८ च०

मेंट भुगुटि मैं बोहि की कोती । २६५ मिर० (सि)

अय पुरुष एक वचन

मानु सम्मान न कोत बयारू । वैसैं आह सो चाँद दुलारू ।

५१ च० (प)

(१३) एतिस, ईतिसि—

ये पूण वृद्धतो रूप अय पुंस्य एक वचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। ये रूप दाउद की रचना और मिर० में ही मिलते हैं—

सीस नाय के सोरिक लेतिस

घसि कव (के) कान एक फुमि देतिस । २ च०

सत से घम पथ पगु दीतिसि

सत सायो आगे के लीतिसि । ७२ मिर० (सि)

(१४) ईतिन्ह—

यह रूप केवल कुतवन की रचना में मिला है। यह अन्य पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होता है—

सत वन ले चौडोन तुलोन राजहि ली तिन्ह बाहि । ४३४ मिर०

आपन आपन लीतिन्ह चोर । ४० मिर० (सि)

(१५) अल—

अल प्रत्ययात् पूण वृद्धन्ती रूप वस्तुतः मागधी (भोजपुरी, मयि-नो बंगला आदि) भाषाओं के है। इसका प्रयोग साधारणतः अय पुरुष एक वचन कर्ता के

साप होता है। स० ४० १५ में इसका प्रयोग मध्यम पुरुष आदरायक वर्ता के साथ हुआ है। यह विशेषण का भी काम करते हैं। अवधो में यत्र तत्र ऐसे रूप भोजपुरी प्रभाव के कारण दिखाई पड़ते हैं। वे मिले भी ऐसी रचनाओं में हैं जिनकी रचना पूर्वी प्रदेशों में हुई थी—

महये बह मल कहल गोसाईं । ३५ स० क०
 (महया (मत्री) ने कहा है गोसाईं आपने भला कहा)
 मंनव मारल विपघर जैमे । २८ रा० ज०
 बदन चाँद जति उदिनल आहा । ६२ मिर० (सि)

१२० वतमाग निरवयाध

वर्तमाना निरवयाध के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	अउं, ओं	अहिं
मध्यम पुरुष	असि, अहि,	अहु, अउ
सम्य पुरुष	अइ, अहि, अ	अहिं, अइ

उत्तम पुरुष एकवचन

अउ अइ बाल जइस मर देगउं

तजि जिउ सोक न मरहि लजाई । १७ लो० क०
 अनचिनही कस बोलसि बैना । ३ मै० म०
 मर्म न जानसि पापी कहसि कौन तै लोग । १७ स० क०
 अबहूँ दीठ बातें तै कहही । अबग होय वै चुप नहि रहही ।
 १६० मिर० (दि)

काहे लागि हतसि सुकुमारी । ७ । १ ह० च०

मध्यम पुरुष बहु वचन

सिद्ध कहइ तुम्ह काहे जूमहु
 करहु गियान अब मन महँ बूमहु । ६५ लो० क०
 नाउं भरनि कस फिरहु भुलाने । ३ मिर०
 कोटि अड उपराजहु छिन मोकरठ सघार । १ । १ ह० च०
 मिया हतउ तुम्ह कौने काना । ७ । १ ह० च०

अथ पुरुष एक वचन

पाछें देखइ चाँदा आई । १५ लो० क०
 कहहि लोर सुनहु तुम चाँदा अइसन भुहि न डराउ । १३ लो० क०
 भीजु सवै घन गरजे निसर न कोऊ वार । १४ लो० क०
 हंसि के पूछइ मैना रानी । ३ मै० स०
 रावहि पुख ख सेम चडि नारी । २४ मै० स०
 कह धूतिनि मुन भालति मैना । ३ मै० स०
 राम के जनम पढ जो सुनई
 सहस होम सो दिन दिन करई । २ रा० ज०
 राजा बैठि तब भँखहि साय लिए धनु बान । ३ रा० ज०
 राम रग रस लावहु मुरजदास कवि भान । १८ रा० ज०
 कहै दूत मुनु कया राजा अब नहि खाई । ३६ स० क०
 तइवा तप सौ करहि भुआरा । १० स० क०
 तुह देख मप हरख हमारा । ८ स० क०
 दान देइ बहुत गिनति न आवा । ६ मिर०
 रावस चलहि रूहइ वै कया । ४३२ मिर०
 सिधनि एके पूत जन बम भौवन रन ढोठ । ४०६ मिर०
 गठे सवारै भज सोई । १ । १ ह० च०
 चरन चरन जन लालच गावहि गुन विस्तार । ४ । १ ह० च०

बहुरि रिखे राजा सो कहई
 दानव एक चरित कस करइ । ४१८ ह० च०
 हृदय हरख जन लालच, सुमिरहु सारगपानि । ११८ ह० च०

अय पुरुष बहु वचन

तेहि पर कामिनि सेज बिछावहि
 कत अमोल भेंटि गिय लावहि । ५ लो० क०
 दादुर पपिहा नुहकहि भोरा । ११ मे० स०
 एहि बिधि लोग करइ जेव नारा । १७ रा० ज०
 मसा मखी तन खाहि पतगा । ४३ स० क०
 जे करतार बडे करि सिरजे तै रै छपावहि दोष । ११ मिर०
 तुम्ह ते नारदादि गुन गावहि
 गन गधरप तुम्ह चरन मनावहि । २११ ह० च०

टिप्पणी

१—अवधो में उच्चारण की दृष्टि से कहउ और कहौ (कहो कहो लिखित रूप कहौ) तथा कहइ और कहै में अन्तर नहीं होगा। कहाँ और कहै का उच्चारण कदाचित् कहउ और कहइ ही होगा। इनमें अन्तर केवल चिपि का है।

२—मिर० में अय पुरुष व० व० कर्ता के लिये एकाध स्थलों पर—अन्ति प्रत्ययान्त प्रयोग मिलते हैं, जैसे रचति, दगधति । १७८ मिर० (शि)

१२१ भूत निरचपारय

इसके निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं।

	एक वचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	एउ, एहुँ (पुंलिंग) इउ (स्त्रीलिंग) ईता	
मध्यम पुरुष	एसि, इसि (स्त्रीलिंग) इस (स्त्रीलिंग)	एहु, एउ (पुंलिंग) इहु (स्त्रीलिंग)
अन्य पुरुष	एसि, इस इसि, एसि,	हनि एहि, इन, एन ईतिन्ह ई (केवल स्त्रीलिंग)

एउ, अउ,
ईउ, ईता, ईतिसि

जैसा कि कहा गया है, पूण वृत्तों के विवेचन में आ, ई, ए, प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग सभी पुरुषों और दोनों वचनों में होता है। पूण वृत्तों का विवेचन करते समय इनके उदाहरण दे दिए गए हैं। द० ११६

१२२ भविष्य निश्चयाय

निश्चयायक भविष्य के जो रूप प्रारम्भिक अवधो में मिले हैं वे इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	आउव, अब, आइव, व इहउ	व अव, वइ
मध्यम पुरुष	इहसि, आव	आउव, इहउ, हु अव
अथ पुरुष	इहि इहइ, आउव अव	इहहि, इहइ आव

उत्तम पुरुष एक वचन

सुख कहा मइ चादा बुलाउव

सक वाज दे पुरुव चलाउव । १० लो० व०

तुम्हहि तजि आइव परदेसू । १६ लो० क०

तोरें वचन चांद जउं पइहउ । ५२ लो० क०

सोरस होइ लोसों उतर देव तव वाह । १० म० सु०

घरमहि मालिन करिनेउ चाउ । २१ म० सु०

से उपदेस करव मै झारी । १८ स्वगा०

मन हीछ् या में पुरइव तोरी । १२ स० क०

कहे काह में मुख देखराउव । ५८ मिर० (त्रि)

साय गए तुम्हरे दुख पइहीं । २३ मिर० (त्रि)

सो में सौंभव तोहि मुआरा । ७।१ ह० व०

उत्तम पुरुष बहु वचन

लोरिक कहा सुनहु दहुं चाग मवन भरव अब मीन् ।

सो देबै जो तोरे मन माहा । १२ स्वर्गा०
काह उतर हम देव । १२७ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष एक वचन

जो तू जेहसि मैके आगे पठौ स देस । ४६ च० (प)
जीवन जात न जानव गए बार पछताव । ८ मै० स०
चलत चलत पथ पै हसि जाँ तें सत सौँ जाब ।

—१२४ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहु वचन

जउ तुम्ह बरु यह बनिज चलाउब । ८० लो० क०
सहरस सबद हियर फाटउ अब जल देखिहुत जागि
जेहहु कौने बाट घराई । १४५ मिर० (शि)
जो तुम्ह निकट करव रखवारी । ७ । ६ ह० च०

अथ पुरुष एकवचन

चौद कहा अब लोरिक जाइहि
मन उतरें फिरि फिरि नहि आइहि । २ लो० क०
विरथ होय यह जीवन मोरा । ४० च०
पोसमास का करिहइ मोरा । १६ मै० स०
त्रिमुअन सुंदर बेटवा सो जग जननिहि आई । १० रा० ज०
दिन दस लागिहि जात । १० स्वर्गा०
का करिहइ करतार । ४३८ मिर०
लौ के पारि तोरि के छाइह । ८६ मिर० (नि)
रवन एक माह कुवर जो आउब । ६५ मिर० (शि)
इह के ग्रह जो हाइहि बारा । ७१ ह० च०
एह बानक जदुबंस उषारब । २ । ६ ह० च०

अथ पुरुष बहु वचन

बारि बूढ़ि दोउ मरिहहि कर न त्रियउ मनुहारि । १५ लो० क०
हठ ना रहि हइ हमरे आगे । २१ रा० ज०
बाप सिप छाहि छाइहहि । ८१ स० क०
सउ सौँ सउ सपाती होइहि बाप सिप नहि साब ।

१२४ मिर० (शि)

जे जरत उवारव । ४ । ११ ह० च०

१२३ अनुसार्थ

अनुसार्थक क्रिया के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	अउ, अहूँ	अहिं
मध्यम पुरुष	उ, असि, असु अहि,	अहु अह आहु
	(केवल धातु)	
अथ पुरुष	अइ, अहि अउ, अ	अहिं

उत्तम पुरुष एकवचन

दइय ठाव जो मागा पावउँ । ३ लो० क०
 दूत वचन जैउँ मैना पावहूँ । २ मै० स०
 आनि देहूँ तोहि तोहि प्रेम पियारा । २४ मै० स०
 कैसे खाउँ अतिथही बाँची । १२ रा० ज०
 जस चाहौ तस देउँ बिस्तारा । १५ स० क०
 दरसन देहु न पापो किहैहु मद बहून । २० स्वर्गा०
 कहेसि बान हनि का एहि मारउ उतरि घरउँ हठि जोर । १८ मिर०
 राम क्रिस्न के फोरौं आखी । ४ । ८ ह० च०

उत्तम पुरुष बहु वचन

हम फुनि देखि नियाव निवारहि पूछहि तुम्हरे तात । ६८ लो० क०

मध्यम पुरुष एकवचन

बोगि बोगि चलु चाँद गुवारो । ११ लो० क०
 गुनी कहा जनि जीउ हुलावसि । ५५ लो० क०
 बामन कहसु महरसौं । ५० च० (प)
 चलहि सौर पुनि हौ भिनुसारा । १३ लो० क०
 पायन टेल बिरस्पति हौं तो चेर तुम्हार । १६ च०
 कह दूतिनि सुन मालति मैना । मै० स०
 तोर दुख सुनत भरत हौं मैना बोल छाडदे मोहि । ६ मै० स०
 एक माँस सुनु बोल हमारा । २४ मै० स०
 कच मो कह जस परे विचारा । ५ रा० ज०

ग्यास रितिय मुनु बिनती मोरी । ६ स० क०
 मर्म न जानसि पापो यहसि कौन ते लोग । २७ स० क०
 वासुदेव मुन कहा हमारा । २० स० क०
 तू चहु रस देगु अस कहा । ४२६ मिर०
 भुगति देव जहु मिछ्या ले रे इहाँ सो । जाहि । १२८ मिर० (शि)
 मुनु राजा कुल बस उधारन । १।८ ह० च०
 बुधि दे सारद भाई । २।१ ह० च०
 चलि जा मित्र कहा समुभाई । ४।८ ह० च०

मध्यम पुरुष घट्टवचन—

मोर गनित तुम लोरिक जानहु
 कहउ बोल सबहो तुम्ह मानहु । १० लो० क०
 पया करहु तो रहाहु । ३० च०
 अगहन छल बेरासहु मोरे हुत तुम्ह जाइ । १७ मै० स०
 कहा चले तुम पाडी कहहु आपन सति भाउ । ७ स० क०
 बिनती मोरि करव गै राजा अउ तुह खाउ । ३७ स० क०
 जैमुनि सगन निरुतहु दुनह क करह बिआह । ५१ स० क०
 ह्रिदय हरख जन लालच सुमिरहु सारग पानि । १।८ ह० च०

अन्य पुरुष एक वचन—

होइहि देउ उठान पिय पूजइ मनसा आइ । ५ लो० क०
 लारिक जउ तुहि पीरा परहो । ५६ लो० क०
 सीस टूट ऊपर जो हेरा । २३ च०
 अब मो पह मैना कत जाइ । ४ मै० स०
 तेहि दिन करउ बधावना जब लोरिक घर आउ । २३ मै० स०
 और न देखै पार । २५ मै० स०
 पिअहु नीर रहे प्रान तोहारा । ६ रा० ज०
 कंठि बैठि जो कहइ भवानी । ३ स० क०
 कन्या एक जमहि ग्रिहि तोरी । १५ स० क०
 सो कछु कहहु गोसाइ सुनत ग्यान जेहि जाग । ८ स० क०
 सहस नाम जो सुने कहन क्या फल पाउ । ५५ स० क०
 तउ रे बड़ाई करइ जो कोई । ६ मिर०
 आउ बरउ हुसेन शाह के आहि जगत कै टेक । ६ मिर०

एक न पूत नाउ जेहि रहा । २ मिर०

(छदानुरोध से)

तखक जाए डसे नूप तोही । ५।१ ह० च०

अय पुरुष बहु वचन—

बोला सभा कहहि दुहुँ आई । ६६ लो० क० ।

सुन पावहि तउ भार अडाई । ६ मै० स०

ते पाढो कत लेहि निवासा । ६ स० क०

जे करतार बडे करि सिरजै तेरे छपावहि दोख । ११ मिर०

१२४ भविष्य अनुनाय—

आज्ञापक भविष्य के उदाहरण विरल है । इसके केवल मध्यम पुरुष ब० व० में मिलते हैं । इसके निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

बहुवचन

एह, एह

बहु वचन

आधि राति जब जानेहु तब उठि चालेहु वीर । १० ला० क०

बाह लगाय खरग चमकाएह । च०

बरजेहु पितै मरइ जनि रोई । ४० स० क०

हरख सहित दिज आगे जाएहू । १।२२ ह० च०

१२५ भूत सभावनाथ

भूत सम्भावनाथ के उदाहरण केवल एक वचन में ही मिले हैं । वे इस प्रकार हैं—

उत्तम पुरुष एकवचन

जिउ देतेउ भरत न लसात बार । ५३ लो० क०

बर उतर तिन्ह भरतिउ बारी । ३६ च०

सर सों आज उतरतें हूँ पानी । २८ मै० स०

जरपहुँ मरप न कहूँक सोही । ६७ मिर० (ति)

जूझि जात का करतिउ भाई । १।८ ह० च०

मध्यम पुरुष एकवचन

जो यह सपत न देतिसि मोहीं । ६७ मिर० (शि)

अथ पुरुष एकवचन

मरत त सागन वार । ५३ लो० व०

१२६ अपूग कृदन्ती यतमाग निश्चयार्थ

अपूर्णा कृदन्ती यतमान निश्चयार्थ के निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

उत्तम पुरुष एकवचन

विरह दगध हों मरत सनेहा । ३ च०

पुरखे खान सजाती अहों । ५३ च०

तोर दुल देन मरत हल मना । ६ मै० स०

ताहि बधे के कारने माँगन हों श्रीराम । १६ रा० ज०

कहु रिखिइन्ह के राजा पूछन हों सो तोहि । ६ स० क०

दारुन साप तोहि देति हों । २६ स० व०

उत्तम पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

आइ चहूँ मिलि कोह जुहारू

जूकि भरत है करहु विचारू । ६६ लो० क०

(हम जूके मरते हैं विचार (निर्णय) कीजिए)

मध्यम पुरुष एक वचन (अत्यन्त विरल)

से इ फल अब देति हसि मोही । ३६ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

जानत हहु त्रिप कस की रचना । २ । ५ ह० च०

अथ पुरुष एकवचन

कनक बरन चमकत हइ देहा । २ लो० क०

बह देखु बावन आवत अहा । २२ लो० क०

निति उठि दान दत है राजा । १३ रा० ज०

कौन जात हैरे पापी ते मोर हरे ग्यान । ४६ स० क०

देख सोवत है बन निसका । ४२६ मिर०

लालच के प्रभु सामी जमत है ससार । २ । २ ह० च०

अथ पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

कैति भवर बिलसत है केवल फूल दरभाइ । १० मै० स०

१२७ अपूग कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन (अत्यन्त विरल)

आवत अहिउं कुवर अक देखा । १५५ मिर० (गि)

उत्तम पुरुष बहुवचन तथा मध्यम पुरुष का कोई रूप नहीं प्राप्त हो सका है ।
अथ पुरुष के रूप अवश्य प्राप्त हुए हैं—

अथ पुरुष एक वचन

पूनेउ जइम मुख मुख दीपत अहा । गयी सौ जोति खीन हीइ रहा ।

४३१ च० (प)

जस निरास आवत हुत राजा अस न होए जग कोउ । १०७

मिर० (शि)

अथ पुरुष बहु वचन

फिरति अहो मदिर अपने मह का करिहै करतार । ४३८ मिर०

पलना सोवत होत मुरारो । १ । ८ ह० च०

१२८ पूण कृव ती वतमान निश्चयाय

इस रूप के उदाहरण विरत हैं ।

अथ पुरुष एक वचन

जहाँ बरजहि ठाड हइ तहाँ । ५७ लो० क०

बदन चीन जनि उदिनल आहा । ९२ मिर० (गि)

सौरै ताहि जो देखिसि अहा । २९ मिर० (शि)

औघर भवा बैठ वह अहा । ३१५ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहु वचन

वचन पुर तुम्ह देखेहु आहा । ८० मिर० (शि)

अथ पुरुष बहु वचन

वैस देवता आर्घ्यहि तहि ठाऊँ । ४४ स० क०

१२९ पूण कृवती भूत निश्चयाय

इस रूप के केवल निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

अथ पुरुष एक वचन

भरि इक रात चाँद हुत बसी । ४२ लो० क०

ठाको मुदि हुता अधियारी । २६४ च० (प)

महै चीर हम लोहउ अहा । १८४ मिर० (गि)

जै गहि लहिजा राकेव अही । २०५ मिर० (शि)

राजकुँवर जहें हुजा सुनाता । ३६ मिर० (गि)

मध्यम पुरुष षठ् यचन

जब रे उठाय बठारेउ अहा । १६५ मिर० (गि)

उत्तम पुरुष एष यचन

बोलेउ (उँ) सोइ जो देन (रे ?) उँ आहा । ७३ चं० (व)

१३० पूवकालिक

प्राप्त पूवकालिक वृद्धन्त के उदाहरणों में स अधिवांग—इ स्वरांत हैं । कही कही ई के स्थान पर अ मिलता है । औ और आ के परे कही कही ई व स्थान पर ए मिलता है ।

खेइ, लइ । १८ लो० क०

देखि । ८० लो० क०

जाइ । २ मै० स०

देखि । ६ मै०

जाए । ४ रा० ज०

उठि उठि । ५ रा० ज०

बठि । ३ स० क०

कइ । ४ स० क०

आन । ४२ स० क० अश्रित फल नित आन खवावों

देखि । २ मिर०

छाडि । ३ मिर०

जरि । ७ मिर०

रोए । १ । ८ ह० च०

आए । ४ । १ ह० च०

जानि, बिहसि । १ । ६ ह० च०

१३१ क्रियायक सज्ञा

प्रारम्भिक अवधी में क्रियायक सज्ञाओं के दो रूप प्राप्त हुए हैं । नकारान्त रूप और वकारान्त । वकारान्त रूप के उदाहरण अपेक्षाकृत विरल हैं ।

अविकारी रूप—

देखि नगर सभ परा भगाना । ३३ लो० क०

वीर नगर तउ चाहन लागे । ६३ लो० क०

कहव तुम्हार न पावइ मेना । १८ मै० स०
 कपट रूप रोबन अनुसारी । ५ मै० स०
 धाएहु राजा भेंटन तोही । १९ रा० ज०
 झोढन डासन बर केर पाता । ४३ स० क०
 अबहुँ भूठ बोलिब ना छाडसि । ३१७ मिर० (शि)
 मोरि चिन्हावन केहि रे विधि होई । २९७ मिर० (शि)
 नगर देस महँ परेव भगाना । ३१० मिर० (शि)
 तब वसुदेव कहन अस लागे । ८ । १ ह० च०

विद्वृत रूप—

वियाथक सजा के—बइ और बइ प्रत्ययान्त विद्वृत रूप प्राप्त हुए हैं ।

हरइ जउ पावउं । ४६ लो० क०
 जेहि विधि राखै सत सौं कौन डोलावै पार । २ मै० स०
 जीव देवै वरु पारउं राम क देवइ पार । २० रा० ज०
 सुरज किरन जनु जीतइ चाहइ । १९ स० क०
 सो महेस सभ कहवै लीहा । १४ स० क०
 वामन बैठि गनै सब लागे । १५ मिर०
 मरिब कहु (तरुनापा) नरेसा । ४३३ मिर०
 गरजि गगन घन बरखै लागे । १ । १९ ह० च०

१३२ कतृ वाचक सजा

प्रारम्भिक अवधो में कर्तृवाचक सजा के निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

सिरजनहार देहि निस्तारा । ४६ लो० क०
 घनि सै घोल घनि लेखन हारा । ५६ लो० क०
 दीप गए से आवन हारा । ६ म० स०
 बयो कर पावउ तीर साधन खेदनहार विन । म० स०
 प्ररबिल लिखा बिधाते कै दहु मेटनहारा । ९ स० क०
 जेहि मोरे तेहि सिरजनहारा । १० स्वर्गा०
 अति मुरूप घनि सिरजनिहारा । १४ मिर०

१३३ प्रेरणायक

पातु में आ जोड़ कर प्रेरणायक क्रिया बनाए गए उदाहरण प्राप्त होते हैं ।

सुनावा । १, जलावउ । १, विद्यावाहि । ५ लो० क०

डोलाई । २,	पहराऊँ । २,	बुलाई । ४ भे० स०
जेवाँवा । २,	पहिरावा । १०,	बटाइह । १२ रा० ज०
सड़ावा । ३,	छोदावा । १८,	प्रजावहु । १६ स० क०
सुनावहि । ३,	समुभानहि । ९,	पद्मावह । १६ मिर०
बैठारेज । २ । ८	जनावहु । १ । १,	पवटाए । २ । ८ ह० च०

१३४ कमवाच्य

प्रारम्भिक अवधी में दो प्रकार के कमवाच्य मिलते हैं । सरिलिष्ट और विदिलिष्ट । सरिलिष्ट कमवाच्य के रूपों में अपूर्ण कृदन्ती से बने रूपों के अतिरिक्त अयो का प्रयोग अनुनास्य में होता है—

सरिलिष्ट—

पाइय । १, मारिय । ३४, लीजइ । २६, कीज । ६
जनियत । ४० लो० क०
कीजइ । ५, बलसियइ । १३, मानिय, १५,
कीज । २६ । भ० स०
बोलियइ, कहियइ । रा० ज०
जाइए (इ), दीजै । ३४ स० क०
गनियै । ४३६ मिर०, पठइज । १६ मिर० (शि)
गनीज । ३३ मिर० (शि), कीज, लीजै । ३६ मिर० (शि)
देखिय । ५ धरिअ । १ । ६ ह० च०, कीजै । ५ । ५ ह० च०

विदिलिष्ट कम वाच्य—

गही न जाई । २ लो० क०
कहे न जाई । ११ च०
परा जाइ । १६ भे० स०
चलि जाई । २० रा० ज०
जानि न जाई । १६ स० क०
चलि न जाई । ३३ स० क०
बिसरि न जाइ । २१ मिर०
कहि जाई । ६ मिर०
जानि न जाई । ४ । ८ ह० च०
लखि न जाए । १ । १ ह० च०

१३५ सयुक्त क्रिया

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में निम्नलिखित क्रियायें सहायक क्रियाओं के साथ मिलकर सयुक्त क्रियाओं का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं—

जाना—

ले गई । ४, जाऊँ उड़ाई । १६ लो० क०
 गए मुलाई । ३, उठि गे । ४, चलिजाई । २० रा० ज०
 ले गी । ३०, गे बटु । २६, गैफूटी । ३१ स० क०
 गएउ हेराई । २०, गालोटी । ४३५,
 कहि जाई । ६ मिर०
 भरि जाई । २ । ८ ह० च०, चलो जा । ४ । ८ ह० च०

पड़ना—

ले परी । ४ लो० क०
 पडउ जइ आइ । ५ मै० स०
 पर पुरछाई । ४, छूटि पर । ७,
 मुरछि परे । २२ रा० ज०
 मूलि परेसि । २६ स० क०
 पूरा सिर आई । १ । ८ ह० च०

लगना—

आइ अब तागा । ४, चाहन लागे । ६३ लो० क०
 लागे खाई । १२, नाचन लागे । १४ रा० ज०
 पढावइ लागे । १६, खंलै लागे । ७,
 होइ लाग । १७
 सुनावन लागे । ७।१, कहन लागे । ८।१ ह० च०

रहना—

रहा छाई । १७ लो० क०
 रहै छपाई । २८ स० क०
 रभि रहै । ३।६ ह० च०

पाना—

लखि पाए । ७, जाइ न पावा । २१
 हरइ जउ पावउ । ४६ लो० क०
 मुन पावइ । ८ मै० स०

होरखे पावा । १९ रा० ज०
 रहइ न पावा । ४३२ मिर०
 जानि न पावा । ८।१ ह० च०

आना—

गिनत न आवइ । ४७ लो० क०
 से आवहु । ५ रा० ज०
 आने काती । २८,
 आनु बोलाई । ३८ स० क०
 गनत न आव । १२ मिर०
 चलि आए । ५१ । ६ ह० च०

चलना—

सइ चलै । १५, चला उड़ाई । ५६ लो० क०
 चली पराई । १६ मिर०

लेना—

घरि लीहे । ११, लिएउ छुड़ाई । ४७ लो० क०
 लोह सभारी । २ मै० स०
 हरि लेई । २८ स० क०
 लिहेसि बुलाई । १७ मिर०

पारना (सकना के अर्थ में)—

देखि को पारइ । ३४ लो० क०
 डोलावे पार । २ मै० स०
 देवे पार । २० रा० ज०
 जोरइ पारा । ३, नियजे पारा । ३३ स० क०
 रहै न कोई पार । ४३७ मिर०
 गने को पारा । २० रा० ज०

देना—

देइ दिखाइ । ४६ लो० क०
 देहु डोलाई । २ मै० स०

हना—

जूभइ चाह ।

बैठ—

लै बैठ । ८० लो० क०

आइ बैठयो (बैठेर) ३ च०

उठना—

उठा अकुत्ताइ । १५ स० क०

तुलाना—

आइ तुलानी । ४३५ मिर०

□ □

अव्यय

क्रिया विशेषण

१३६ प्रारम्भिक अवघी में प्राप्त क्रिया विशेषण नीचे दिए जा रहे हैं—

काल वाचक—

अब । ३, तब । २, फिर । ७, फुनि । ९, जब । १०,
जललहि, तललहि । २०, बहुरि । २३, आजु । ४०, पुति । ४६,
जठ (जब के अर्थ में) । ४८, नित । ३१ लो० व०

दिन दिन । १५ च०

पहलें । १, पुनि । १, तब (ही) । ४, जठ । ९, तठ । ९,
नित, नित । ९, अब । ११, जब, जब । १४, आज (हि) । १८,
बललहि । १९, घडा घढी । २६, काळ । २८ मै० स०
तब । ११, जब । १२, त । ४, जो । ४, पहिलें । २१,
चौख । २१, पुनि । ३ रा० व०

तब । ११, पब । ११, सदा । ९, आज । ८, पहिले । ४,
छनिक । ६, तय लगि । ६, नित । ४२, चौखे । ३८,
कालि । ४४ स० क०

जब लगि । २, पहिलें ३, काळ । ८, फुनि । ८, ततखन । ११
जो, तो । ९, अब । १२, तब । ४२४ काहिह । ४२४,
कत । ४२५, जहिया तहिया । ४४६, वेगि । १६ मिर०
अब । २।१, जब (ही), तब (ही) । ३।१, बेगि । ५।१,
आदि । ५।१, जहिया, तहिया । ६।१, पुनि । ६।१,
आजे । ७।१ कब (हि) । ३।८ बहुरि । ४।८,
तुरित । ५।१ ह० व०

स्थान वाचक—

कहीं । ४, बीच । ६ । ८, कत (हु) । १२,
 बाहिर । १३, कुत । १५, इहवाँ । १८, उहवाँ । २,
 तहवा । ३७, कित । ४८, नियर । ५१, कहीं, जहाँ । ५७, लो०क०
 तले । १७ च० (प), आगे । १५ (च०)
 अगे । २, जहाँ । ३, कहवाँ । ३, कत । ४, कहीं । ६,
 तहवाँ, जहवाँ । २६, पावै । २१, नियर । २६
 तहवाँ । ३ ऊपर । ४, हेठ । ४, आगे । २१ रा० ज०
 तहवाँ । १, तह । १०, भीतर । १०, जहा । १०, कहीं । ७,
 ऊपर । १७, कतहु । २० स० व०
 तहा । ५, आगे, पीछे । ७, तर । २०, भीतर । २०,
 ऊपर । ४२६, इहाँ । ४३३, बाहर । ४३३, कत । ४३० मिर०
 विच । ३११, तह (हैं) । ५११, तर । ११८, बाहर । २१८,
 उपर (हि) । २१८, जहाँ, तहाँ । २१८,
 भीतर । ३१८, पास । ४१८ ह० च०

रीति वाचक—

अस । ३, तस । ४, तइस (इ) । ७ अइस । ८,
 जइस । १३, अइसन । १३,
 कस । १६, बेउ (किव) । १८, कइसेँ । १८, जइस । २१ लो० व०
 अइस । १, जिउ । १, कस । ३, अस, ५, जस । ५,
 अइसा । ५ वयोकर । ६, तस । ११, अइसन । १८,
 तित तित । २६, तइस । २६, अइसा । २६ । म० स०
 जैसे । १५, जेमे । १५, अस । १५,
 जस । १, अस । ६ जैसे । ६, जेमे । ७, तस । ४,
 जैसन, अइसन । २२, स० व०
 कस । ३ अइग । ६, तसेहि । ८, जेमे । ११ मिर०
 जेम । ५११, जैसे । ११८, अस । ११८, जिमि । २८ ह० च०

परिमाण वाचक—

कहु । १३, बहुउ । १६ अति । १६ त्रित । ३१ लो० व०
 अति । ७ कहु । ८, अनम । १०, बहुउ । १४, अगार । १८
 तिन (अरा सा के अर्थ में त्रिया विशेषगवत प्रयुक्त) । २२ मै० स०

बहु । ३ बहुत । ५, रा० ज०

जत । १३, स० क०

बहु बहुत । ५, किछु । ८, अति । १२, किछौ । २१ मिर०

कछु । ३१, बहु । ३१, अति । २८, अधिक । ३८ ह० च०

निपेय वाचक—

न । १, नाही । १, नहु । ७, मत । १३, जनि । ५५, लो० क०

ना । १, न । ४, बिन । ३०, नही । २१, मति । २८ म० स०

ना । ८, बिनु । १०, न । १, जनि । २०, रा० ज०

न । ११, नहि । १२, जनि । १५, बिनु । १३ स० क०

ना । नही । १, न । १, नहि । ८ मिर०

नहि । ४१, न । ४१, जनि । ६१ नाही । ६१ ह० च०

विविध—

तक । ३१ च०, किन । ८ मिर० ती । ४५ । ८१ ह० च०

१३७ समुच्चय बोधक

सयोजक—

अउ । २०, २० लो० क०, अवर । १८ च०, अह । २४ लो० क०

अउर । ५२ लो० क०

और । ३, म० स०

ओ । ११ रा० ज०

ओ । ५४, ५६ स० क०

ओ । ४, अउर । ८, और ४३८ मिर०

विकल्पात्मक—

कई । ४४, ४५, नत । १, बह । ८० लो० क०

नातर । ६, कई । २१, मै० स०

की । ५, बह । २० रा० ज०

की । २६ स० क०

के । ४२४ मिर०

वर । ५ । १ ह० च०

प्रतिषेधक—

पे । १०, २३, ६२ लो० क०

पइ । १४ मै० स०

पे । ४३२ मिर०

आश्रित पाठ्य, संयोजक—

जउ । ५, जानहु । ११, जनु । १, दहु । ८, सो० ५०

के । जो । २, जउ । ६, मे० ए०

जाहु । ३, जो । ५, ६ रा० ज०

जे । १ (जितय कि), जनु । १६, जउ, ३३, दहु । ६,

जो । ४७ ए० ५०

जो । ४२४, जनु । २१, जनो । ४२४, जउ । ४२७ मिर०

जो । ८ गनि (नु ?) २ । ८, जानहु । ३ । ८ ह० च०

सम्भवानाथक—

के वहु । २८ मे० स०, मनु । ३१ च० (५)

मति—

मति सुनपावह केवहु सोर

(कही लोरिक न सुन पाए ।)

१३८ निरक्षयबोधक रूप

प्रारम्भिक अवधी में निश्चय बोधक दो रूपों में पाए जाते हैं । केवलायक और समेतायक । समेतायक रूप हु' अथवा 'उ' लगाकर तथा केवलायक हि अथवा 'ह' लागा कर बनाए जाते हैं । ये प्रत्यय, सना, विशेषण, संख्या वाचक, सवनाम, क्रिया तथा क्रिया विशेषण रूपा में लगते हैं ।

(क) समेतार्थक

१—सज्ञा—

खानजहानहु । १२ च० (५)

नगरहु । १ च०

सपनेहु । ६

नेगीहु । ७४३ मिर०

नलहु । १३ मिर०

२—विशेषण

साचेहु । ४२५ मिर०

३—संख्या वाचक

साती ३१ च० (५), दुवउ । ११ सो० क०

छनीसो । १४, चहुँ । २२ दुनहुँ । २०,
 दोउ । १५, दोहूँ । २४ मै० स०
 दूनहुँ । ५, तिहूँ । १६ रा० ज०
 चारिउ २०, पाँची । ७ स० व०
 चारिउ । ४, दूवौ । ४३८, एकी । १३,
 वसीसउ । १८, पायहुँ । ४३१ मिर०
 आठौ । ह० च०

४—सघनाम

हमारेउ । ३८ लो० क०, तुम्हहूँ । (प),
 तुम्हरो । २७ लो० क० तूह । ३८ च०,
 कौनिउ । ५० लो० व०
 तोहूँ । २३, काहूँ ६ मै० स०
 हमहूँ । १२ रा० ज०
 सेउ । १६ स० क०
 ओरो । ४८ स० व०
 तहूँ । ४२६, हमहूँ । ४३२, काहूँ । ४३८ मिर०
 हमहूँ । २ । ८
 केहूँ । ४ ८ ह० च०

५—क्रिया (अत्य त विरल)

मुएहूँ । ३ लो० क०
 देखतहूँ । ५ च०

६—त्रिया विशेषण

केसेहूँ । ४६, कतहूँ । १२, अजहूँ । ३६ लो० व०
 वहूँ । ६, तबहूँ । १३, वेसहूँ । २० मै० स०
 तबहूँ । ८ रा० ज०
 कबहूँ । २० स० क०,
 कबहूँ । ५ स्वर्गा०
 कहियत । १८, किछौ । २१, ऐसेहूँ । ४४० मिर०
 कबहुक । २

(ख) केयलायक

सज्ञा—

घरहि । २८ लो० क०

माटिइ । १६ मै० स०

विशेषण—

सगरिइ । ६६ लो० क०

भूटहि । २० मै० स०

सांचहि । ११० मिर० (गि)

सख्या वाचक—

एके । २७ स० क०

एके । ४२६ मिर०

सर्वनाम—

साई । ३६, सबै । ६, सबही । १०, हमारहि ।

७३, सो० क०

तुमहि । ७४ च० (प)

सोइ । १५ मै० स०

एहै । ८ रा० ज०

आपुहि । ४, सबै । ३५ स० क०

उहै । २६ मिर० (गि)

आपुहि । ४३१, सबै । १३ मिर०

सोई । ३ । ६ ह० च०, इहै । ४ । ८ ह० च०

श्रिया—

बहूतहि । ३४, बसतहि । ३६ सो० क०

श्रियतई । १६ सौतहि । ५१

बैहि । ४४० मिर०, मुनतहि । ५६ मिर० (गि)

घरतहि । ४ । ८ ह० च०

श्रिया शिवायन

बटुतइ । ३५, जबहि । २४, ठबहू । ३६, ठतहि । ४८,

दहार्द । ६५, बतहि । ४८ च० (प)

उपसहार

पिढ़ले पृष्ठों में प्रारम्भिक अवधो भाषा का अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। भाषा विशेष के रूप में अवधो का सर्वप्रथम उल्लेख अमीर खुसरो की जिस रचना में हुआ है उसका रचनाकाल ७१८ हि० अर्थात् सन् १३१६ ई० है। अमार के खुसरो के उल्लेख के पूर्व भी कई रचनाओं—प्राकृत पेंगलम् के कुछ छंदों, राउरवेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण में अवधो के पर्याप्त रूप मिल जाते हैं। वस्तुतः उक्त रचनाया विशेषतः उक्तिव्यक्ति प्रकरण में अवधो रूप इतनी प्रचुर सख्या में हैं कि डा० चटर्जी ने उक्तिव्यक्ति की भाषा को कौशली या पूर्वी हिन्दी की प्रारम्भिक अवस्था का अवधो रूप कहा है। दे० १, १२ स्टडी उ० व्य० प्र०। किन्तु हमने उक्तिव्यक्ति की भाषा को दो कारणा से अवधो नहा कहा है।

१—उक्तिव्यक्ति में आए हुए सभी रूप अवधो में नहीं मिलते। उदाहरण के लिये उक्तिव्यक्ति में अन्य पुरुष बहुवचन में 'करति' तथा उत्तम पुरुष बहुवचन में 'करहु' रूप होते हैं (देखिए ए स्टडी आव दि न्यू इण्डो ब्यारियन स्पेच उक्तिव्यक्ति प्रकरण पृ० ५६ पर दिया गया धातुरूपादा) ये रूप अवधो में नहीं मिलते।

२—खुसरो के पूव अवधो शब्द का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

प्राकृत पेंगलम् के विवेचित छंदों और राउरवेल की भाषा की भी यही स्थिति है।

पढववसहि जम्म धरीजे, सपअ, अज्जिअ धम्मक दिज्जे

सोउ जुहिठिठर सकट पाआ देवक लिवसअ केण मिटावा।

—१०१ व० घ०

की भाषा को अवधो न कह कर अवधो का पूव रूप कहना अधिक उचित है क्योंकि जम्म, सपअ, अज्जिअ, धम्मक केण जैसे प्रयोग परवर्ती अवधो में नहीं मिलते।

इसी प्रकार तामु सोह कि कछठा पावइ। ४ रा० वे० ती को अवधो कहने में कोई आपत्ति नहा है किन्तु दित्ता। १६ रा० उ० प्रारम्भिक अवधो के 'दीता

का पूरा रूप है। यस्तुतः प्राकृत वेंगलम् के विवेचन छ द राउरवेस और उत्ति
व्यक्ति प्रकरण की भाषा उत आसन्न पूर्वका भाषा का प्रतिनिधित्व करती है जिसका
अवधी विवक्षित हुई है।

हमें गुप्तरो के उल्लेख काल के ६३ वर्ष परचात् ७८१ हि० अर्थात् १३७६
ई० में रचित दाऊँ कवि का काव्य उल्लेख होता है। प्रस्तुत विवेचन में दाऊँ
के काव्य के रचनाकाल १४ या शताब्दी से लेकर सातचत्वारस के हरिचरित
(रचनाकाल लगभग सम्यत् १५८२ सा १५२५ ई०) तक प्राप्त अवधी भाषा
का अध्ययन किया गया है। डॉ० बाबूराम सक्सेना ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'एवो
स्पृशन आय अवधी' में जायसी और तुष्ट परवती अवधी कवियों की भाषा का
अध्ययन प्रस्तुत कर दिया था इसलिये हमने जानबूझ कर इस विवेचन में
जायसी पूत्र अवधी कवियों की ही भाषा का जिसे हमने प्रारम्भिक अवधी कहा
है, अध्ययन किया है।

ध्वनि

प्रारम्भिक अवधि और जायसी परचात् अवधी में ध्वनि विचार की दृष्टि से
अंतर नहीं है। यद्यपि प्रारम्भिक अवधी में ण और श व्यजन मिल जाते हैं किन्तु
उनके प्रयोग विरल है। 'ण' आधुनिक अवधा की भाँति अपने वग के स्वर के
पूव प्रयुक्त होता है। 'ग' भी विरल प्रयुक्त है। 'ग' का प्रयोग रा० ज०
जसे धार्मिक और अवधी के पूर्वो प्रदेश में लिखी गई रचना में मिलता है।
'श' के छिटपुट प्रयोग अत्र भी जैसे दोग। ८ मै० स० श्वाभी। १ स० क०,
तिशना। २ मिर०, मिलते हैं। किन्तु ये तत्सम या अधनत्सम शब्दा मे ही मिलते
हैं जिनमें सम्भवतः प्राचीनता या आभिजात्य (?) का आभास देने लिए 'श' का
प्रयोग किया गया है।

प्रारम्भिक अवधी में यद्यपि र और ल परस्पर विनिमेय ध्वनियाँ हैं किन्तु
उसमें 'ल्' के र् में परिवर्तित होने की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक है। 'र्' ल'
के जो उदाहरण मिलते हैं वे अधिकांशतः पूर्वो अवधी या भोजपुरी प्रदेश में
लिखी गयी रचनाओं में हैं जसे मदिल। ५७ स० क० दुदिस्टिल। ५० मिर०
(शि) इत्यादि अतः यह भाषा प्रभाव भी हो सकता है।

प्रारम्भिक अवधी में 'रह' व्यजन नहीं मिला है।

सज्ञा

लोरकहा मनासत आर सत्यवती कथा मे ऐने उदाहरण मिले हैं जहाँ सज्ञा
क मूलरूप अकारण हकारान्त हो गए है दे० टिप्पणी।

हकारात् मूलरूप के उदाहरण ईश्वरदास के पश्चात् अवधी रचनाओं में नहीं मिले है। यद्यपि जनता में इस प्रकार के रूप आज भी प्रचलित है। हकारात् मूल रूप का उदाहरण प्राकृत पौगलम् की इस पक्ति में भी मिलता है—

बह पच्छा वावह । १६५ व० वृ०

(पश्चिमी वायु बहती है ।)

ज्ञान होना है कि हकारात् अविकारी अपभ्रंश और प्रारम्भिक अवधी में विद्यमान था, जिसका प्रयोग परवर्ती अवधी काव्य में नहीं मिलता किन्तु जो अभी मात्र प्रयाग में शेष है।

कारक

प्रारम्भिक और परवर्ती अवधी के कारक रूपों में सामान्यतः कोई अन्तर नहीं है। किन्तु साधन के मनासत की कुछ पक्तियों में पठो एक वचन वा अह प्रत्ययात् न पुल्लिङ्ग रूप विद्यमान है जैसे 'नरकह कुड आनि सो मैलसि।' ३२ मै० सू० जो परवर्ती अवधी में नहीं मिलता।

आ प्रत्ययात् विकारी रूप बहुवचन के प्रयोग च० (प) और लो० क० में मिलने हैं।

महस करा ४४१ च० (प)

वाह्राँ जोने । ६५ ल० क०

इस तरह के उदाहरण परवर्ती अवधी में मुझे नहीं मिले हैं।

परसग

प्रारम्भिक अवधी की प्राचीनतर रचनाओं में परवर्ती अवधी की अपेक्षा परसगों का कम प्रयोग हुआ है। लो० क० की प्रारम्भिक १०० पक्तियों में परसगों का प्रयोग केवल २१ बार हुआ है जबकि पञ्चावत की प्रारम्भिक १०० पविनयों में व ४१ बार प्रयुक्त हुए हैं। पिरणावत में परसगों के प्रयोग की मात्रा लगभग पञ्चावत के ही समान है।

सवनाम

१४५ प्रारम्भिक अवधी और परवर्ती अवधी के सवनाम रूपों में कोई महत्वपूर्ण अन्तर नहीं दिखलाई पड़ा है। किन्तु उसमें काव्य भाषा के रूप में प्रयुक्त परवर्ती अवधी की अपना सवनाम रूपों की विविधता अधिक है। नीचे प्रारम्भिक अवधी के सवनाम रूपा का उल्लेख किया जा रहा है जो परवर्ती

अवधी में रचित काव्यों की भाषा में^१ नहीं मिलते—

(१) 'हम' का विकृत रूप 'हमाह'—

काहे तजिसि हमाह । १२८ मिर० (शि)

करवत सीस देह जौ कोइ बैसह जाय हमाह । १२१ मिर० (शि)

सम्भवत यह रूप हमह या हमहि से विकसित हुआ होगा । शब्दों के मध्य वर्ती 'अ' को दीर्घ करने की प्रवृत्ति प्रारम्भिक अवधी में मिलती है । दे० ७६

(२) मध्यम पुरुष अविकारी बहुवचन के तुहँ, तुह, तुहूँ रूप—

मइ करि जउ तुहि (ह) इहवाँ रहू । ३७ ली० व०

का लोगा तुह घरहु पियार । १ मै० स०

सभे देवता तुहू वाटौ मिति एक जस लेह । ४६ स० क०

(३) मध्यम पुरुष विकृत रूप बहुवचन का 'तुह' रूप—

तुह ते बुधि जन करहि के वारा । २।१ ह० च०

(४) अय पुरुष नित्य सम्बन्धी और दूरवर्ती सकेत वाचक सवनाम ए० व० के 'से' और 'ऊ' रूप—

से उपदेस करब मै भारी । ८ स्वगा०

ऊ फिर घेर न होइ । ३०८ च० (प)

'से' रूप बगाली, उडिया और भोजपुरी (दे० ओ० डी० वी० ऐल ५५५) में मिलता है । ऊ का प्रयोग पूर्वी अवधी भाषी जनता करती है ।

दे० ए० अ० २४१ ।

(५) निकटवर्ती सकेत वाचक सवनाम का एकवचन रूप 'ई' और विकृत बहुवचन 'इह' जो भूतकालिक कृदन्ती क्रियाओं के कर्ता रूप में प्रयुक्त होता है ।

ई सभ लेहु गिनाइ । ५४ स० क०

इह हमार सब देखु सरीरा । २७ स० क०

ये दोनों रूप अवधी भाषी जनता में प्रचलित हैं देखिए एवाल्याशन आफ अवधी । २४४ बी ।

(६) निकटवर्ती सकेत वाचक सवनाम के विकारी बहुवचन रूप में एक स्थल पर 'एतिह' का प्रयोग मिलता है । जे एति ह कर लीह सोभावा । १८३

१ परवर्ती काव्य भाषा से मेरा तात्वयय डॉ० सक्सेना द्वारा विवेचित ए० अ० की प्रारम्भिक अवधी (अर्थात् अवधी) स है । उन्होंने प्रारम्भिक अवधी के अन्तर्गत जायसी, तुलसीदास, और नूरमोहम्मद की भाषा का अध्ययन किया है ।

मिर० (शि) । यह रूप अत्र कही नहीं मिला है ।

(७) सम्बन्ध वाचक सवनाम का एकवचन अविकारी रूप—

पुन क्या जे यह सुने । ५७ स० क०

यह रूप गाढा जिले में प्रचलित है । दे० २४७ (ए)० ए० अ० ।

(८) प्रदान वाचक सवनाम मूल रूप एक वचन के 'कउन' और 'के' रूप—

पिउ गारुइ विन कउन जिवावे । २६ मै० स०

पुरबिल लिखा विघाते के दहु मेटन हार । ९ स० क०

उपयुक्त रूपों का प्रयोग अवधी में आज भी होता है ।

कउन आवा है (लखीमपुरी) दे० ए० अ० २५० ए०

उनका के मारिसि (लेखक स्वयं सूचक)

(९) अनिश्चय वाचक सवनाम का प्राणिवाचक मूल रूप का 'वेहू' रूप—

कइ वेहू कछु दइ मगु सावा । ४५ लो० क०

गोंडा, फैजाबाद, मुलतानपुर प्रतापगढ और इलाहाबाद जिला में 'वेऊ और 'वेहू' रूप जन जन प्रचलित है (देखिए अ० २५८ वी० ।)

(१०) अनिश्चय वाचक सवनाम का सम्बन्धवाची विशेषण रूप 'परार'—

आप परार न चौ है भुआरा । २८ रा० ज०

यह रूप लखीमपुरी में आज भी प्रचलित है देखिए—

परारे धन से कउन परोजन । २५८ वी०, ऋ० अ०

क्रिया

१४६ चतमान फाल —

सहायक तथा अस्तिवाची क्रिया—

(१) आछ्

प्रारम्भिक पूर्व अवधी में आछ् धातु का प्रयोग परवर्ती अवधी की अपेक्षा अधिक हुआ है । जायसी ने आछहि का प्रयोग केवल दो बार और 'आछ् का प्रयोग केवल एक बार किया है (देखिए ए० अ० २९०) जबकि दाऊ का रचना में आछ धातु के विविध रूपों का प्रयोग १२ मिलता है । आछहि । ३३ च० [प], आछे । ८३ च० । आछ । ९६, आछे १८७, आछहि । १८५, आछे १९९, आछ । २१४ आछत । २३८, आछी । २४६, आछइ । २५९, आछे । २६१, आछइ । २६४ चं० (प) ।

मुलसीदास ने केवल 'अछन' रूप का प्रयोग किया है, जबकि ईश्वरदास ने सत्यवती क्या में आछे । ४५७, आछहि । ५४, आछइ । ३६ का प्रयोग

दिया है।

(२) बा, बाट

प्रारम्भिक अवधी में बाट या त्रियात्रा व स्त्रा का प्रयोग विनया ठे —

तेस बा तग गारर । २६ व० (प)

सभे बा दुगो । १६ रा० ज०

जहूनी जया बाट । ३८ स० व०

जेव बाटे (टै) पाँरो भाई । ७ स० व०—इयाँ

डा० रावगना द्वारा विरचित अवधी काव्यों की भाषा में इस सहायक त्रिया का कोई उल्लेख नहीं है। यद्यपि उन्होंने यह त्रिया त्रिया है कि प्रतापगढ़ में बा, बाट और इलाहाबाद तथा मिर्जापुर जिला में बाट त्रिया व स्त्रा प्रचलित है। ६० ए० अ० २६१ ए० ।

(३) होल

रा० ज० स० व० और मिर० में वर्तमान काल को अस्तिवाचा त्रिया के रूप में होलहि का प्रयोग विनया है—

भए ध्याह जां होलहि नाती । ८ रा० ज०

ऐसन पाप ताहि कह होगे । २६ स० व०

होगे कोई चौहरा । ७० मि० (नि)

होल धातु का प्रयोग आजकल भोजपुरी में होता है। (दे० ५५४ भो० भा० स०) अवधी में नहीं। रा० ज० स० व० और मिर० तीनों रचनायें पूर्वी अवधी प्रदेश या पश्चिमी भोजपुरी क्षेत्र की हैं अतः सम्भव है कि यह पूर्वी प्रभाव हो। यह भी सम्भव नहीं कि प्रारम्भिक अवधी में यह रूप प्रचलित रहा हो किन्तु कालांतर में विनुस हो गया हो।

(४) अति, अधि

मिर० म अ य पुरुष वर्तमान निश्चयाय के व० व० में रचति, करधि जैसे रूप मिलते हैं—

मान बिहूने हेतु विनु रूपहि जे रचति

मूरख दिया पतग जेव फिरि फिरि ते दगधति । १७६ मिर० (नि)

ते किय किय न करधि । १८० मिर० (शि)

रचति, दगधति, करधि, जैसे प्रयोग प्रारम्भिक अवधी में भी विरल हैं। अलवत्ता रा० वे० मोह्यि । ३ मिलता है। उ० य० प्र० में प्राप्त अन्य पुरुष वर्तमान निश्चयाय बहुवचन रूप 'करति' को डा० चटर्जी ने करति से विकसित बताया है। दे० स्टडी ७१ उ० व्य० । सम्भवतः 'करति' से जहाँ उ० व्य० प्र०

में प्राप्त 'करति' रूप विकसित हुआ वहा उसमें करइ और करहि रूप भी विकसित हुए करति महाप्राणीकृत करयि तथा करनि > करइ और करयि > करहि । मिर० में प्राप्त अति और अयि प्रत्ययान्त रूप इस अनुमान का आधार प्रस्तुत करत है । अति और अयि प्रत्ययात् रूप सम्भवत प्रारम्भिक अवधौ में अप्रचलित हो गए थे ।

१४७ भूतकाल —

(१) होत, होते

प्रारम्भिक अवधौ में भूतकालिक वृद्धन्तो रूप हात (ए० व०) हाते (व० व०) रूप मिलन हैं । ये रूप परवर्ती अवधौ में अत्यन्त विरल है । मुझे पद्यावत में इसके केवल दो उदाहरण मिले हैं । होती छ० सं० २८३, ४१८ मधुमालती में इसका कोई उदाहरण नहीं मिलता ।

दु ख जो हात कुमलात । ५५ लो० व०

(जो दु ख से मलान था)

अपनी गरभ होत (त) हम जहिया । ६ । ह० च०

वन मा ग्रामन होत सुखी । १६ रा० ज०

यह रूप न तो परवर्ती अवधौ का य भाषा (पद्यावत के दा स्यला को छोड़ कर) मिलता है और न अवधौ का बालियों में ही इसका सन्धान मिलता है । किन्तु 'उ' को 'ओ' बना देने की प्रवृत्ति अवधौ में आज भी दिखलाई पड़ती है दूसर > दोसर, चापलूस > चापलूस । इसी प्रवृत्ति से हुत और हुते का होत और होते रूप बने प्रतीत होते हैं ।

(२) भउ

परवर्ती अवधौ में भूतकालिक वृद्धन्तो सहायक क्रिया 'भउ' अत्यन्त विरल है । यह रूप मैनासत रामजम और सत्यवती कथा और हरिचरित में पर्याप्त मिलता है । पूर पद्यावत में यह ७ बार और मधुमालती में ३ बार प्रयुक्त हुआ है । पद्यावत छ० मनाक १६, २६७, ३२१ ३६२, ३६०, ४६६, ४७७, मधुमालती छ० म० ५७ ८२, ४७१ (भो) । सं० व० और ह० च० में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में हुआ है । ह० च० (कुल पक्ति सख्या लगभग १५८४) में यह २४ बार और सं० व० (कुल प० सं० लगभग ४६४) में यह रूप १६ बार प्रयुक्त हुआ है ।

हिन्दी क्षेत्र और उसके आसपास की नवोदित भारतीय जायभाषाओं में इस रूप का व्यापक प्रचार था । यह रूप प्राकृत पैंगलम् व० व० १३४, राजल बेल

२४, में मिलता है। ब्रजभाषा के कवि मतिराम ने भी इस रूप का प्रयोग किया है। (देखिए ब्रजभाषा २३१) डा० धीरेन्द्र वर्मा ने कहा है कि यह रूप ब्रजभाषा में अपेक्षाकृत कम प्रयुक्त होता है 'तथा अवधो प्रभाव के कारण ही सकता है (ब्रजभाषा २३१) कातिलता में भी इस रूप का प्रयोग हुआ है (दे० कातिलता ३।३७) इससे भी पूर्व मैथिल रचना वणरत्नाकर में भी इस रूप का प्रयोग हुआ है (२५ क, ३२ ख, २६ क, ३७ क, ४१ क, ४७ ख ७०, ७२ ख)।

सम्भवतः भू धातु का अवधो में प्रचलित कृत्स्नी भूत कालिक रूप भा, कभी 'भ्र' या (गा गया क गभ को भौति)—जिससे भइ और भअ और भउ दोनों रूप विकसित हुए। गेउ (गया) भी प्रारम्भिक अवधो (देखिए रा० ज०।४, स० क० २४, ३०, ३१ इत्यादि ह० च०।४।३, १०।१, इत्यादि पन्ना०। २३५, ३२७ इत्यादि तथा मधु०। २३६, २६७ इत्यादि तथा वण रत्नाकर ३३। क, ४२। ख इत्यादि में मिलता है।

(३) ईत, ईतिस, एतिस, एतिह

प्रारम्भिक अवधो में ईत ईतिस, एतिस और एतिह भूतकालिक कृत्स्नी रूप मिलते हैं। दे० ११६ (१२, १३, १४) प्रारम्भिक अवधो के ये रूप सर्वाधिक सख्या में चन्दायन में मिलते हैं। परवर्ती अवधो की रचनाओं में इनके प्रयोग केवल मधुमालती में मिलते हैं। चन्दायन (१० के आधार पर) में इन रूपों का सोलह बार, (छं० क्र० ५१, ७७, १३१, २३७, २६१, २७६, २९१, ३०४, ३५०, ३६५, ३६७, ४२७, ४४६। छं० क्रमांक ७७, ३६१, और ३६५ में इस रूप का प्रयोग दो बार हुआ है) मै० स० में दो बार (२, १२) मिर० (शि) के १६६वें छन्द तक इन रूपों का प्रयोग १६ बार, पुरी मधुमालती में पाँच बार हुआ है। पदमावत में यह रूप नहीं मिलता। पदमावत जैसे प्रतिनिधि काव्य में इस रूप का अप्राप्त होना इस बात का संकेत करता है कि यह रूप अप्रचलित हो गया था। मधुमालती में भी इसका केवल पाँच बार प्रयुक्त होना भी यही संकेत करता है।

राउरवेल में दित्ता का प्रयोग हुआ है।

अधिहि क्य्यल हहरा दित्ता। १६ रा० वे०

(आँसो में गहरा या चमकदार कागल दिया)

कोता, या दोता जेमे रूपों का विकास इस प्रकार हुआ होगा। कृ + क्त
कृत > कित्त > कात। क्त प्रत्यय से युक्त रूपा का विकास दो रूपा में हुआ है
का + क्त - दत्त, या दिण्ण > नीत > दीह। ससृष्ट में णिण या णिण जेसे रूप
नहीं णिणनाई पड़त किनु भ० भा० आ० में ऐसे रूप मिलते हैं। सम्भवतः

कीत, और कीत जैसे दोनो रूपो का विकाम साथ साथ हुआ है। आज अवधी में कीत, दीत रूपो का प्रचलन नहीं है किन्तु प्रारम्भिक अवधो में ये मिलते हैं। पञ्जाबी में दीता जैसे प्रयोग आज भी प्रचलित हैं।

कीतिस, लीतिस जैसे रूप सम्भवत अवधो के किहिस, लिहिस जैसे रूपो के पूर्व रूप हैं।

लीतिह, लीतिस ए० व० का बहुवचन रूप है।

१४८ अनुज्ञाय—

(१) असु

इसके अतिरिक्त मध्यम पुरुष अनुज्ञाय एकवचन के असु प्रत्ययान्त रूप च०

(५) और ह० च० में मिलते हैं।

खडग भरहर मारसु। १२५ च० (५)

बहसु माहि वारी कित हूत आवा। ४४० च० (५)

बरिससु जाए अखडित घारा। २।२३ ह० च० इत्यादि।

डा० बाबूराम सक्सेना ने अनुज्ञाय—अत प्रत्ययात् रूपपरविचार करते हुए इसे (—अस) को म० भा० आ० का रूप माना है। दे० ३१० ए०अ०। प्राकृत पैगलम् म यह रूप मिलता है—

किञ्जसु, बुग्मसु। ११९ व० वृ०

पिशेल ने भी इस रूप का उदाहरण दिया है—बहसु (दे० ४६७ प्र० भा० व्या०)।

(२) अह

मध्यम पुरुष अनुज्ञाय बहुवचन—अह प्रत्ययात् रूप

यह केवल स० व० में मिला है—

दुनहुक करह विआह

प्रा० भा० व्या० में पिशेल ने इस रूप का उल्लेख किया है—

वहह (दे० ४६७)

हेमचंद ने अपने प्रा० व्या० में इस रूप के उदाहरण दिए हैं—

जइ पुच्यह घर बुडहाइ। ४।३६४

यह रूप वर्ण रत्नाकर में भी मिलता है (दे० इट्रोडक्शन ४८)

सम्भवत यह रूप संस्कृत के विधि के मध्यम पु० बहुवचन 'अत प्रत्ययान्त रूप से विकसित हुआ है।

(३) एह

साधारणत अवधो में मध्यम पुरुष बहुवचन भविष्य अनुज्ञाय के एह प्रत्य

यात्त रूप मिलते हैं। एह—प्रत्ययात्त रूप केवल चणायन में मिलता है। बाहू लगाय सरण चमकाएइ । ८ । च० इसमें मिलने जुलते चनिह, देखिइ, देखिहै रूप बगाली, मैथिली, भोजपुरी में भी मिलते हैं। दे० आ० डो० बी० एल० ५१ । लखीमपुरी का 'ए' प्रत्ययात्त रूप (देखे) दे० ३१२ ए० अ० इसी से सम्बद्ध होता है।

१४६ प्रारम्भिक अवधी के अधिकांश व्याकरणिक रूप यद्यपि परवर्ती अवधी के समान हैं किंतु उनमें कई परवर्ती अवधी काव्यों में या तो अपेक्षाकृत बहुत कम मिलते हैं या नहीं मिलते हैं। ऐसे रूपों का विवरण दे दिया गया है। इनमें से कई रूप परवर्ती अवधी की काव्यभाषा में अत्यंत विरल या अप्राप्त हैं किंतु अवधी भाषा जनता में आज भी प्रचलित हैं। (दे० सना—हकारात्त मूलरूप, सवनाम—ऊ, ई, इह, कउन, के, कूह, परार, त्रिया—बाटा)।

इन रूपों के अतिरिक्त कुछ रूप ऐसे मिले हैं जो परवर्ती अवधी रचनाओं में अत्यंत विरल हैं, जिनका प्रयोग आजकल अवधी की बोलियों में भी नहीं मिलता, किन्तु जा तत्कालीन भारतीय भाषाओं में मिलते हैं जस, भौ, गौ।

कुछ रूप ऐसे हैं जो परवर्ती अवधी काव्यों में अप्राप्त हैं (मधु० को छोड़कर) किन्तु दूसरी भाषाओं में आज प्रयुक्त हैं। ऐसे रूपों में वृद्धि—ईत्त प्रत्ययात्त रूप पंजाबी में प्रयुक्त होता है और होखइ । ८ रा० ज० और करह । ५१ स० क० जैसे रूप भोजपुरी में प्रयुक्त होते हैं। ए० व० पुह्य वाचक सवनाम रूप जे, स भी केवल पूर्वी अवधी में प्रयुक्त होने हैं और इन्हें मुख्यतः भोजपुरी तथा अन्य पूर्वी भाषाओं के ही रूप माना जाता है। प्राचीन अवधी में ऐसे रूपों का प्रयोग देख कर ज्ञात होता है कि ये रूप पहले अवधी में भी प्रयुक्त होते थे। किन्तु कालान्तर में इनका प्रचलन अवधी से उठ गया है। 'कीत जेये रूप परवर्ती रूप 'किय' और ससृत्त 'वृत्त के बीच की कड़ी जोड़ने का काम करते हैं। राउर बेल में उपलब्ध दित्ता दीत की पूर्व स्थिति का सूचक है।

प्रारम्भिक अवधी का भूतकालिक अस्ति वाचो रूप 'होन भी अयन वही नहीं मिलता है। यह न तो जायमो-गरवर्ती किमी काव्य में मिलता है न किसी बोली में। यह प्रारम्भिक अवधी की एक ध्वनिवाचक विशेषता प्रकट करता है जो आज भी अवधी में सुरात्त है जैसे दूसर > दासर।

प्रारम्भिक अवधी भाषा के अध्ययन से प्रकट होता है कि यह अपनी सम सामयिक कई भाषाओं के कई रूपों की सहभागिनी थी जो अब उसका नहीं है,

अर्थात् प्राचीन अवधी पञ्जाबी, ब्रजो, भोजपुरी, मैथिल, बगला से आज की अपेक्षा अधिक निकट थी ।

प्राचीन अवधी में परवर्ती अवधी की अपेक्षा लोक प्रचलित रूपों का प्रयोग अधिक हुआ है । सम्भवतः जायसी के पद्मावत ने अवधी को साहित्यिक, और परिनिष्ठित भाषा के रूप में पूणतः प्रतिष्ठित कर दिया जिसके कारण उसमें लोक प्रचलित रूपों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम हो गया । इस प्रकार जायसी पूर्व अवधी, जिसे हमने प्रारम्भिक अवधी कहा है, परवर्ती अवधी से पूर्व की स्थिति का विवरण और उसकी कुछ विशेषताएँ प्रस्तुत करती है ।

□ □

परिशिष्ट कुछ रचनाओं का पाठ

परिशिष्ट—कुछ रचनाओ का पाठ

(१)

साधन का मैनासत—(मनेर शरीफ की प्रति)

जिह कलि बेलसेउ एह असदल गजदल दलमलेउ
साधन भैत खेह पृथिमी चीहा न रहेउ
जाता देखेउ यह ससारु, का लोगा तुह धरहु पियारु
पानो अइस बुलबुला होइ, जो आवा सा रहा न कोइ
(पहले) प्रनि जो दई उपाने, जावत देखे जात न जाने
इक छत राज नरिदन कीहा, पृथिमी रहा न तिह कर चोन्हा
हम पुनि दिन इक चल चल अहहा, मुख आख समझत ता कहही
धुवाँ केर घोराहर पृथिमी कोइ न रहा निदान,
साधन रोइ बिफारि जिउ जिउ मनह तवान ।
कौडी कौड़ी जोर मूए किरमन बापुरे,
गए गडन्त कडोर मन पढ़तावा पापियइ ।

(२)

सातन कुवर नगर कइ दूता, कपट रूप नारद कइ पूता
तेहि रतना मालिन हँकराई, सत मो मैना देहु डोलाई
दूत बचन जेउ मैना पावउ, तोहि मालिन धूदर पहराऊँ
मालिन पान दूत कर लीहा, सतरूप सब आगै कीहा
बोहन मोहन लोन्हु संभारी, टीना टामन केरेसि भारा
सोत दरब मालिन पुनि गई मैना कइ बार
जिह बिधि राखइ सत सौँ कउन डोलावइ पार
जिह राखइ करतार ताकउ चार न बाँकियइ
जो लागइ सशर साधन छाँह कि छीनियइ

(३)

मालिन जाइ मदिर में बैठौ, मैनां जहाँ सिघासन बठौ
 चम्पक फूल चौमारा हारू कीन भेंट ओ दोह जोहारू
 हसि के पूछै मैनां रातौ, कहवां गवन कीह परयातौ
 कह दूतिनि सुन मालति मैनां अनचिनहौ कम बोलसि बनौ
 तौर पितइ धाइ मोहि कीहा, मै बारइ तोहि अस्पन दीहा
 मन न रहइ हिय गहवरइ बरइ आग तन मोहि
 सेंबरि सबह चित आप जिव भेंटन आइजें तोहि
 सोस नवै भुइँ लाग मुख अनित मुख कपटौ
 साधन धनुक चगाइ जिव पिर हुकइ अहेरिया

(४)

मेने घात साच कइ जानौ कुटनी कइ बोलहि पतियानी
 तबही नाउन बेग बुलाई कु कु मरदन कइ नहवाई
 घेवर पापड आनि जिवावा दखिन कइ चोर आन पहरावा
 रहसौ कुटनी अग न लगाइ अब मोपह कत मैनां जाइ
 कहिसि तौर देखउं अब भेसा छूटी लटै भंग भए केसा
 मैल चोर तौर दखउं जि तुम्ह दहूँ जोग
 सोस न सेंदुर काजर काह भएउ सभ भाग
 हिरदइ कीठा सात नयनह हँस मुख रोइ
 दूत लखन तिह पास साधन आप सँभारि

(५)

पिता मोर अनु काँह न राजा पिता राज मोरे बउँने काजा
 पियन दुग मोहि पड़ेउ जो आइ अग दुग परउ सउति कहै जाइ
 महीरी कइ धो चाँद गुआरो लै मइ सेंदुर मोर उतारी
 का कहै मालिन करउ सिगारा मोहि परिहर गौ कत पियारा
 वैरि (री) करि (रइ) मोर जस कीहा वारी धम मोहि दुख दीहा
 फिरइ माग दिन ओत्रै मीत सो बरी होइ
 करह (हि) जो बाँके रेवहरे मालिन जसा करइ न कीइ
 तासौं काजइ नेह जासौ दुइ जग पिर रहइ
 तासौं कौन सनेह दूइ काँचइ सूत जिउँ

(६)

दूती बचन कहत गहबरो कपट रूप रोवन अनुसरो
 तोर दुख देखि मरत हउं मैना हियई आग जरिहौ तोह नैना
 रितु असाढ वरखा पेसारू सभकाहू घर वार सँमार (रू)
 दोष गए हिय (?) आवन हारा अग्रियर कहूँ न देखउँ वारा
 जेहि घर कन ते करहि बैरामू सो न छाछ (ड) हि पियह कर पामू
 तोर दुख सुनत मरत हौं बोल छाड दे मोहि
 जम मालति कर भँवरा चूक न मेरवँउ तोहि
 जिह सत ऊपर चाव सपनेहु असत न रुचई
 जाइ तो जाउ साधन सव न छाड़ई

(७)

दूती दूत बचन जिवे कहा मैना घाइ ओकर मुख चहा
 रखे नैना सीले बना बोलइ सती महा सत मैना
 लाज कान तोहि कहत न आई अस धौखर तै बोलिसि घाइ
 चा (बा) रउं नार वाहि कर हिया एक छाड जिन दोसर किया
 एकाएक वरन जी देखेँ जग दोमरा कर नाउं न लेऊ
 मोर भँवर मुन मालिन रूप कि पूजइ कोइ
 अति रे स्याम गोवरीरा भँवर कि सरवरि होइ
 नारि अकेली सेज सावन हत वरसइ घना
 पानी होइ करेज साधन रसिया बाहरइ

(८)

सावन मैना आइ तुलाना घर घर सथी हिडोला ताना
 हरियर मुइ कुमुबी रतनारी नाह सरीखे खेलइ घमारी
 कन्त सुहागिन भूना बा (डा) रा, गायहि गीत उठइ भलचारा
 उह दुष छिह मुल रैज दुहेली भुरि भुरि भरहुँ सेज अकेली
 नावन गग भए मोर नैना तोर दुख मरउं मै मैना
 जोवन जात न जानव गए वार पछत्राव
 आनि भँवर तोह मैलउं लेन जगत कलु जाव
 यह जग जइस सनेहू सौ जानइ जिह दुइ जा (चा)
 कपट रूप सम बेहु साधन णोग न लागई

(६)

मुन मालिन सावन तहि भावइ जाकर पियह परदेमइ आवइ
भोग भुगुत सम घरेउ उतारी मोहि सेखे ससार उजारी
रितु मानउं जउ लोरिक आवइ नातर मैनाँ मुएँ गवाँवइ
तैं पापिन माहि पाप सुनावमि यहि वातनि तैं ओखर पावसि
मोरे पिता दाप औ भाई मुन पावहि तउ मार अडाई

भीलिन बचन मुनहु सुम जनम कि नित नित जात
काँचें दूष विनासति (?) जाइ परतर भात
भादों गहिर गभीर नयन गग बोसह भरे
क्योंकर पावउं तोर साधन खेवन हार बिन

(१०)

भादों मैनाँ मघा भूँरोर ऊँच खाल भर नीर हिलोरा
घन गरबइ बरसइ अतगानी काँप करेज सोहु होइ पानी
सरासत भुइ वादर लागे देख फाँट हियेँ पउरस थगे
दादुर पपिहा कुहकहि मोरा सूनि सज हिय फाटइ तोरा
सघी सहेलि लास मन भावा केउ आन केउ रँवइ परावा

जोवन काहे न भोगसि अलम बस मुख छाँह
केति भँवर बिलसत है कबँल फूल दर माँह
जोवन देउं बहाइ पीयह पीत न छोड़िए
सूख रह कुमलाइ फूटे जोवन प्रोत बिन

(११)

यह मुन मना उठी रिमाई अब ओखर तोह बोलउ घाई
तेहि कहें जे अमरौती खाई जाकइ पाप सुनावसि भाई
जोरे मुआ सोइ ते (य) हि न आवा तिह निन को आपाँहि डहकावा
बह कत जाइ न बाघइ धीती तिह जोवन सो कउन गिरोती
तिल एक सुख जनम कउ पातू तिह नित कउन चिठारइ आपू

जो जरइ उबेरे घाइ पाप तस आह
सोरस होई सार सौँ उतर देव तत्र काह

सुन धारदह रे बान विरहिन विरह चउगुना

प (ज) नु अरजुन वइ बान मनमय सर घूँइ नही

(१२)

सुन मना अब चढा कुवारा । जनमि (?) ताग सभ गूयहि हारू
 ऊपर साह कन्यागत होइ पियह भोग बिन रहइ न कोइ
 जोह दहउ दिह उवइ मोरारी, तरुनी खेलहि प्रेम घमारी
 तैं आपुहि काहे ओडेरसि, मोर बोल काहैं त पैलसि
 घन जोवन जैं होत न खावा, गए बार पाछैं पछतावा
 सौत किहिस तुह ऊपर तोरो कीत (किहित) न कानि
 तिह नित कातैं भूषसि काहैं होसि अयानि
 जिह राता मोह पीउ हौं चरो तिह सौत को
 डर नहिं चारों जोउ साधन हँसके राखिहैं

(१३)

सुन मालिन कुवार किन आवइ लोरिक बिन मोहि जगत न भावइ
 होइ कन्यागत परब देवारी मोहि लेखैं ससार उजारी -
 भोग भुगत के नियर न जाऊँ, सौत धाम कह डर न डेराऊँ
 मानिइ रुत जाकर पिठ पासा, मोहि वियोग निस देवस उदासा
 करवत सीस देइ जो लोरा तबहुँ अग न डोलइ मोरा
 इह जोवन लारिज बिनां जारि वरजैं भइ छार
 प्रीत जाइ इन बातनि सरग होइ मुख वार
 दीजइ हाथ उठाइ खाजइ पीजइ बेलसयइ
 सेउ गएउ मूउ चढाइ साधन किरपन सच मुए

(१४)

उत्तम कातिक परब देवारी सभ कोउ खेलइ परम घमारी
 जग जोवन भोमइ ससारु तो कह मनां बहुत विचारू
 धौमन छतरिन बैसिन नारी बिरहिन पतिसन सोरग सोनारी
 मानहि परब छत्रोसी जाती तैं पइ भइस मांग के ताती
 तोह देखत औरहि लइ गएउ छाडसि तोहि न आपन गएउ
 जोवन काहैं न भोगवसि का खावसि ओह लागि
 सहरस सबद हियर फाटउ जब जब देखियहु जागि
 जो राता जिह पास सो जन ताकइ मन बसइ
 तै घन जोवन पाहुना

(१५)

फा कर कातिव परब दवारो भूट बान का क२सि गँवारो
 परब बार दिन मानिय सोई जिह सरोर मालिन जिय होई
 जियरा मोर चाँद ले धरो बिन जिय घर माँगी में पढ(ड) १
 माँटी लागि जेउ आप बिटारउ दोउ जग घरम परतर हारउ
 हत और गरब लोर सग मानाँ पियह बिन जगत धध के जाना

रग भोग बइ पूयिमी तिल इरु करे मँयाइ
 जुग जुग भूटइ पातक तिह नित तिस को जाइ
 क्या बिटारउ कोइ जग राता वैरी घनाँ
 चरित खेलावइ सोइ भूटै भूठन पेलियइ

(१६)

माँटी माँटी कहा बरवानसि माँटी भे न मैनाँ जानसि
 माँटी माह डिस्ट विधि खेला (मेल) परम अम माँटिइ मह मेला (खेला)
 सोबरन फूल जो माँटी फूलइ माँटी देख १० माँटी भूलइ
 माँटी भोगवे माँटी छाइ माँटिह उपजइ रग सोआइ ।
 माँटी विरला बूमइ कोइ हसे खेतपुन माँटी होइ

काच सूत दूटे तस () कापड लोर
 अगहन छेल बैरासहु कहाँ सुनह जउ मोर
 जउ जिय जाइ तो जाउ साधन सत न छाडई
 पापहि देहि बहाइ सत कइ करनी आग रे

(१७)

जउ मालिन लोरहि अस भावा न माहि रोयन १ परिहस आवा
 जाउउ मै आपन जिय हारा कवन माव जउ सो निय मारा
 राज देइ तउ कवन बड़ाई भीख मगावइ का घट जाई
 यहि डर जउ सत छाह पराई लाकर पाप करहि का आई
 वचन तुम्हारइ धरम नसावउ पुनि का लारहि मुव दरसाऊँ
 जरत अगिन मै मालिन जियरा धरेउ बुभाइ
 अगहन छेल बैरासहु भोरि हुउ तुम्ह जाइ
 सबरह (है) सपने सज अनवन भाँति संवारिए
 जाउ फाट करेज सापन साइ वाहरे

(१८)

मैनाँ पोस मास देख आवा जाड पवन भिनसार जनाव
 निस के पवन तहो बहइ अपारा हाड न रहा डोल तन हारा
 कहव तुम्हार न फाबहि मना अइसन बोल तै सुन वैना
 रसि अकेलइ जाड न जाई मन की मदन सैतावइ आई
 राएँ अघर नीर भरे नैना, एतनई बोल मोर मान मना
 तान नेह नित बेरसभ कामिन एह ससार
 आच (ज) हि रसिया मेरवटउ राख बोल हुमार

(१९)

सुन रतना तै मानिन घाई तेह मेखहु जो भँवर भइ जाई
 पोस मास का करिहै मोरा भाकर कैजिय लइ गइ लोरा
 लोरिक् बिरह तबइ मार अगा सो रज सीसह भरउ मै मागा
 बिरह हैल जेहि सजिहि होइ ताकर वारन चापइ कोइ
 भोग भुगुठ मोहि कठु नहि भावइ जौलहि लोर न हम घर आवइ
 बिरह तुसार सेज दुख मैना गइअ अहइ सताप
 पाँच भूत की हतिया एहमा छल कस पाप
 समुद के पूरा जाइ पवन कि आघा घिर रहइ
 साधन केउ सुखताइ माघ अकेली थिउ रहइ

(२०)

माघ तुसार कहजें सुन पीरा () सरीरा
 पवन तुमार सवद के बाजा मुरनर मृनि जन देवता भाजा
 भाज पाँच इंद्री के सना भँवर लुलानि काँट भँह मैनाँ
 मीं विनु लोर माज नहि जावजें माघ चवगुन लागइ दानउ
 सीर सुपेती सेज बिछाई पिय दिन कैसहुँ जाड न जाई
 दूनहु जग आग देजें मै जहाँ न बसै मोर
 भूटहि जात तै मारवसि कहइ सुनउ का लोर
 नेह बाहे कर पाप पियहु कारन शिर दीजियइ
 साधन कौन सताप बरिन सा भरना मला

(२१)

धरमहिं मालिन करिहीं चाउ पाप के पय धरउं न पाउ
 का कर धरम पाप कह केरा लोर पय मकुतावहि वेरा (?)
 ओहि परान ओहि जीवन मोरा क्या भून (?) बन कुहँकहि लोरा
 के बहि जाउ के लगाउं तीरा बहत जाउ माँक भे नीरा
 जिह तन आग विरह भक्तभोरइ तहवा सीत कि जहवाँ जोरइ
 तिल इक पृथिमो जान जार के करउ बिसभार
 पाछें तो पछनाए भूठा यह ससार
 जोवन आएउ बार साधन सात न कर सकइ
 उतर गए ते पार सर दीहेउ बहुरे नही

(२२)

फागुन मदन न मानइ कहा उछाइ विरह पवन तन दहा
 विरह आग तन तिल न बुझाइ काहेक पाप सुनावसि धाइ
 कुमकुम केसर बेलसड बारा चहुँ दिस देखह सभ रतनारा
 नाचइ विरह पवन कह माना बनसपती भउ खाकर बाना
 रुउ लेलिय पियह बेलसियइ परम अग न समाइ
 तिनहूँ समझ न देख रसिया देवह मेराइ
 साधन चतेउ बसत विरहिन विरह चउगुना
 पर नारी लुबुपा कत सोयकु यह कैमे जिए

(२३)

प्रेम दूति कपट ते खेलसि नरकह कुठ आन सो मेलसि
 बिनु सुहाग नइस को (सो) ह अगा सँदुर भूउ नाँह बिनु मगा
 गीत नाद चचार चउतार तिहँहि हचइ जिन पास पियार
 मोति सो पियह बिन जग अधियारी में का सेपहूँ परब धमारी
 कत सुहागिन भूलइ बारा मोहि लोरिक बिन जग अधियारा
 कत नेह चित चो (जो) भेंटउ अउर न (मन?) मह भाउ
 तोहि (तेहि) गिन करउ बधावना जब लोरिक घर आउ
 साधन चना बसन्त विरहिन विरहा चउगुना
 परनारी लुबुपा कत जीवन ते मरना भना

(२४)

चैत राउ रत आइ तुलानी रितु बसत मधुकर मन मानी
 अगर कपूर फूल बहू बास कामिनि फूल सेज भरि ढास
 रावहि पुरुख सेज चडि नारी मानइ पति सग परम धमारी
 चचल मदन न मानइ कहा सत (कन्त) बिरह नाग होइ बहा
 आनि देहू तोहि प्रेम पियारा एक भास सुन बोल हमारा
 चैत बसत प्रेम रितु मैना मानहुँ भोग
 पिरथमी जात न देखिय कहा करत हैं सोग
 इव जरियइ पिउ लागि जैसे घुवाँ न देखियइ
 जरेँ कया कह आग साधन सत सो देखियइ

(२५)

जउ मानस पिउ कारन जरई दोहूँ जग मानहि निस तरई
 मरन जबइ को सब का डुहावइ (?) धिर रे जीवन को डहकावइ
 आगम कुड न जाइ घहाई विसर ठाँउ वह सबइ नसाई
 लाग आँख रैन चलि जाई भोर होत रवि किरन दिखाई
 तिल एक बूद का डहक सरोर काजी बूद बिनसइ जस रोप (छो) छ
 जोबन रतन जारि कह पवन उडावइ छार
 यहु सिह देहउ लोरकाहि अउर न देखइ पार
 सो जानहि जोहि पीर घाव न देखियइ
 कोमल बरन सरीर साधन सत सौँ लेखियइ

(२६)

मनाँ अब आवा बैसाखा मदन भुवगम तारुइ पाखाँ
 त्यो त्या लहरि रग बहरावै पिउ गारुइ बिन कवन जिवावे
 अइसेँ जनम गँवावे वारी ए कामिनि सुन बोल हमारी
 रस कह रहइ देवस दुइ चारो तै काहे अब होसि गँवारी
 तन छोँजै मन ऊँमै अल्पन बैस सोकमार
 बिरह अगन मैना जरइ जरअर होइहै छार
 क्या गई बिनु भोग बैस गँवावइ हे सखी
 घडी घडी निज सोग साधन जनम गँवाइयइ

(२७)

किरन भाग कइ जेठ सेराई जरि जरि घरती छार उड़ाई
 सबहूँ न तजउ लोर कर नाऊ बिरहु जरि के छार उड़ावउ
 सिष अहेर कोह जो घाई तो (ते) हि के चोत के सेर खाई
 अब यह बारह मास तुलाने दिन यह आहि लोर घर न
 मोरे आइ दिन मोर तुलानो अब हौं सती लोर घर आनो
 तोर कहा में मेटेउ सत राखु करतार
 राखेउ प्रीत लोरिक कइ दोहूँ कुल उजियार
 पाप पुन दोउ भोग सत कइ करनी आगरी
 पापी न पावइ भोग साधन सत रहइ कीजियइ

(२८)

जनम न चीत डोलावउ वाऊ भूए वारीह जाउ तो जाऊ
 मनइ मालिन धरि भकभोरी बहुत पत में राखेउ तोरी
 दूती दूठ वचन सब तोर मती सुन पावइ के कहूँ लोर
 आपु उतर तैसितन रासी (?) नित ठावउ (?) आन देव है गारो
 लोग पच कइ होति न कानी सरसा आजु उतरतेहुँ पानी
 रितु अनरितु रस अनरस मोहे कहु न माउ
 तोहे वरउ बघाउ जब लोरिक घर आउ
 जो जस करइ सो पावइ अनयन भाति सवारिप्रइ
 साधन पियह कइ बार साँचि होइ सर दोजियइ

(२९)

मैनी मालिन नियर बोलाई धरि भाटा कुटनी नेदुराई
 मुठ मुठाइ कइ सेंदुर दोहा कार नियर दुइ टीका दोहा
 गन्हा आनि कइ घाइ चडाई हाट बाट सब नगर किराई
 जो जस करइ सो पावइ तइस कुटनी लोग पुहारइ अइस
 साइ पाइ कइ काटे कान, कोणे बोइ लौनिहुउ धान
 सन मना को पिर रहा साधन राख करतार
 कुटनी मारि निकासी कोह गगा बे पार
 पाप पुन दुइ बीज जस बोइय तस काजइ
 साधन जइसा बीज तैस वन आगे सहइ

श्री राम जी शहाए
 श्री गंगा जी शहाए
 श्री भवानी जी शहाए
 श्री गनेश जी शहाए
 श्री पोथी राम नाम जनम

श्री पोथी राम नाम जनम

वरनो गनपति विघिन विनाशा ।
 राम रूप होऐ पुरवहु आशा ॥
 कठे श्रोशती ह्रीदे महेसा ।
 विद्या देहि श्री दाता, गनेसा ॥
 वरनो सोशती अम्नीत बानी ।
 राम रूप तुम्ह भलि गति जानी ॥
 वरनो चाद श्रुज की जोती ।
 राम रूप रस निमल मोती ॥
 वरनो देब विप्र गुर पाउ ।
 जिह माहि निरमल भ्यान सिखाऊँ ॥

दो०—गुरजदास कवि वरनो प्रान नाथ ज मोर ।
 राम कया किछु भाखो, कहत न लागे २ ॥१
 बालमीक रामायन भाखा ।
 तीनि भुवन जे भरि पुर राखा ॥
 श्री रामकया जि ह कीन्ह विचारा ।
 सातो खड कीह विस्तारा ॥
 राम के जनम पढे जो सुनई
 सहस हाम शो दिन दिन करई ॥
 हूदे माह श्रोवनी कीन्हा ।
 कोटि गाए विप्र कह दीहा ॥
 कोटि विप्र जो नेवति जेवावा ।
 कोटि भार कचन पहीरावा ॥
 जाहा ताहा ब्रामन नेवते आए ।
 दक्षिना देह के विदा कराए ॥

की लै आहिनि मोर श्रय प्रूता ॥

दो०—यगि पाणि लै आपहु, धरन पुत्र जो घाए ।
श्रीसा बहुत हम पाया, पानी आपे पिआए ॥

सब दसरप कहा निचारी ।

मुनहु रिसो अरा बचन हमारी ॥

न हम राखन न हम दूता ।

मे मारा तोर धवन प्रूता ॥

दारवन तुम कह नीर पठाया ।

रीसे अपम पापी लै आवा ॥

पिअहु नीर रहे प्राण तोहरा ।

कर मोकह जस परे विचारा ॥

अरे अपम हतेसि सतापी ।

बड़ अपराध कीह लै पापी ॥

मे रीसे हो अजोषा के राउ ।

पगु घोखे में कीन्ह जो घाउ ॥

मे अपराधी रीसे तोहारा ।

कर मोकह जसपरे विचारा ॥

कीन्ह तोरि जो मोरि मति आई ।

पुत्र शोग तुम प्राण गवाई ॥

ऐतना कही, प्राण दुहु त्यागा ।

परी साप ज्ञोप चले बैरागा ॥

जो परमेशर क्षतति देही ।

तोह के शोग भले जीव लेही ॥

एतवा कही नग्न चलि आए ।

पाट उपर मे बैठे जाए ॥

भूजत राजा भरम भुलाना ॥

शोध भए पाछे पछताना ॥

दो०—दरपन ले मुख देखा देखि बदन अकुतान ।

शपने शोअत राजा भखत भेउ विहान ॥६

चिहुकि उठे राजा पुनि केसे ।

गाठि के रतन छुटि परु जैसे ॥

शुभव महपा राज हकरावा ।

गुर वासिष्ठ के आश्रम जावा ॥
 गुर के चरन धैपुछु भुआरा ।
 स्वामी मोर करहु उपकारा ।
 लछामी मारि धन गई असारा ।
 एकपुत्र बिनु जग अधारा ॥

दो०—काके टीका सारो, काके सीपो सहन भडार ।

एक पुत्र बिनु सामी, भए वश बेवहार ॥

बालापन ते भुआवल होई ।

अन धन कह बोहे सभ कोई ॥

सुन राजा कुल वश भुआरा ।

एहजग क है एहै बेवहार ॥

कहे वासिष्ठ रीख शतभाऊ ।

पहिले निरधन धन गोहराऊ ॥

धन भए कलन जो होई ।

भए कलन पुत्र जो होई ॥

धुत भए ब्याह के भाती ।

भए ब्याह जो हाखहि नाती ॥

दो०—नाती भए परनाती, तबहु न पुजी आश ।

अत भ्रीनु ना जाने, काल लिये जम फाश ॥८

जो तोहि राजा पुत्र के आशा ।

चोखे जाहु सीयोखी का पासा ॥

चरन लागि के रिच मनावहु ।

होहि प्रथम तबहि सिधि पावहु ॥

रथ चढी राबु चले पुनि ताहा ।

शोगी रिखि के आश्रम जाहा ॥

शागी रिखि के गौतम के बेटा

सुरजनास कवि राजे मेटा ॥

कटि बाधे जेवरी एक मोटी ।

धुम के बोक्ला कीहु कछौटी ॥

देखि शोगी रिखि आगे ठाग ।

अग्नि सिद्धा जनु धे के पाग ॥

दो०—रथ से उतरे राजा गए चरण पर लोटि ।
 शोभी रिसि का मन मौ, दाया उपजा मोटि ॥६
 बहू राजा तै कयि कर दुखी ।
 'बेगि कही के भाली सुखी ॥'
 इदर सरग से टारि अडाओ ।
 ताहि राज लै तोहि बैशाओ ॥
 कहे राजा मै समकर सुली ।
 एक पुत्र बिनु में बड़ दुखी ॥
 एक पुत्र जो तोहि सो पावौ ।
 जनम जनम तोहार गुन गावौ ॥

दो०—तीनि भुअन फिरि आए, कतहु न पूजी आश ।
 गुर उपदेश गोसाई, आए तोहरे पास ॥१०
 सुनि कै रिखे समाधि तब कीन्हा ।
 अग्नि वारि के आहुति दीहा ॥
 मूल मन्त्र तब ही अहिवाणा ।
 ह्योदैआ चैति नराएन आना ॥
 चाउर चुरी पीड एक कीहा ।
 सो राजा के कर लेइ दीहा ॥
 माय नाइ कै राजा लीहा ।
 तबहि रिखस अग्या दीन्हा ॥

दो०—प्रान बालभी रानी, ताहि खिआबहु जाइ ।
 त्रिभुअन मुदर बैठवा, सो जग जनमिहि आइ ॥११
 सो लेइ राऊ बले पुनि कये ।
 दुखी परा परा घन पावे जैस ॥
 तब राजा अतह पुर गैएउ ।
 सम रनिवास घाय के अएउ ॥
 तहि मह राजा रहे निहारा ।
 काहि देउ मोहि सभे पिआरी ॥
 तहि मह तीनि पाट की रानी ।
 ककइ कोसिल्या सुमित्रा जानी ॥

तेहि मा राजा सोभै कसे ।

तारा माह चदरमा जेसे ॥

दो०—भीरि ना छाड़े रानी, तब दुइ स्रढा कोन्ह ।

कौसीला ओ ककई, वाटि दुनो वै दोह ॥१२।

दुनो जनी जब लागो खाए ।

चली चली सुमित्रा आए ॥

कहे सुमित्रा सबती पिआरी ।

हमहु आज अतीष तोहारी ॥

दुनो जनी रहो कर सँचो ।

कैसे खाउ अतीष ही बाँची ॥

अतीष बाची ओ नर खाई ।

जनम जनम सो नरकहि जाई ॥

दो०—आदर क सुमित्रहि पास बैठाइह भाइ ।

कछु कछु उन्ह क दीन्हा पाड़े लागी खाइ ॥१३

तीनो रानी गरम सुमाउ ।

आनद करै तब दसरय राउ ॥

मन मो कचन कलसा धरावा ।

॥

मनमो दासी मनमो दासा ।

मनमो लोग बसे चहुँ पासा ॥

मुफल मनोहर बाजन बाजा ।

निति उठि दान देत है राजा ॥

पाच मगल गावहि नर नारी ।

ग्रामन वेद पढ़े ऋक्कारी ॥

दो०—मुफन मनाहर पूजा, उद्यतत मै सब काम ।

कौसल्या के प्रथम ही, जन्म लीह थी राम ॥ १४

चढ़त मास नवमो गुरवारा ।

तेहि दिन राम लीह अवतारा ॥

जब जनमे सबसार कै सारा ।

कैकइहि जनमे भरथ कुमारा ।

सुमित्रा जनमे दुई बलवारा ।

सद्यन चतुरगुन रन के धारा ॥

गुर नर मुनि सभ नाचन लागे ।
 छीनि भुञ्जने वै दासिद्र भागे ॥
 राम को जनम सुने मन लाई ।
 सो नर सदा वैकुण्ठहि जाई ॥

दो०—सहन भठार उपारा, जो लेवै सो पार ।
 श्री रामचन्द्र को जनमे, हरख करे सबगार । १५
 बाहर भीतर राउ न जाइ ।
 दिन दिन चांगुन होत बपाई ॥
 चारो पुत्र खेलावहि मम ।
 दुइने अस्ति चारि भौ नैमे ॥

दो०—चारो पृत्र के आदर सम सम होय दुलार ।
 राम द्याडि के राजा, बैगर होय ना पार ॥१६
 एक खेलावना जो लेइ आवे ।
 कोटि कचन सो तबही पाव ॥
 पाशनि मुण्डनि जब जब होई ।
 तब तब धन पूछै नहि कोई ॥
 तबहि सो धन मेलि लंडावे ।
 राम के दरस महा धन पावे ॥
 धन देई जो होखे दुखी ।
 राम के जनमे सबै भा सुखी ॥

दो०—एहि रग रहे राजा, बारह बरस तुलान ।
 बैटवन्हि दीन्ह जनैउ, अस बोले मतिमा ॥ १७
 राम मनोहर राम पिआरा ।
 राम छोड़ि नहि आन अपारा ॥
 रामे माता रामे पीता ।
 रामे दाता रामे भुगुता ॥
 रामे बोलिये रामे कहिए ।
 अह निशि राम नाम बित धरिए ॥
 राम नाम सबसार के सारा ।
 राम नाम तिहूँ लोक पिआरा ॥

दो०—राम रग रस लावह, सुरजदास कवि भान ।

सांगी रिति मोहि की-ह पसाउ ।

ती-ह प्रसाद पुत्र फन पाउ ॥

दो०—ती-ह रिति ह वे दाआ, गुफल भए सब काम ।

अग्वा कवन गोसाइ, आएहु कवने काम ॥२०

आयहुँ राजा भेंटन तोही ।

तोहरे हरख हरख भा मोही ॥

दुष्ट तालुका जग्य नशावा ।

एकी काम न होखै पावा ॥

वन मीं ग्रामन होते सुखी ।

ओहि के वरन सभे वा दुखी ॥

दो०—ओहि वे देखते राजा, होए ना एकी काम ।

ताहि बधे वे वारने मागत हों श्री राम ॥२१

निठुरि बचन जानि बोल गोसाइ ।

खेडा करत करत जीव चलि आई ॥

मागहु गज रथ सहन भडारा ।

सरवस देत न लाओ वारा ॥

ओ मागहु परिजन परिवारा ।

रो मह मागहु एक वारा ॥

दो०—काडि लेउ जीव मोरे, के दहु लेवै पार ।

जीव देवै वरुपारो, राम के देवै पार ॥२२

सुनि के बचन रिसै रिसियाना ।

राम काडि नहि मांगे आना ॥

पहिले लेइ तालुका भराओ ।

पाछे धनु गुन वेद पढाओ ॥

कवन बोल तुम बोलन लागे ।

हठ ना रहिहै हमरे आगे ॥

दो०—चोखे देहु रामहि मोही, का लावहु पडीवार ।

नाहि तो नग्र अजोय्या जारि करी थै छार ॥२३

सुनि के राउ परा भुइ बैसे ।

मत्र के मारल विसिघर जसे ॥

लखनसेन का हरि-चरित्र विराट पर्व

बादसाहि जे वीराहिम साही, राज करहि महि मडन माहो
आपुन महाबली पुहमी घावै, जउना पुर मह छत्र चलावै
सवत चौदह सह एकासो, लपनसेनी कवि, कया प्रगसी
गुनी जन सब अपीर मैउ, वैजलदास राइ पह गएउ
वैजल दास मन हरपीत ताही भरावे जीव
लपनसेनि कवि भाषा, कया बैरठ जे कवि

+

+

+

कैसे भेखउ अछर के पाती सरबार राजा कइ जाती
हसन पति हाइ छत्र छन बाका, महवेलाम भए नोहलका
अछर सुनत सुन्य सुधी काडा अम्रती बोन बचन सो वाटा
दोहा

नगहि चहि नगसरी पडिठ रहे सीर धुनो
छले वैल सब होवै लपन सेनी कवि गुनो
डोलैस्वर अनुकाराम तेज रासि कुल राजा धम
तासु तने जे लपन कुमार दुरजन द्रवन सीध करीवार
दोहा

कठे बसे मुरसती हीरदे बसहि गनेस
लपनसेनी तहने बसे घ'य घ'य सो देस
लपनसेनी कवि जन मै आइ, बड़ बड़ कविता गए लजाइ
गए धम औ सतजुग राजा, देवीपुर गए बली के काजा
गए व्रोती धनसेनि नरेसा, भोजपुर गए देव गनेसा
जैदेव बले सग वो वाटा, ओ गए घघ मुरपति भाटा

नगर नरिद्र जो गए चनारी, बीद्यापति कह गइ लचारी
अत्रित कुड नग्र जे यहाइ, जोगनी कुड नग्र अब गहइ
तेन्ह पापीन्ह कह बोज उठाऊ, जे नही लीन जम भरि नाऊ

दोहा

तहि पापी तह राषीए जइ हरिनाम न लीन
बद्धर लीनीसा जीव करि, ध्रम होइ दीन दीन्ह
जन परिव्रज छड़ि सो देसा, अहव उपभवन बसे नरेसा
मोडु मह्य जे लागे काना, काज छाडि जे अकाज जाना
कुजल बाँधे भुपन भरई आ र सो पर सेइ चराई
चदन काटि करील ज सावा आव काटि कह बबुर बोबावा
कौकिल हस मञ्जारही मारी बहुत जतन कागहि प्रतिपाली
सीरीव पय उपरि पाने तमचुर जग ससार
लपनसेनी ताहने वसे काढी जो पाही सघारि
चौसा नगर जगत परसीघा रामराज तह गौरव सीघा
जे ज कहि जवा बीग्रह चढाइ कापे सेज (सेस ?) धरनी लरपरइ
प्रोथीमी बहनान नर नाहा दुसर रघुपति उपज ताहा
चारी बानो चौरासी मोरा मारेठ सबे गग कै तोरा
जेकर पुत्र जे पुरनमाला अरि के हीरदे महाबल साला

दोहा

साठी गाइ बाधी चर पुरनमल के ठाट
कौतुक कौन मुरस कवी वावीध क्या बैराट

भीम कवि का डगवे पुराण

सवत पद्रह सै पचास जब भएऊ द्रुपु नम समल चलि गएऊ
सावन सुकुल सतमी अइ । डगवे कव भी मुनई
कदन नग्र बैसनी ठाऊ कैन देस कैन से गाऊ
जहए भए कबीसर विचार तह वसत है कौन भूअर
पुहुमी घम प्रन एक दसा धसै लो त्रीमल रेह

+

+

+

नस कवी दोसन को देही, जो कवी अपन नाउ न लेइ
कवीत तहव भे उपपतो कवन नग्रे बैन सो जती
नग्र अमर सब वैर कहा, वसुऊ इद्रदेव तीस लहा
जती कै कएय करन कुबेर महीमत ही कलीनेम अचर
तसुत नौ रतन वर बीरू अतो प्रचड नीक सुसरोरू
मत मतग बीरू मह दीनह सब तेनह सब गवरह लोह
तेही कुल भीम बरिपरा, वैरी बुधी बडु धैसरा
कटे चहे क्यु कथ सुभउ मरय कथ डगवे गउ
चह उरव फीरी आवे सोहइ सोइ प्रीती कठमन लइ

पुरुषोत्तम दास का जैमिनी पुराण

आदि—मी गणेशाय नमः अथ जैमिनि लिप्येत । प्रथमहि प्रणवा पुस्त्य पुराना । आदि अत्र प्रभु है अवसाना । निगुण सगुण जानि नहि जाई । रूप न रेख रहत घट सोई । ब्रह्मात्मिक जिहि पाजत रहही । आदि सारदा तोहि मनावो । देहु सुमति जो हरि गुन गावो । तुम भल जानत रहहु भगवतहि । मारि देत रापेटु सुर सतहि । वाहन गरुर गदा कर लीहा । सप चक्र मनि भूपन कीहा । रुमन चरन वै नृमल चरना । रसना रामे नाम गहु सरना । वाक वात्पिनी नृमल वाना । देहु सुमति हरिनाम प्रवाना । कवल नयन निजु चरन निवासी, तुअ प्रसाद पावो कविनासी । दोहा० ब्रह्म रुद्र सुरगन पनि जग जननी जस लेहु । पुरसोत्तम हरि सबक बुधि प्रकाश विशु देहु ।

अत—मदन सिध सब विप्र बुलाए । जोतिप शास्त्र बिसारद आए । कहहु लग्न सुभ कहिआ अही । विषया चद्रहास जो व्याहो । उत्तम सूज ब्रह्मपति कहिआ । बर कया एकाए (?) कहिआ । बडे भाग्य वैष्णव गृह आवा, आजु नीक सुभ लगन सोचावा । गौधूरी कर उत्तम पर्वा लग्न दोष विवर्जित सवा । मुनने मदन परम हुलासा । सपिअह सो कह बचन प्रकासा । बाजन बाजे मगलचारा, होइ लाग विवाह पसारा विषया चद्रहास नहुवाए । त्रिपावर बस्तर पहिराए । मडप पाटेवर ते क्षावा । बरकया वेदी बैठावा । हरादे चनाइ कया नहुवाई जरष देई वडी बैठाई । चद्रहास कह वख बनावा, अस्त होत हरि कलस पुजावा । जिव मह सुमिरा हरि कर चरना । आसन आइ बैठ मन हरना । साधरन विप्रह कह

विषय—मगलाचरण, कवि तथा उसके अभिभावक का परिचय जत्रु दीप भरत पडा । कनउज के पाटी परचडा । सप्तपुरी महा उत्तम याना । कौशल देसवै (देस सबै) कोठ जाना । रामपुरी सरजू के तीरा । नाम अजोध्या निमल नीरा । सर्गाद्वार पाप कर नासन । जहुवा रामधर कर आसन । तिहि ते दक्षिन जोजन चारी । आदि गोमती किल्मिप हारी । नारायणपुरी सुधर मुदेसा । तहा बसे

विकार नरेसा । कुबर ब्रह्म दबीच सुजाना । बोह की सरवर राव न आना ।
 तहवा नगर बसत इक दादर । जहवा जती सती कर आदर । राजा रूपमल्ला
 वहाँ रहई वैश्यवश नित घमहि चहई । लागि गुहारि केरि सहारा । दादरपुर के
 महा जुझारा । सब सकुल निमल राजा रूप मल्ल नाम । राम भक्त पुरुषोत्तम
 बसहि सुदादर ग्राम । वश विभूति पिता मह प्रीती । क्षेमानद घर्म की रीति ।
 तिनके सुठ पुरुषोत्तम दासा, प्रथम गए जग्रनाथ निवासा । कमलनयन परदच्छिन
 दी हा । अक्क पुरो जाइ गुह कीहा । गुरु रघुनाथ के चरण मनाये । जिन
 व्याकरण निशुन पढाए ।

ग्रन्थ निर्माण काल—सर्वत् पद्रह से अटठावन निमल चैत माल (स) का
 आवन, गुवल पक्ष प्रतिपक्षा (दा) सुहावन, थी गोविंद कथा गुन गावन उत्तम
 दिवस चन्द्रकर द्वारा मेढक सूत्र बसत प्रगासा । हरि प्रसाद पुरुषोत्तम दासा
 अश्वमेध कर कीह प्रगासा ।



सहायक ग्रन्थ

प्रकाशित ग्रन्थ—

- १—अध कथानक स० श्री नाथूराम प्रेमी बम्बई, १९५७ ई० ।
- २—अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय डा० दीन दयालु गुप्त प्रथम संस्करण लखनऊ ।
- ३—इश्वरदास की सत्यवती कथा तथा अय कृतियाँ स० डॉ० शिव गोपाल मिश्र तथा रावत ओमप्रकाश सिंह ग्वालियर, १९५८ ई० ।
- ४—उक्ति व्यक्ति प्रकरण स० जिनमुनि विजय । बम्बई, स० २०१० ।
- ५—एवोल्यूशन आठ अवघी डॉ० बाबूराम सक्सेना इलाहाबाद, १९२७ ई० ।
- ६—ओरिजिन एंड डवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज डॉ० मुनीति कुमार चटर्जी कलकत्ता, १९२६ ई० (अप्रेजी में) ।
- ७—कुतुबन कृत भृगावती स० डॉ० शिवगोपाल मिश्र प्रयाग, शक सं० १८८५ ।
- ८—कुबलयमाला स ए० एन उपाध्याय, बम्बई, १९५९ ई० ।
- ९—खड़ी बोली हिंदी साहित्य का इतिहास बाबू ब्रजरत्नदास काशी, स० १९९८ ई० ।
- १०—ग्रामर आफ हिंदी लैंग्वेज कैलाश, लदन १९५५ ई० ।
- ११—ग्रामीण हिन्दी डा० धीरेन्द्र वर्मा इलाहाबाद, १९५६ ई० ।
- १२—चदायन स० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद आगरा, १९६२ ई० ।
- १३—चदायन स० डा० परमेश्वरीलाल गुप्त १९६८ ई० ।
- १४—जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य डॉ० सरला शुक्ल : लखनऊ, स० २०१३ ।
- १५—जायसी प्रभावनी स० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद, १९५१ ई०

- १६—डलहो सल्लनत आर० सी० मजूमदार बम्बई, १९६० ई०
- १७—निगुन स्कूल ऑफ पोएट्री डॉ० पीताम्बरदत्त बड्यवाल (हिंदी अनुवाद) लखनऊ, सं० २००७ ।
- १८—नुह सिपेहर 'खिजली कालीन भारत' नामक ग्रंथ के अन्तर्गत, अली गढ, प्रथम संस्करण ।
- १९—द भाडन वर्नाक्युलर लिटरेचर आक हिन्दुस्तान प्रियसन (हिन्दी अनुवाद) वाराणसी, १९५७ ई० ।
- २०—पुरानी राजस्थानी तैस्रोतेरी (हिंदी अनुवाद), काशी, सं० २०१२ ।
- २१—प्राकृत ग्रामर आक हेमचन्द्र, पूना, १९३६ ई० ।
- २२—प्राकृत पैंगलम् सं० भालाशकर यास वाराणसी, १९५६ ई० ।
- २३—प्राकृत भाषाओं का व्याकरण (हिंदी अनुवाद), पटना १९५८ ई० ।
- २४—बाङ्गला साहित्येर इतिहास डॉ० सुकुमार सेन कलकत्ता, १९५० ई० ।
- २५—बुद्धकालीन भारतीय भूगोल डा० भरतसिंह उपाध्याय, प्रयाग, सं० २०१८ ।
- २६—ब्रजभाषा डॉ० धीरेन्द्र वर्मा इलाहाबाद, १९५४ ई० ।
- २७—भारत का भाषा सर्वेक्षण सं० प्रियसन (हिन्दी अनुवाद), लखनऊ १९५९ ई० ।
- २८—भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा प० परशुराम चतुर्वेदी दिल्ली, १९५६ ई० ।
- २९—भोजपुरी भाषा और साहित्य डा० उष्यनारायण तिवारी पटना, १९५४ ई० ।
- ३०—मधुमालती सं० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद, १९६१ ई० ।
- ३१—मिथबधु विनाद मिथ बधु लखनऊ सं० १९७० ।
- ३२—मुत्सबउत्तजारोख (अप्रेजी अनुवाद) सन्दन, १८९८ ई० ।
- ३३—रामचरितमानस गीता प्रेस, गोरखपुर संस्करण ।
- ३४—राउरवेल सं० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद १९६३ ई० ,
- ३५—रारुहा सं० डॉ० माताप्रसाद गुप्त आगरा, १९६२ ई० ।
- ३६—वारतनाम्न सं० डॉ० सुनीलकुमार चटर्जी तथा बकुआ मिथ कलकत्ता, १९४० ई० ।
- ३७—शिवसिंह सरोज शिवसिंह सेंगर लखनऊ, चतुर्थ संस्करण ।

- ३८—सदेश रासक स० डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी विश्वनाथ त्रिपाठी
बम्बई, १९६० ।
- ३९—साधन कृत मैनासत स० हरिहर निवास द्विवेदी ग्वालियर,
१९५९ ई० ।
- ४०—सोलहवीं शती के हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि डा० रत्नकुमारी
लखनऊ, १९५६ ई० ।
- ४१—हरिचरित स० आचाय नलिन विलोचन शर्मा श्री रामनारयण
शास्त्री पटना, १९६३ ई० ।
- ४२—हिन्दी क सूफी प्रेमार्थान प० परगुराम चतुर्वेदी बम्बई
१९६४ ई० ।
- ४३—हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास हरिऔध लहेरिया
सराय, दरभंगा, स० १९६७ ।
- ४४—हिन्दी साहित्य डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी लिल्ली, प्रथम
संस्करण ।
- ४५—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा
इलाहाबाद, १९५४ ई० ।
- ४६—हिन्दी साहित्य का इतिहास प० रामचन्द्र गुवल काशी, सातवा
संस्करण ।
- ४७—हिन्दुई साहित्य का इतिहास तामी (हिन्दी अनुवाद) इलाहाबाद
१९५३ ई० ।

अप्रवाशित ग्रन्थ—

- ४६—मिरगावत डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा मपादित और गीघ
प्रकाशनीय ।
- ४७—मैनासत प्रो० हुसन अस्खरी पटना के पास मुरमित ।
- ४८—रामजम श्री गोविन्दजी ६८ रामबाग, इलाहाबाद क पास
मुरमित ।

पत्रिकाएँ—

- १—कल्पना हैदराबाद ।
- २—द जनल ऑफ टि बिहार रिसच सोसाइटी पटना ।
- ३—नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी ।

